

AECCHINT

हिंदी भाषा एवं संरचना



आइसेक्ट मुख्यालय: SGSU कैंपस, एन.एच.-12, मिसरोद के पास,
होशंगाबाद रोड, भोपाल – 462047, दूरभाष: +91-755-2432801/830/940/950,
फैक्स: +91-755-2432811, ई-मेल: aisect@aisect.org

AECCHINT – हिंदी भाषा एवं संरचना

संस्करण 2026

© कंटेंट डेवलपमेंट ग्रुप, आइसेक्ट ग्रुप ऑफ़ यूनिवर्सिटीज़ (AGU) द्वारा संकलित, समीक्षित एवं संपादित

सर्वाधिकार सुरक्षित: आइसेक्ट पब्लिकेशन्स

चेतावनी:

सभी अधिकार सुरक्षित हैं। प्रकाशक की पूर्व लिखित अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भी भाग का किसी भी रूप में अथवा वर्तमान में ज्ञात या भविष्य में विकसित किसी भी माध्यम (इलेक्ट्रॉनिक, डिजिटल या यांत्रिक), जिसमें फोटोकॉपी, स्कैनिंग, रिकॉर्डिंग अथवा किसी भी सूचना भंडारण या पुनर्प्राप्ति प्रणाली का उपयोग शामिल है, पुनः प्रस्तुत, प्रसारित, उपयोग या संग्रहीत नहीं किया जा सकता।

नोट:

इस मॉड्यूल के लेखन एवं मुद्रण के समय इसे सभी प्रकार की त्रुटियों से मुक्त रखने का पूरा प्रयास किया गया है। तथापि, ऐसा कोई आश्वासन नहीं दिया जा सकता कि इसमें कोई त्रुटि शेष नहीं रह गई है। यदि किसी प्रकार की त्रुटि रह जाती है तथा उसके परिणामस्वरूप कोई हानि या क्षति होती है, तो उसके लिए प्रकाशक, लेखक अथवा किसी भी संबंधित व्यक्ति को उत्तरदायी नहीं ठहराया जाएगा।

प्रकाशक:

आइसेक्ट पब्लिकेशन्स

E-7/22, S.B.I., अरेरा कॉलोनी, भोपाल – 462016 (म.प्र.), भारत

टेलीफोन : 0755-4851056

ई-मेल : aisectpublications@aisect.org

वेबसाइट : www.aisectpublications.org

मुद्रक:

आइसेक्ट पब्लिकेशन्स

प्लॉट नं. 10, सेक्टर-C, औद्योगिक क्षेत्र,

बगरोदा, भोपाल

पाठ्यक्रम की संरचना

कोर्स का शीर्षक	:	हिंदी भाषा और संरचना
कोर्स का प्रकार	:	योग्यता संवर्धन
कोर्स कोड	:	AECCHINT
कोर्स क्रेडिट	:	2
समसत्र	:	1

पाठ्यक्रम उद्देश्य -

1. विद्यार्थियों में राष्ट्र-प्रेम एवं सांस्कृतिक चेतना को **संवेदनशील रूप से आत्मसात करने** और जीवन में **प्रयोग करने** की क्षमता का विकास करना।
2. हिन्दी साहित्य की विविध रचनाओं को **विश्लेषित** कर उनके निहित सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों को **मूल्यांकित** करना।
3. पत्र-लेखन, सार लेखन, भाव-पल्लवन एवं साक्षात्कार जैसी विधाओं में **रचनात्मक लेखन कौशल का निर्माण** करना।
4. डायरी, संस्मरण लेखन एवं पारिभाषिक शब्दावली का **व्यावहारिक प्रयोग** करना तथा तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों के स्वरूप को **वर्गीकृत** करना।

पाठ्यक्रम से अपेक्षित शिक्षण परिणाम -

1. विद्यार्थी राष्ट्रभक्ति एवं सांस्कृतिक मूल्यों को **व्यक्तिगत जीवन में आत्मसात कर सकेंगे** तथा सामाजिक संदर्भों में **प्रस्तुत कर सकेंगे**।
2. हिन्दी शब्दावली को **वर्गीकृत** कर विभिन्न लेखन कार्यों में **प्रभावी रूप से उपयोग** कर सकेंगे।
3. पत्र-लेखन, भाव-पल्लवन, सार लेखन, साक्षात्कार लेखन जैसे कार्यों को **स्वतंत्र रूप से संरचित** कर सकेंगे।
4. डायरी एवं संस्मरण लेखन में **स्वानुभूतियों को सृजनात्मक ढंग से प्रस्तुत** कर सकेंगे।
5. हिन्दी साहित्य के सामाजिक-सांस्कृतिक पक्षों को **विश्लेषित** कर उनसे जीवनोपयोगी प्रेरणा **निर्णयात्मक रूप से ग्रहण** कर सकेंगे।

पाठ्यक्रम सामग्री

खंड / इकाई क्र.	खंड / इकाई	प्र. क्र.
खंड I	भाषा, काव्य और साहित्य	00-38
इकाई 1	भाषा - अभिव्यक्ति, कौशल और चेतना	01
इकाई 2	मानव चेतना और स्वतंत्रता का स्वर	21
खंड II	हिंदी साहित्य, अनुवाद और शब्द-संपदा	39-96
इकाई 3	मानव मूल्य और सामाजिक चेतना	41
इकाई 4	अनुवाद और शब्दविज्ञान - भाषा की व्यावहारिक दृष्टि	67
खंड III	भाषा का प्रवाह	97-140
इकाई 5	व्यक्तित्व, व्यंग्य और समाज - अनुभवों की साहित्यिक अभिव्यक्ति	99
इकाई 6	भाषा की संरचना और अभिव्यक्ति की शक्ति	119
खंड IV	अभिव्यक्ति के विविध आयाम	141-192
इकाई 7	वक्तव्य, दृष्टिकोण और संवाद - राष्ट्र निर्माण की धारा	143
इकाई 8	संप्रेषण और साहित्य - विचारों की यात्रा	165
खंड V	अनुभव, अभिव्यक्ति और संवाद	193-240
इकाई 9	अनुभव, आत्मबोध और भाषा - साहित्यिक विमर्श की त्रयी	195
इकाई 10	संवाद, लेखन और भावनाओं का संप्रेषण - एक समग्र दृष्टिकोण	219

खंड - 1	भाषा, काव्य और साहित्य	00-38
इकाई - 1	भाषा - अभिव्यक्ति, कौशल और चेतना	01
इकाई - 2	मानव चेतना और स्वतंत्रता का स्वर	21



यह खंड भाषा, काव्य और साहित्य के व्यापक आयामों को समझने का अवसर प्रदान करता है। भाषा

केवल संप्रेषण का साधन नहीं, बल्कि मानव चेतना, संस्कृति और सामाजिक विकास का सशक्त माध्यम है। इस खंड में भाषा के विविध स्वरूपों, उसकी उत्पत्ति, विकास और सामाजिक भूमिका का अध्ययन किया जाएगा। विद्यार्थी भाषा कौशलों जैसे सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना के महत्व और उनके विकास की प्रक्रिया को समझेंगे। साथ ही, साहित्य के माध्यम से सामाजिक चेतना, नैतिक मूल्यों और मानवीय संवेदनाओं की गहराई को भी अनुभव कर सकेंगे। काव्य अनुभूति और सौंदर्यबोध को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम है, जो पाठकों को कल्पना, अनुभूति और विचारों की दुनिया से जोड़ता है। इस खंड में 'भारत वंदना' जैसी प्रेरणादायक कविता के माध्यम से राष्ट्रीयता, सांस्कृतिक धरोहर और साहित्यिक सौंदर्य का विश्लेषण किया जाएगा। विद्यार्थी यह समझ पाएंगे कि भाषा और साहित्य किस प्रकार व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इकाई - 1

भाषा - अभिव्यक्ति, कौशल और चेतना

नोट

इकाई की रूपरेखा

- 1.1 परिचय
- 1.2 उद्देश्य
- 1.3 भाषा की महत्ता और उसके विविध रूप
 - 1.3.1 भाषा की महत्ता
 - 1.3.2 भाषा की महत्ता के माध्यम
- 1.4 भाषा-कौशल
- 1.5 भारत वंदना - काव्य - सूर्यकांत त्रिपाठी निराला
- 1.6 सारांश
- 1.7 शब्दावली
- 1.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर
- 1.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER
- 1.10 संदर्भ
- 1.11 अभ्यास

1.1 परिचय

भाषा मनुष्य की सबसे विशिष्ट और प्रभावशाली क्षमता है, जो न केवल विचारों को व्यक्त करने का माध्यम है, बल्कि यह उसकी चेतना, संस्कृति और बौद्धिक विकास का दर्पण भी है। "भाषा - अभिव्यक्ति, कौशल और चेतना" एक ऐसा विषय है, जो भाषा की बहुआयामी भूमिका को रेखांकित करता है। यह विषय भाषा को मात्र संप्रेषण का साधन न मानकर उसे एक जीवंत चेतना के रूप में प्रस्तुत करता है, जो समाज, मनुष्य और समय के साथ निरंतर विकसित होती है। भाषा के माध्यम से हम न केवल अपनी भावनाओं, विचारों और अनुभवों को साझा करते हैं, बल्कि यह हमारी पहचान और सामाजिक सहभागिता का भी आधार बनती है। इसके साथ ही भाषा कौशल का विकास—जैसे कि सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना—व्यक्तित्व निर्माण और संज्ञानात्मक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

इस प्रकार, "भाषा - अभिव्यक्ति, कौशल और चेतना" का अध्ययन हमें भाषा की शक्ति, उसकी सामाजिक प्रासंगिकता और बौद्धिक क्षमताओं को समझने का अवसर प्रदान करता है।

1.2 उद्देश्य

- भाषा की महत्ता को समझाना
- सुनने, बोलने, पढ़ने और लिखने जैसे चारों भाषा कौशलों को सशक्त बनाना।
- भाषा के माध्यम से आलोचनात्मक और सृजनात्मक सोच को विकसित करना।
- भाषा के द्वारा विभिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्यों से जुड़ने और उन्हें आत्मसात करने की क्षमता विकसित करना।
- स्व अभिव्यक्ति को बल देना

1.3 भाषा की महत्ता और उसके विविध रूप

1.3.1 भाषा -

"ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है।"

-स्वीट

भाषा सार्थक ध्वनि प्रतीकों की यह व्यवस्था है जिसके द्वारा इसके प्रयोक्ता या श्रोता आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।

प्रायः विश्व में पाए जाने वाले सभी जड़ और चेतन प्राणियों के भावाभिव्यक्ति के सभी साधनों को सामान्य रूप से भाषा कह दिया जाता है, किन्तु भाषा विज्ञान में जिस भाषा को महण किया जाता है यह सांकेतिक आदि से भिन्न मानवीय व्यक्त वाणी है।

वृहदारण्यक उपनिषद में कहा गया है- 'वाग्वै सम्राट् परमं ब्रह्म' वाणी ही संसार का सम्राट है, परं ब्रह्म है।

भाषा शब्द संस्कृत की 'भाष्' धातु से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है- 'भाष व्यक्तायां वाधि'

'भाष्यते व्यक्तवाग्रूपेण अभिव्यज्यते इति भाषा' अर्थात् व्यक्त वाणी के रूप में जिसकी अभिव्यक्ति को जाती है उसे भाषा कहते हैं।

इसे 'भाषणाद्विभाषा' भी कहा गया है अर्थात् भाषण करने के कारण भी यह भाषा कहलाती है।

लक्ष्मीकान्त वर्मा कहते हैं-"भाषा मानव जीवन की सार्थकता को व्यक्त करती है। यह मानव जीवन के विकास की परिचायक है। भाषा न तो एक दिन में बनी है और न बनाई जा सकती है। वह इतिहास की प्रक्रिया से गुजर चुकने के बाद

मनुष्य को उपलब्ध हुई है।" सांकेतिक भाषा को छोड़कर भाषा के दो स्वरूप होते हैं -

मौखिक व लिखित ।

मौखिक भाषा में विचारों की अभिव्यक्ति मौखिक होती है, जबकि लिखित भाषा में ध्वनि संकेतों को प्रतीक रूप में लिखकर व्यक्त किया जाता है।

भाषा की आधुनिक परिभाषाओं में डा० श्यामसुन्दर दास ने अपने ग्रन्थ 'भाषा रहस्य' में कहा है-

"मनुष्य-मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और गति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि संकेतों का जो व्यवहार होता है, उसे भाषा कहते हैं।"

इस प्रकार हम कह सकते हैं, कि भाषा साहित्य का नादमय चित्र है, ध्वनिमय स्वरूप है तथा विश्व की हृदयतन्त्री की झंकार है जिसके स्वर से यह अभिव्यक्ति पाती है।

1.3.2 भाषा की विशेषताएं-

- (1) भाषा एक व्यवस्था है। यह अनुकरण द्वारा सीखी जाती है।
- (2) यह अर्जित सम्पत्ति है।
- (3) यह परिवर्तनशील है।
- (4) भाषा सभ्यता के साथ विकास पाती है।
- (5) भाषा प्रतीकात्मक है।
- (6) भाषा समाज में विचार-विनिमय का साधन है।
- (7) भाषा व्यावहारिक दक्षता है।
- (8) इसका प्रारम्भ मौखिक है। इसका लिखितरूप सभ्यता और संस्कृति की देन है।
- (9) किन्हीं भी दो भाषाओं की संरचना पूर्णतः समान नहीं होती।
- (10) भाषा स्थूल से सूक्ष्म की ओर विकसित होती है।
- (11) भाषा संश्लेषण से विश्लेषण की ओर बढ़ती है।
- (12) प्रत्येक भाषा का अपना एक मानक रूप होता है।
- (13) भाषा के अनेक स्वरूप होते हैं जैसे- व्यक्ति बोली, समाज भाषा, बोली, मानक भाषा, अमानक भाषा, साहित्यिक भाषा, मौखिक भाषा, लिखित भाषा।

1.3.3 भाषा के विविध रूप -

भाषा को व्यवहार में लाने की दृष्टि से उसके अनेक रूप हैं। जिस तरह भाषा का व्यवहार समाज में होता है, उसी प्रकार उस भाषा को पढ़ाते समय शिक्षक को अपने उद्देश्य, शिक्षण विधियाँ व सहायक सामग्री का प्रयोग करना पड़ता है जैसे अंग्रेजी, हिन्दी व संस्कृत भाषाओं को पढ़ाने में कुछ न कुछ भिन्नता अवश्य होगी। भाषा के वे विविध रूप इस प्रकार हैं-

1. **मूल भाषा** - सम्पूर्ण विश्व एक परिवार का ही विस्तार है। सर्वप्रथम उस परिवार की एक ही भाषा थी भौगोलिक परिस्थितियों के कारण वह परिवार अनेक शाखाओं में संवर्धित होता चला गया और अपनी मूल परिवार की भाषा अपने साथ ले गया, किन्तु स्थान तथा काल भेद के कारण उस ही मूल भाषा में अनेक परिवर्तन आ गए।
2. **मातृ-भाषा** - मातृभाषा वह भाषा है, जो माता की गोद में रहकर सीखी जाती है अर्थात् बालक जन्म के साथ ही जिस भाषा को अपने माता-पिता तथा अन्य पारिवारिक सदस्यों द्वारा व्यावहारिक रूप में सुनता है और बिना किसी श्रम के अनायास ही उस भाषा को शुद्ध रूप में स्वयं भी सीख जाता है, क्योंकि भाषा अनुकरण द्वारा सीखी जाती है। किसी बालक की मातृभाषा प्रादेशिक भाषा और राष्ट्र भाषा भी हो सकती है जैसे जो बालक गुजरात में रह रहा है उसकी मातृभाषा व प्रादेशिक भाषा गुजराती हो सकती है। इसी प्रकार उत्तरप्रदेश में रहने वाले बालक की मातृभाषा व प्रादेशिक भाषा हिन्दी हो सकती है तथा हिन्दी राष्ट्र भाषा के पद पर भी प्रतिष्ठित है।
3. **प्रादेशिक भाषा** - प्रादेशिक भाषा वह भाषा है, जिसका प्रयोग प्रदेश या प्रान्त के विस्तृत भूभाग के अधिकांश लोगों के द्वारा किया जाता है। 1956 में राज्य पुनर्गठन आयोग द्वारा गठित भाषावार राज्यों की स्थापना से प्रादेशिक भाषाओं का बहुत विकास हुआ है। भारतीय संविधान द्वारा स्वीकृत संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, उड़िया, पंजाबी, काश्मीरी, उर्दू, बंगाली, असमिया, मराठी, सिन्धी आदि के अतिरिक्त नेपाली व कोंकणी भी संविधान स्वीकृति प्राप्त कर चुकी हैं। ये भारोपीय परिवार के अन्तर्गत आती हैं तथा तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़ आदि द्रविड़ परिवार के अन्तर्गत आती हैं।
4. **राज भाषा** - स्वतन्त्रता संघर्ष के समय यह अनुभव किया गया, कि भारत के लिए किसी एक प्रतिनिधि या सम्पर्क भाषा की आवश्यकता है और वह भाषा अपेक्षाकृत अधिक लोगों के द्वारा बोली जाने के कारण हिन्दी हो सकती है। अतः स्वतन्त्रोपरान्त भारत में संविधान के अनुच्छेद 343 में उपबन्ध किया गया कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। 1963 के राजभाषा अधिनियम में राजकीय कार्यों में हिन्दी भाषा के प्रयोग पर अधिकाधिक बल देने की बात कही गई। 1976 के राजभाषा नियम में कहा गया कि केन्द्रीय

सरकार के किसी एक मंत्रालय या विभाग और किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग के बीच पत्रादि हिन्दी अथवा अंग्रेजी में हो सकते हैं। हिन्दी के पत्रादि के उत्तर केन्द्रीय सरकार के कार्यालय से हिन्दी में ही दिए जाएंगे।

5. **राष्ट्र भाषा** - भारत एक बहुभाषाभाषी देश है। विभिन्न प्रान्तों में लोगों द्वारा अपनी प्रादेशिक भाषाओं का प्रयोग किया जाता है, किन्तु यह आवश्यक है, कि प्रत्येक बालक अपनी मातृभाषा और प्रादेशिक भाषा जानने के बाद भी एक ऐसी भाषा का ज्ञान अवश्य रखे जिसके माध्यम से वह अपने देश के अन्य भाषाभाषियों के साथ सम्पर्क स्थापित कर सके। यह भाषा ही राष्ट्र भाषा कहलाती है भारतीय संविधान ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित किया है। हिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी मातृभाषा एवं राष्ट्रभाषा दोनों है किन्तु अहिन्दी प्रदेशों में मातृभाषा एवं राष्ट्रभाषा भिन्न हैं। राष्ट्र भाषा राष्ट्रीय गौरव और सम्मान का प्रतीक है। राष्ट्रभाषा का अभाव उस राष्ट्र को ही हीन बना देता है। भावात्मक एकता की दृष्टि से भी राष्ट्रभाषा का अपना महत्त्व है। यह जनसाधारण के हृदय में परस्पर स्नेह का संचार करने में सहयोग करती है।
6. **अंतरराष्ट्रीय भाषा** - विश्व के सभी राष्ट्रों के आपसी पत्र-व्यवहार, व्यापार तथा विचारविनिमय जिस भाषा के माध्यम से होते हैं वह अंतरराष्ट्रीय भाषा कहलाती है। यह भाषा सभी राष्ट्रों को एक दूसरे के निकट लाने की एक कड़ी है। वर्तमान में अंग्रेजी को अंतरराष्ट्रीय भाषा का स्थान प्राप्त है।
7. **सांस्कृतिक भाषा** - प्रत्येक देश की अपनी संस्कृति होती है। संस्कृति में उस देश के आचार-व्यवहार, लोकाचार आदि सम्मिलित होते हैं। इस संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन हेतु किसी न किसी भाषा की आवश्यकता होती है। यह भाषा सामान्यतः जन साधारण की भाषा से अधिक उदात्त होती है। जनसमुदाय इसे श्रद्धा की दृष्टि से देखता है। यह भाषा कुछ लोगों की समझ से बाहर होती है तथापि समाज में इसे प्रतिष्ठा मिलती है क्योंकि इसे पूर्वजों की भाषा भी कहा जाता है। सरकार भी संस्कृत को सम्पूर्ण संरक्षण प्रदान करने हेतु इसके ग्रन्थों के रख-रखाव व पठन-पाठन की समुचित व्यवस्था करती है। 'संस्कृत' भारत की सांस्कृतिक भाषा है। इस भाषा के सम्मान में युगाब्द 5101 (1999-2000) को केन्द्र सरकार द्वारा संस्कृत वर्ष के रूप में घोषित किया गया है।

स्वर और लय (Tone and Rhythm) - बोलने के तरीके में उतार-चढ़ाव अर्थ को स्पष्ट करने में मदद करते हैं।

हाव-भाव (Gestures and Body Language)- मौखिक भाषा के साथ-साथ चेहरे के भाव और शारीरिक संकेत भी संचार को प्रभावशाली बनाते हैं।

बड़ी संख्या में लोगों को संबोधित करना।

उदाहरण - सार्वजनिक रैलियों में भाषण।

1.4 भाषा कौशल

1.4.1 अर्थ -

भाषा का उचित प्रकार से व्यवहार करने के लिए आवश्यक कौशल भाषा कौशल कहलाते हैं। यहाँ पर उचित प्रकार से व्यवहार करने का तात्पर्य है- अपने विचारों को ठीक-ठीक तरीके से श्रोता तक पहुँचाना तथा वक्ता द्वारा अभिव्यक्त किए गए विचारों को ठीक-ठीक प्रकार से समझ पाना। इस दृष्टि से चार कौशलों की बात की जाती है-

1. सुनना
2. बोलना
3. पढ़ना
4. लिखना

कोई व्यक्ति अपनी बात कितने सामर्थ्यपूर्ण तरीके से रख पाएगा? यह उसके बोलने और लिखने के कौशल पर निर्भर करता है। एक ही विषय पर जब दो लोग अपनी बात रखते हैं तो एक व्यक्ति द्वारा कही गई बात श्रोताओं को आसानी से समझ में आ जाती है, जबकि दूसरे व्यक्ति द्वारा कही गई बात श्रोताओं को सरलता से समझ में नहीं आती, और वे बार-बार प्रश्न करते हैं। यह बात अभिव्यक्ति कौशल (बोलना या लिखना) से संबंधित है।

इसी प्रकार किसी एक ही व्यक्ति द्वारा कही गई बात को कोई व्यक्ति ठीक तरीके से सुनकर समझ लेता है, जबकि दूसरा व्यक्ति उसी को कई बार पूछता है। यह बोधन कौशल (सुनना और पढ़ना) से संबंधित बात है।

अभिव्यक्ति और बोधन के संदर्भ में भाषा कौशलों के प्रकार

(क) अभिव्यक्ति कौशल (बोलना या लिखना)

(ख) बोधन कौशल (सुनना और पढ़ना)

वक्ता और श्रोता के बीच में होने वाले विचारों के आदान-प्रदान को संप्रेषण कहते हैं। उचित संप्रेषण के लिए आवश्यक है कि वक्ता ठीक तरीके से अपनी बात को अभिव्यक्त कर पाता हो तथा श्रोता वक्ता द्वारा कही गई बात को ठीक तरीके से समझ पाता हो। यह तभी हो पाएगा जब संबंधित भाषा में उक्त चारों कौशलों में दक्षता वक्ता और श्रोता के अंदर हो -

भाषा शिक्षण की दृष्टि से इन चारों कौशलों के 02 वर्ग किए गए हैं -

(क) प्रधान कौशल

(ख) गौण कौशल

(क) प्रधान कौशल

भाषा का मूल रूप इसका वाचिक रूप है, जिसके माध्यम से वक्ता और श्रोता द्वारा संप्रेषण किया जाता है। वाचिक रूप से संप्रेषण के लिए 'बोलना और सुनना' कौशलों की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए इन दोनों ही कौशलों को प्रधान कौशल कहा गया है। किसी व्यक्ति के पास किसी भाषा का ज्ञान है या नहीं है? उसका पैमाना उसके बोलने और सुनने की क्षमता से ही निर्धारित होता है। आज भी ढेर सारे आदिवासी समाजों में लोग बोलने और सुनने के माध्यम से ही आपस में संप्रेषण करते हैं। पढ़ने और लिखने की कोई व्यवस्था नहीं है, किंतु उनका काम सरलतापूर्वक चल रहा है, किंतु यदि बोलना और सुनना ही ना आए तो व्यक्ति सामाजिक व्यक्ति नहीं बन सकता। इस कारण इन दोनों कौशलों को प्रधान कौशल कहा गया है।

(ख) गौण कौशल

भाषिक अभिव्यक्ति के लिखित रूप का विकास मानव सभ्यता के विकास में हुए क्रांतिकारी परिवर्तनों में से एक है। इसके कारण भाषिक अभिव्यक्ति को लंबे समय तक सुरक्षित रख पाना तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना संभव हो सका। अर्थात् लिखित रूप के विकास से संप्रेषण के संदर्भ में समय और स्थान की समस्या से मुक्ति मिल गई और इसी कारण मानव सभ्यता का मार्ग प्रशस्त हो सका है। अतः एक व्यक्ति सर्वांगीण विकास के लिए बोलना और सुनना के अलावा लिखना और पढ़ना भी आना चाहिए, किंतु इसके बिना भी मानव जीवन अत्यंत सरलता से चल जाता है। 'पढ़ना और लिखना' सीख जाने से हम औपचारिक क्रियाकलापों के भागीदार हो जाते हैं या दूसरे शब्दों में साक्षर हो जाते हैं, किंतु इन कौशलों के बिना भी मनुष्य का काम चल जाता है। इन कौशलों की महत्ता मानव जीवन में अतिरिक्त है। इस कारण 'पढ़ना और लिखना' को गौण कौशल कहा गया है।

1.4.2 प्रकार -

भाषा कौशल को मुख्य रूप से चार प्रकारों में विभाजित किया जाता है -

सुनना = श्रवण कौशल

बोलना = भाषण कौशल

पढ़ना = वाचन या पठन कौशल

लिखना = लेखन कौशल

उपर्युक्त चारों कौशलों के शिक्षण संबंधी बातों को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत देखा जा सकता है-

(क) श्रवण कौशल (सुनना)

श्रवण कौशल शिक्षण - महत्व /आवश्यकता

महत्त्व -

भाषा अधिगम की आधारशिला

नोट

श्रवण (सुनना) किसी भी भाषा को सीखने का पहला चरण है। जब हम किसी भाषा को सुनते हैं, तब हमारे मस्तिष्क में उसके ध्वनि-पैटर्न और शब्दों का बोध होता है।

समझदारी और प्रतिक्रिया का विकास

अच्छे श्रोता बनने से हम दूसरों की बातों को बेहतर समझ पाते हैं और उसी अनुरूप प्रतिक्रिया भी दे सकते हैं।

संचार कौशल में सुधार

प्रभावी संवाद के लिए पहले सुनना आना चाहिए। अच्छे संचारक वही होते हैं जो पहले ध्यान से सुनते हैं।

ध्यान और एकाग्रता में वृद्धि

श्रवण अभ्यास से ध्यान केंद्रित करना और एक ही विषय पर टिके रहना आसान होता है।

सृजनात्मकता और कल्पनाशक्ति का विस्तार

कहानी, कविता या वार्तालाप को सुनकर छात्र अपने भीतर चित्र बना पाते हैं, जिससे उनकी कल्पनाशीलता बढ़ती है।

आवश्यकता -

विद्यार्थियों में भाषा के प्रति रुचि जगाने के लिए

जब विद्यार्थी सुनकर सीखते हैं, तो उनमें भाषा के प्रति स्वाभाविक रुचि और समझ पैदा होती है।

सुनकर सीखने वाले छात्रों की सहायता के लिए

हर छात्र का सीखने का तरीका अलग होता है—कुछ पढ़कर, कुछ सुनकर सीखते हैं। ऐसे में श्रवण कौशल ज़रूरी हो जाता है।

शुद्ध उच्चारण और स्वर की पहचान कराने के लिए

सुनने से शब्दों के सही उच्चारण और वाक्य-प्रवाह का बोध होता है।

सामाजिक संवाद और शिष्टाचार सिखाने के लिए

अच्छे श्रोता बनने से छात्र सामाजिक रूप से भी अधिक सजग, संवेदनशील और विनम्र बनते हैं।

वर्तमान डिजिटल युग की आवश्यकताओं के अनुसार

आज ऑडियो क्लास, पॉडकास्ट, वेबिनार आदि के माध्यम से शिक्षा दी जाती है। ऐसे में श्रवण कौशल अत्यंत आवश्यक हो गया है।

श्रवण कौशल शिक्षण के उद्देश्य

- सुनने की समझ को विकसित करना।
- ध्यान और एकाग्रता बढ़ाना।
- सुनकर विचार करने की क्षमता विकसित करना।

नोट

- सुनकर जानकारी ग्रहण करने का अभ्यास कराना।
- शुद्ध उच्चारण और भाषा शैली को समझाना।
- भावना और स्वर का बोध कराना।
- श्रवण के माध्यम से विद्यार्थियों में सहानुभूति, विनम्रता, सहनशीलता जैसे गुणों का विकास करना।
- मौखिक उत्तर देने की क्षमता बढ़ाना।
- सृजनात्मकता को बढ़ावा देना।

श्रवण कौशल की कठिनाइयाँ / में होने वाली त्रुटियाँ

श्रवण कौशल के विकास में कई कठिनाइयाँ और त्रुटियाँ बाधा बनती हैं। सबसे सामान्य कठिनाई ध्यान की कमी है, जिससे विद्यार्थी पूरी बात समझ नहीं पाते। कई बार श्रोता अधूरी बात सुनकर निष्कर्ष निकाल लेते हैं या पूर्वाग्रह के कारण सही ढंग से नहीं सुनते। बाहरी शोर, शब्दावली की समझ का अभाव, वक्ता की बोलने की गति या उच्चारण की अस्पष्टता भी सुनने में दिक्कतें पैदा करती हैं। मानसिक रूप से विचलित श्रोता सक्रिय रूप से सुन नहीं पाते, जिससे संवाद में त्रुटियाँ हो जाती हैं। इन त्रुटियों से बचने के लिए एकाग्रता, धैर्य और अभ्यास आवश्यक होता है, ताकि श्रवण प्रक्रिया प्रभावी और समझदारीपूर्ण बन सके।

(ख) भाषण कौशल (बोलना)**भाषण कौशल शिक्षण - महत्व / आवश्यकता**

भाषण कौशल किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास और प्रभावी संप्रेषण के लिए अत्यंत आवश्यक है। यह कौशल छात्रों को आत्मविश्वास के साथ अपने विचार, भावनाएँ और तर्क स्पष्ट रूप से व्यक्त करने में मदद करता है। अच्छे भाषण कौशल से छात्र सामाजिक, शैक्षणिक और व्यावसायिक क्षेत्रों में सफल हो सकते हैं। यह न केवल मंच पर बोलने की योग्यता देता है, बल्कि समूह चर्चा, इंटरव्यू और संवाद जैसी स्थितियों में भी सहायक होता है। शिक्षण के दौरान भाषण कौशल को प्रोत्साहित करने से छात्रों की सोचने, विश्लेषण करने और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने की क्षमता बढ़ती है। आज के प्रतिस्पर्धी युग में यह कौशल नेतृत्व, टीमवर्क और संवाद की दृष्टि से अनिवार्य बन गया है, इसलिए विद्यालय स्तर पर ही इसका शिक्षण अत्यंत आवश्यक है।

भाषण कौशल शिक्षण के उद्देश्य

- छात्रों को मंच पर या समूह में बिना झिझक बोलने के लिए प्रेरित करना।
- विचारों को सही शब्दों और भावों के साथ प्रस्तुत करने की योग्यता बढ़ाना।
- शुद्ध उच्चारण और सही भाषा का प्रयोग सिखाना।

नोट

- किसी विषय पर क्रमबद्ध, उद्देश्यपूर्ण और सटीक बोलने की क्षमता विकसित करना।
- दूसरों के प्रश्नों या विचारों को सुनकर उपयुक्त प्रतिक्रिया देना सीखना।
- भाषण के माध्यम से नेतृत्व गुण और टीम में संवाद करने की क्षमता को बढ़ावा देना।
- शिष्ट भाषा, भाव-भंगिमा और दूसरों के प्रति सम्मान के साथ बोलना सीखना।
- छात्र स्वयं विचार करके अपने शब्दों में विचार प्रस्तुत कर सकें, यह आदत विकसित करना।

भाषण कौशल की कठिनाइयाँ / में होने वाली त्रुटियाँ

भाषण कौशल में कई कठिनाइयाँ देखी जाती हैं, जो वक्ता की प्रस्तुति को प्रभावित करती हैं। सबसे सामान्य समस्या आत्मविश्वास की कमी है, जिसके कारण छात्र झिझकते हैं और मंच पर बोलने से डरते हैं। कई बार भाषा पर नियंत्रण की कमी, जैसे अशुद्ध उच्चारण, गलत व्याकरण या शब्दों का अनुचित चयन, भाषण की प्रभावशीलता घटा देता है। विषय की स्पष्ट जानकारी न होना या विचारों की असंगठित प्रस्तुति भी एक बड़ी त्रुटि है, जिससे श्रोता विषय से जुड़ नहीं पाते। बहुत तेज़ या बहुत धीमी बोलने की गति, मोनोटोन आवाज़, या नेत्र संपर्क न करना जैसे व्यवहारिक दोष भी प्रभावी भाषण में बाधा बनते हैं। इसके अलावा, कभी-कभी वक्ता श्रोताओं की रुचि या प्रतिक्रिया पर ध्यान नहीं देता, जिससे संवाद एकतरफा हो जाता है। इन त्रुटियों को सुधारकर ही एक अच्छा और प्रभावशाली वक्ता बना जा सकता है।

(ग) वाचन या पठन कौशल (पढ़ना)**वाचन या पठन कौशल शिक्षण - महत्व / आवश्यकता**

वाचन कौशल किसी भी भाषा अधिगम का आधार होता है, क्योंकि इसके माध्यम से हम ज्ञान प्राप्त करते हैं, सोच को विकसित करते हैं और दुनिया को समझने का दृष्टिकोण पाते हैं। पढ़ने की अच्छी आदत से विद्यार्थी केवल पाठ समझते ही नहीं, बल्कि उसकी गहराई में जाकर विश्लेषण और चिंतन करना भी सीखते हैं। यह कौशल छात्रों में शब्द-भंडार, वाक्य रचना, उच्चारण और अर्थ ग्रहण करने की क्षमता को बढ़ाता है। पठन कौशल शिक्षण से बच्चों में *एकाग्रता*, *ध्यान*, और *समझने की क्षमता* विकसित होती है, जिससे वे अन्य विषयों में भी बेहतर प्रदर्शन कर पाते हैं। आज के डिजिटल युग में जहाँ पढ़ने के स्रोत विविध हो गए हैं, वहाँ सही पठन रणनीतियों का विकास और अधिक आवश्यक हो गया है, ताकि विद्यार्थी सूचनाओं को पहचानें, मूल्यांकन करें और उनका उचित उपयोग कर सकें। इसीलिए वाचन कौशल का शिक्षण अत्यंत आवश्यक और उपयोगी है।

वाचन या पठन कौशल शिक्षण के उद्देश्य

वाचन कौशल शिक्षण का मुख्य उद्देश्य छात्रों में पढ़ने की रुचि जागृत करना और उन्हें अर्थपूर्ण, समझदारीपूर्ण वाचन की दिशा में प्रोत्साहित करना है। इसके माध्यम से विद्यार्थियों को शब्दों का सही उच्चारण, विराम चिह्नों का प्रयोग, तथा भावानुसार पढ़ने की कला सिखाई जाती है। वाचन न केवल भाषा ज्ञान को समृद्ध करता है, बल्कि विद्यार्थियों की *ध्यान केंद्रित करने की क्षमता*, *समझने की शक्ति*, और *विश्लेषणात्मक सोच* का भी विकास करता है। इसका एक और उद्देश्य यह है कि छात्र पाठ के निहित अर्थ, भावना और शैली को समझकर उसे आत्मसात कर सकें। साथ ही, पढ़े गए विषय पर विचार व्यक्त करना, प्रश्नों का उत्तर देना और लेखन में उसका उपयोग करना भी पठन कौशल का अभिन्न हिस्सा है। इस प्रकार, पठन कौशल शिक्षण छात्रों को एक सक्षम, जागरूक और अभिव्यक्तिशील पाठक बनाने की दिशा में कार्य करता है।

वाचन या पठन कौशल की कठिनाइयाँ / में होने वाली त्रुटियाँ

वाचन कौशल के अभ्यास में कई प्रकार की कठिनाइयाँ सामने आती हैं, जिनमें सबसे प्रमुख है **शब्दों का अशुद्ध उच्चारण और विराम चिह्नों की उपेक्षा**। कई बार विद्यार्थी पढ़ते समय शब्दों को गलत तरीके से जोड़ते या तोड़ते हैं, जिससे अर्थ का अनर्थ हो जाता है। **बहुत तेज़ या बहुत धीमा पढ़ना, एक ही पंक्ति को बार-बार दोहराना, और शब्दों को छोड़ देना या गलत पढ़ना** भी आम त्रुटियाँ हैं। कुछ छात्रों को **शब्दार्थ की समझ** नहीं होती, जिससे वे पाठ को केवल यांत्रिक रूप से पढ़ते हैं, बिना उसका मर्म समझे। **ध्यान की कमी, अवधारण क्षमता का अभाव, और पढ़ते समय आत्मविश्वास की कमी** भी वाचन को प्रभावित करते हैं। इसके अलावा, *स्वर, भाव और लय* का अभाव पाठ को नीरस बना देता है, जिससे श्रोता या पाठक रुचि नहीं ले पाते। इन त्रुटियों को सुधारने के लिए निरंतर अभ्यास, शिक्षक की सही मार्गदर्शन और भावनात्मक जुड़ाव आवश्यक होता है।

(घ) लेखन कौशल (लिखना)**लेखन कौशल शिक्षण - महत्व / आवश्यकता**

लेखन कौशल शिक्षण आज के युग में अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि यह व्यक्ति के विचारों की स्पष्ट और प्रभावशाली अभिव्यक्ति का माध्यम है। यह न केवल छात्रों की शैक्षणिक सफलता में सहायक होता है, बल्कि उनके रचनात्मक और तार्किक सोच को भी विकसित करता है। लेखन के माध्यम से व्यक्ति अपनी भावनाओं, अनुभवों और विचारों को सुसंगठित रूप में प्रस्तुत करता है, जो न केवल आत्म-अभिव्यक्ति में मदद करता है, बल्कि सामाजिक जागरूकता और व्यावसायिक सफलता के लिए भी उपयोगी होता है। इसलिए लेखन कौशल का विकास जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सफलता की कुंजी है।

लेखन कौशल शिक्षण के उद्देश्य

- विचारों की स्पष्ट और सुसंगठित अभिव्यक्ति सिखाना।
- भाषा और व्याकरण की सही समझ को विकसित करना।
- रचनात्मकता और कल्पनाशक्ति को प्रोत्साहित करना।
- विविध लेखन शैलियों (निबंध, पत्र, संवाद, रिपोर्ट आदि) में दक्षता प्रदान करना।
- संचार कौशल को सशक्त बनाना, जिससे व्यक्ति प्रभावी ढंग से अपनी बात कह सके।
- आलोचनात्मक और विश्लेषणात्मक सोच को बढ़ावा देना।
- स्वभिव्यक्ति और आत्मविश्वास को विकसित करना
- शैक्षणिक और व्यावसायिक आवश्यकताओं के अनुरूप लेखन में सुधार करना।

लेखन कौशल की कठिनाइयाँ / में होने वाली त्रुटियाँ

लेखन कौशल विकसित करते समय विद्यार्थियों को कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। सबसे सामान्य त्रुटियाँ हैं – वर्तनी की गलतियाँ, व्याकरणिक अशुद्धियाँ, और वाक्य संरचना की असंगति। इसके अलावा, विचारों को स्पष्ट और क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत न कर पाना भी एक बड़ी चुनौती होती है। कई बार लेखन में प्रासंगिकता की कमी, विषय से भटकाव, तथा अवांछित पुनरावृत्ति देखने को मिलती है। कुछ छात्रों में शब्दावली की सीमित जानकारी होने के कारण उनके विचार प्रभावी ढंग से व्यक्त नहीं हो पाते। साथ ही, लेखन की योजना न बनाना और समय प्रबंधन में असफल रहना भी लेखन की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए नियमित अभ्यास, पठन और मार्गदर्शन आवश्यक होता है।

भाषा कौशल का विकास निरंतर अभ्यास, पठन-पाठन, और संवाद के माध्यम से किया जा सकता है।

1.5 भारत वंदना - सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

कविता

भारती जय विजय करे।

कनक शस्य कमल धरे।

लका पददल शतदल,

गर्जितोमि सागर- जल

धोता शुचि चरण युगल

स्तव कर बहु अर्थ भरे।

नोट

अंचल में खचित सुमन,
गंगा ज्योतिर्जल - कण
धवल धार हार गले।

मुकुट शुभ्र हिम - तुषार,
प्राण प्रणव ओंकार,
ध्वनित दिशाएँ उदार,
शतमुख शतरव मुखरे।

1.5.1 सन्दर्भ

प्रस्तुत कविता सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की है। जिनका हिंदी साहित्य में विशेष स्थान है। वे छायावाद के आधार स्तंभ हैं। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' हिंदी साहित्य के छायावादी युग के प्रमुख कवि थे। उनकी कविता "भारत वंदना" एक उत्कृष्ट कृति है। यह कविता माँ भारती (भारत माता) की महिमा का गुणगान करती है। इसमें कवि भारत की प्राकृतिक सुंदरता, सांस्कृतिक गौरव और धार्मिक आस्था का चित्रण करते हुए उसे विजयश्री प्राप्त करने का आशीर्वाद देता है। यह राष्ट्रभक्ति से परिपूर्ण कविता है जो भारत भूमि के सौंदर्य, पवित्रता और आध्यात्मिक उन्नति को दर्शाती है।

1.5.2 प्रसंग

इस कविता में कवि भारत माता को एक दिव्य, शक्तिशाली, और पवित्र रूप में प्रस्तुत करता है। वह माँ भारती की विजय की कामना करता है और उनके स्वरूप का वर्णन प्रकृति, संस्कृति और धर्म के अद्भुत समन्वय के रूप में करता है। यह कविता पाठकों में देशप्रेम, गर्व और आस्था की भावना जागृत करती है।

1.5.3 व्याख्या

भारत वंदना कविता में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने भारत माता के गौरव, उसकी सांस्कृतिक समृद्धि, वीरता और आध्यात्मिक वैभव का अत्यंत भावपूर्ण वर्णन किया है। यह कविता एक स्तुति की भाँति है, जिसमें भारतवर्ष की महानता को नमन किया गया है। कवि भारत को न केवल एक भौगोलिक सत्ता मानते हैं, बल्कि उसे पुण्यभूमि, तपोभूमि और ज्ञानभूमि के रूप में देखते हैं। उनका मानना है कि भारत विश्व का भूषण है, जिसकी परंपराएँ पवित्र और गौरवशाली रही हैं। यह वह भूमि है जहाँ अर्जुन, भीम और विक्रमादित्य जैसे महान योद्धाओं ने जन्म लिया, जिन्होंने अपने शौर्य, पराक्रम और धर्मनिष्ठा से इतिहास रचा। भारत का अतीत अमर गाथाओं से भरा हुआ है, जिसमें शक्ति, स्मृति और शौर्य की शाश्वत परंपरा

नोट

प्रवाहित होती रही है। यह देश केवल बाह्य शक्तियों में ही नहीं, बल्कि आत्मबल और अध्यात्म में भी अग्रणी रहा है।

निराला जी भारत को विश्वगुरु की उपाधि देते हैं, क्योंकि इस भूमि ने ही समस्त विश्व को ध्यान, योग, वेद, उपनिषद और ज्ञान का प्रकाश प्रदान किया। भारतीय संस्कृति केवल भौतिक प्रगति तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने नैतिकता, आध्यात्मिकता और मानवता का भी मार्गदर्शन किया है। कवि यह स्पष्ट करते हैं कि भारत की महत्ता उसके भूगोल से नहीं, उसकी आत्मा से है। इस कविता के माध्यम से वह देशवासियों को यह स्मरण कराना चाहते हैं कि हमें अपने अतीत से प्रेरणा लेकर वर्तमान में चेतना लानी चाहिए और भारत को पुनः उस वैभव के शिखर पर पहुँचाना चाहिए जहाँ से उसने कभी संपूर्ण विश्व को आलोकित किया था।

उद्धोधन है, जो प्रत्येक भारतीय को अपने देश के प्रति कर्तव्यों की याद दिलाता सजीव बनाकर आगे बढ़े। निराला की यह कविता भारत माता के प्रति श्रद्धा, कृतज्ञता और पुनरुत्थान की आकांक्षा का सशक्त प्रतीक है।

1.5.4 सार

कवि कविता के माध्यम से लोगों को मातृभूमि के प्रति जागरूक करने की कोशिश करते हैं। प्रकृति सौन्दर्य का चित्रण करते हुए लंका की उपमा शतदल से करते हैं। भारत भूमि की स्तुति करते हुए कवि कहते हैं कि “हे भारत माता, हे विज्ञायिनी तेरी जय हो। तुम सोना अन्न और कमल धारण करने वाली हो”। अर्थात् तुम सुंदर कमलों से सुसज्जित और धन धान्य से परिपूर्ण हो। तुम सरस्वती के समान हरे – हरे स्वर्ण कमल धारण करती हो।

वे आगे कहते हैं कि “हे मात, लंका आपके चरण कमल में है भारत के दक्षिण में विशाल हिन्द महासागर सागर है जो भारत के चरणों के समान है जिसकी गरजती लहरें आपके चरणों को धोती है। और बहुत प्रेमभाव से आपकी स्तुति करती हैं। ये केवल लहरों की गर्जना नहीं बल्कि भारत माता के सम्मान में श्रद्धानत , एवं भावना पूर्ण सागर की स्तुति है।

कवि भारत माता की वेशभूषा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि ये वृक्ष, घास, वन पेड़-पौधे और लताएँ आपके वस्त्र हैं, सुंदर फूलों- फलों से सज्जित जड़े हुए सितारे के समान हैं। गंगा की श्वेत धारा भारत माता के गले के हार है जो उसके कंठ में शोभित हो रही है।

नोट

कवि भारतभूमि का वर्णन करते हुए कहते हैं कि भारतीय संस्कृति का मूल मन्त्र ॐ (ओंकार) ही है। प्रत्येक भारत वासी ॐ का जाप कर अपने आपको धन्य समझता है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश सभी इस मन्त्र का उच्चारण करते हैं इस प्रकार ओंकार शब्द हर एक भारत वासी की जीवन शक्ति है। यह ॐ शब्द परम शक्ति से सम्पन्न परमपिता परमेश्वर का स्वरूप है।

**गतिविधि 1.1**

अपने मोबाइल या रेडियो पर किसी हिन्दी समाचार बुलेटिन/कविता/कहानी को सुनिए (10 मिनट)।

प्रश्न -

- आपने कौन-कौन से नए शब्द सुने?

.....
.....

- उस ऑडियो का मुख्य विषय क्या था? उसका सारांश लिखिए

.....
.....

अपनी प्रगति जांचें 1.1

1. भाषा हमारे जीवन में क्यों महत्वपूर्ण है?

.....
.....

2. भाषा के कितने और कौन-कौन से रूप होते हैं?

.....
.....

3. भाषा के चार मुख्य कौशल कौन-कौन से हैं?

.....
.....

4. सुनने की क्षमता को बेहतर बनाने के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं?

.....
.....

5. 'भारत वंदना' कविता में भारत की किन विशेषताओं का वर्णन किया गया है?

.....
.....

6. कवि ने भारत को "पुण्यभूमि" क्यों कहा है?

.....
.....

1.6 सारांश

भाषा मानव जीवन की सबसे मूल्यवान और अनोखी देन है। यह न केवल विचारों को प्रकट करने का माध्यम है, बल्कि संस्कृति, चेतना और सामाजिक पहचान का को समृद्ध बनाते हैं।

विकास और ज्ञान के प्रसार में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इन कौशलों के संतुलित विकास से व्यक्ति न केवल संप्रेषण में निपुण बनता है, बल्कि उसकी सोचने और समझने की शक्ति भी प्रबल होती है।

इन्हीं भाषा-कौशलों का प्रयोग करते हुए सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने अपनी कविता "भारत वंदना" में मातृभूमि की महिमा का गुणगान किया है। इस काव्य में भारत को पुण्यभूमि, वीरों और संतों की भूमि बताया गया है। कविता में कवि की देशभक्ति, गर्व और सांस्कृतिक गौरव की भावना स्पष्ट रूप से झलकती है। यह रचना पाठकों में राष्ट्रीय चेतना और मातृभूमि के प्रति श्रद्धा का भाव जगाती है। इस प्रकार, भाषा केवल संवाद का साधन नहीं, बल्कि विचार, भाव और संस्कृति को जीवित रखने वाली शक्ति है।

1.7 शब्दावली

शब्द	अर्थ
1. अभिव्यक्ति	विचारों या भावनाओं को व्यक्त करना
2. चेतना	जागरूकता या समझने की क्षमता
3. संप्रेषण	एक-दूसरे से विचारों का आदान-प्रदान
4. बहुआयामी	कई रूपों या पक्षों वाला
5. संज्ञानात्मक	सोचने-समझने और जानने से संबंधित सही शब्द है
6. सशक्त	मजबूत या प्रभावशाली
7. सांस्कृतिक	संस्कृति से संबंधित
8. आत्मसात	किसी बात को अपनाना या अंदर समा लेना
9. स्तुति	प्रशंसा करना, गुणगान
10. गौरवशाली	सम्मानपूर्ण, गर्व से भरा
11. पुण्यभूमि	पवित्र और महान कार्यों की भूमि

नोट

12. प्रेरणादायक	प्रेरणा देने वाला
13. समृद्ध	विकसित और भरा-पूरा
14. सृजनात्मक	नया रचने की क्षमता रखने वाला
15. राष्ट्रीय चेतना	देश के प्रति जागरूकता और जिम्मेदारी की भावना

1.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर

उत्तर-

- भाषा हमारे विचारों, भावनाओं और अनुभवों को व्यक्त करने का मुख्य माध्यम है। यह हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक विकास का आधार है। भाषा के बिना संचार असंभव होता और समाज बिखर जाता।
- भाषा के प्रमुख चार रूप होते हैं -**
 - मौखिक भाषा** – बातचीत के माध्यम से व्यक्त की जाने वाली भाषा।
 - लिखित भाषा** – लेखन के माध्यम से संप्रेषित भाषा।
 - साहित्यिक भाषा** – कविता, कहानी आदि में प्रयुक्त कलात्मक और अभिव्यक्तिपूर्ण भाषा।
- भाषा के चार मुख्य कौशल हैं -**
 - सुनना (Listening)
 - बोलना (Speaking)
 - पढ़ना (Reading)
 - लिखना (Writing)

ये सभी कौशल मिलकर एक व्यक्ति को संपूर्ण भाषा-प्रवीण बनाते हैं।
- ध्यानपूर्वक और एकाग्र होकर सुनना।
बीच में टोकने की आदत न डालना।
ऑडियो बुक्स या भाषणों को नियमित रूप से सुनना।
नोट्स बनाना या दोहराना, जिससे बात याद रहे।
अभ्यास के लिए समाचार या प्रेरणादायक भाषणों को सुनना।
- इस कविता में भारत की *पवित्रता, सांस्कृतिक गौरव, संतों की भूमि, और वीरता* की स्तुति की गई है। भारत को *ज्ञान, तप, त्याग और समर्पण* की भूमि बताया गया है। साथ ही, कवि ने इसकी *प्राकृतिक सुंदरता और महान परंपरा* का भी गुणगान किया है।

6. कवि ने भारत को "पुण्यभूमि" इसलिए कहा है क्योंकि यहाँ अनेक संत, महात्मा, तपस्वी और देशभक्तों ने जन्म लिया है। इस भूमि पर ज्ञान, धर्म, तप और बलिदान की परंपरा रही है, जो इसे पवित्र और आदरणीय बनाती है।

1.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) - 1	http://books.aisectionline.com/User/UnitUrls?unitId=7	

1.10 संदर्भ

1. "भाषा विज्ञान का परिचय" – डॉ. ओमकार नाथ पाण्डेय
2. "शिक्षा में भाषा का महत्व" – डॉ. हरीश शर्मा
3. "भारतीय भाषाएँ और लिपियाँ" – डॉ. गिरिजाशंकर त्रिवेदी
4. "निराला रचनावली" – सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
5. "हिंदी कविता का विकास" – डॉ. नामवर सिंह
6. "भाषा शिक्षण की विधियाँ" – डॉ. सुरेश चन्द्र वर्मा

1.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ) –

1. ब्रेल लिपि किस प्रकार की भाषा मानी जाती है?
 - A. मौखिक भाषा
 - B. संकेत भाषा
 - C. दृष्टिबाधितों की लिखित भाषा
 - D. सांकेतिक मौखिक भाषा
2. इशारों से बात करने की भाषा किसे कहते हैं?
 - A. मौखिक भाषा
 - B. सांकेतिक भाषा
 - C. लिखित भाषा
 - D. ध्वनि भाषा
3. 'समाचार पत्र' किस भाषा रूप का उदाहरण है?
 - A. मौखिक
 - B. सांकेतिक
 - C. लिखित
 - D. दृश्य

4. भाषा का कौन-सा रूप परंपरा, संस्कृति और साहित्य को स्थायी बनाता है?

- | | |
|---------------|------------------|
| A. मौखिक भाषा | B. सांकेतिक भाषा |
| C. लिखित भाषा | D. संकेत |

5. निम्न में से कौन-सी भाषा तकनीक आधारित है?

- | | |
|----------|-----------|
| A. नृत्य | B. रेडियो |
| C. नाटक | D. चिह्न |

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

1. **C) दृष्टिबाधितों की लिखित भाषा** – ब्रेल लिपि स्पर्श आधारित होती है जो दृष्टिहीनों के लिए प्रयोग की जाती है।
2. **B) सांकेतिक भाषा** – इशारों और संकेतों से बनी भाषा को सांकेतिक भाषा कहा जाता है।
3. **C) लिखित** – समाचार पत्र लिखित भाषा का श्रेष्ठ उदाहरण है।
4. **C) लिखित भाषा** – स्थायित्व और संरक्षण की दृष्टि से यह सर्वोत्तम है।
5. **B) रेडियो** – यह एक तकनीक आधारित मौखिक संप्रेषण माध्यम है।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. मौखिक और लिखित भाषा में क्या अंतर है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
2. सांकेतिक भाषा क्या है? इसके प्रमुख रूपों का उल्लेख कीजिए।
3. भाषा के विविध रूपों का समाज में क्या महत्त्व है?
4. लिपि भाषा के विकास में कैसे सहायक होती है?
5. तकनीकी युग में मौखिक और लिखित भाषा के प्रयोग में क्या परिवर्तन आए हैं?

Part-2

C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. रेडियो, टेलीविजन एवं सोशल मीडिया में प्रयुक्त भाषा के स्वरूप पर टिप्पणी लिखिए।
2. लिखित भाषा मौखिक भाषा से किस प्रकार भिन्न होती है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. सांकेतिक भाषा का उपयोग किन परिस्थितियों में किया जाता है? क्या यह प्रभावशाली है? तर्क सहित उत्तर दीजिए।
2. मौखिक भाषा की दो प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट करते हुए उनके सामाजिक प्रयोग का विश्लेषण प्रस्तुत कीजिए।

इकाई – 2

मानव चेतना और स्वतंत्रता का स्वर

नोट

इकाई की रूपरेखा

- 2.1 परिचय
- 2.2 उद्देश्य
- 2.3 जाग तुझको दूर जाना है - महादेवी वर्मा
- 2.4 स्वतंत्रता पुकारती - जयशंकर प्रसाद
- 2.5 हम अनिकेतन - बालकृष्ण शर्मा नवीन
- 2.6 सारांश
- 2.7 शब्दावली
- 2.8 अपनी प्रगति जांचे - संभावित उत्तर
- 2.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER
- 2.10 संदर्भ
- 2.11 अभ्यास
- 2.12 फीडबैक फॉर्म

2.1 परिचय

"मानव चेतना और स्वतंत्रता का स्वर" हिंदी साहित्य की उन रचनाओं का संकलन है, जो मानव जीवन की जागरूकता, आत्मबोध और स्वतंत्रता की पुकार को उजागर करती हैं। इस शीर्षक के अंतर्गत तीन प्रमुख रचनाएँ शामिल हैं – **‘जाग तुझको दूर जाना है’** (महादेवी वर्मा), **‘स्वतंत्रता पुकारती’** (जयशंकर प्रसाद) और **‘हम अनिकेतन’** (बालकृष्ण शर्मा नवीन) ।

इन रचनाओं में कवियों ने न केवल स्वतंत्रता को एक राजनैतिक अवधारणा के रूप में देखा है, बल्कि उसे आत्मिक, वैचारिक और मानवीय चेतना से जोड़ा है। एक आंतरिक जागरण की पुकार है। **जयशंकर प्रसाद** की कविता 'स्वतंत्रता कविता' में जीवन को गतिशील, अनंत यात्रा के रूप में देखा गया है, जहाँ घर-बार के मोह से ऊपर उठकर मानवता की व्यापक चेतना की बात की गई है।

इन तीनों कविताओं के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता केवल एक राजनीतिक अधिकार नहीं, बल्कि एक **चेतन, आत्मनिर्भर, जागरूक और उत्तरदायी मानव जीवन की आवश्यकता** है। यह स्वर मानवता, आत्मबल, त्याग और कर्म के आदर्शों को स्वर देता है।

2.2 उद्देश्य

- विद्यार्थियों में आत्मचिंतन, आत्मबोध और जिम्मेदारी की भावना का विकास करना।
- केवल राजनीतिक स्वतंत्रता ही नहीं, बल्कि मानसिक, आत्मिक और वैचारिक स्वतंत्रता के महत्व को उजागर करना।
- जीवन में सक्रियता, साहस और संघर्षशीलता को प्रोत्साहित करना।
- विद्यार्थियों में देशभक्ति, सामाजिक उत्तरदायित्व और मानवता के प्रति संवेदनशीलता उत्पन्न करना।
- साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से उच्च विचार, आदर्श और नैतिकता का बोध कराना।
- कविताओं के माध्यम से छात्रों की सोचने, समझने और मूल्यांकन करने की क्षमता का विकास करना।

2.3 जाग तुझको दूर जाना - महादेवी वर्मा

जाग तुझको दूर जाना - महादेवी वर्मा

चिर सजग आँखें उनींदी आज कैसा व्यस्त बना !

जाग तुझको दूर जाना !

अचल हिमगिरि के हृदय में आज चाहे कम्प हो ले,
या प्रलय के आँसुओं में मौन अलसित व्योम रो ले,
आज पी आलोक को डोले तिमिर की घोर छाया
जाग या विद्युत्-शिखाओं में निठुर, तूफान बोले
पर तुझे है नाश-पथ पर चिह्न अपने छोड़ आना।

जाग तुझको दूर जाना !

बाँध लेंगे क्या तुझे ये मोम के बन्धन सजीले ?

पंथ की बांधा बनेंगे तितलियों के पर रँगिले ?

विश्व का क्रन्दन भुला देगी मधुप की मधुर गुनगुन
क्या डुबो देंगे तुझे ये फूल के दल ओस-गीले ?

तू न अपनी छाँह कते अपने लिए कारा बनाना !

जाग तुझको दूर जाना !

नोट

वज्र का उर एक छोटे अनुकण में धो गलाया,
 दे किसे जीवन सुधा दो घूँट मदिरा माँग लाया ?
 सो गयी आँधी मलय की वात का उपधान ले क्या ?
 विश्व का अभिशाप क्या चिर नींद बनकर पास आया ?
 अमरता-सुत चाहता क्यों मृत्यु को उर में बसाना !
 जाग तुझको दूर जाना !

कह न ठंडी सांस में अब भूल वह जलती कहानी
 आग हो उर में तभी दृग में सजेगा आज पानी
 हार भी तेरी बनेगी मानिनी जय की पताका ,
 रख क्षणिक पतंग की है अम्र दीपक की निशानी !
 है तुझे अंगार शैया पर मृदुल कलियां बिछाना !
 जाग तुझको दूर जाना !

संदर्भ-

प्रस्तुत कविता हिंदी की प्रसिद्ध कवयित्री **महादेवी वर्मा** द्वारा रचित है, जिसमें उन्होंने **मानव आत्मा को जागरण, आत्मबल, संघर्ष और लक्ष्य की ओर बढ़ने** का संदेश दिया है। यह कविता उनके आध्यात्मिक और भावनात्मक दर्शन का उदाहरण है, जो मानव चेतना को **मोह, आलस्य और भोग-विलास** से बाहर निकालकर उसे **कर्तव्यपथ पर अग्रसर** होने की प्रेरणा देती है।

प्रसंग-

महादेवी वर्मा इस कविता में व्यक्ति के भीतर छुपी चेतना को संबोधित करती हैं, जो **सोई हुई या भ्रमित** है। वे उसे जागने के लिए प्रेरित करती हैं क्योंकि जीवन का मार्ग लंबा और चुनौतीपूर्ण है। चाहे राह में कितनी भी **सुंदर या कष्टप्रद बाधाएँ** हों, व्यक्ति को उन्हें पार कर **अपने उद्देश्य की पूर्ति** के लिए आगे बढ़ते रहना चाहिए।

व्याख्या-

महादेवी वर्मा की यह कविता एक **आध्यात्मिक और प्रेरणात्मक आवाहन** है, जिसमें वे मानव आत्मा को जागने, सजग रहने और अपने जीवन-पथ पर बिना विचलित हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा देती हैं। यह कविता **संघर्ष, आत्मबोध, कर्तव्य और आत्म-निर्भरता** के भावों से ओत-प्रोत है।

महादेवी वर्मा कहती हैं कि हे आत्मा! तू सदा सजग रही है, फिर आज क्यों उनींदी सी हो गई है? जीवन की राह लंबी है और तुम्हें दूर तक चलना है, इसलिए तुझे नींद, मोह और आलस्य को त्यागकर जागना होगा। चाहे विश्व में विनाश की

चिह्न (पदचिन्ह) छोड़ते हुए आगे बढ़ना है।

से न भटक जाना। तुझे इन मोहक बंधनों को तोड़कर लक्ष्य की ओर अग्रसर रहना है।

और मोह का आलिंगन पसंद है? तू क्यों छोटी-छोटी इच्छाओं और सुखों के सामने अपने वज्र-समान हृदय को पिघला देती है? तू संसार के दुःखों से भागकर सोना चाहती है, पर यह तेरे अमर स्वरूप के विपरीत है। तुझे तो संघर्ष के मार्ग को अपनाना है, आलस्य को नहीं।

अंत में वे कहती हैं कि बीती बातों पर अब आह भरना छोड़ दे। यदि तेरे हृदय में अग्नि है, तभी तेरी आँखों के आँसू का मूल्य है। यदि तू हार भी जाता है, तो वह भी तेरे आत्मसम्मान की विजय का प्रतीक बन सकती है। तू दीपक की भांति अपने को जलाकर दूसरों को प्रकाशित कर। जीवन में चाहे अंगारों की शय्या मिले, तुझे वहाँ भी मृदुल (कोमल) भावों के फूल बिछाने हैं। इसीलिए – "जाग तुझको दूर जाना।"

सार-

"जाग तुझको दूर जाना" महादेवी वर्मा द्वारा रचित प्रेरणात्मक कविता है जो जीवन में संघर्ष, साहस, और आत्मबोध की आवश्यकता पर बल देती है। कवयित्री मानव को जागृत होकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने का आह्वान करती हैं। वह कहती हैं कि चाहे मार्ग में अंधकार, तूफान, मोह-माया या भावनात्मक बाधाएँ हों, फिर भी आत्मा को सजग रहकर आगे बढ़ना चाहिए। यह कविता आत्मबल, आत्मानुशासन और उच्च उद्देश्य की ओर अग्रसर होने का संदेश देती है।

2.4 हम अनिकेतन - बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

हम अनिकेतन
बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

हम अनिकेतन, हम अनिकेतन
हम तो रमते राम हमारा क्या घर ?
क्या दर ? कैसा वतन ?
हम अनिकेतन, हम अनिकेतन ।

नोट

अब तक इतनी यों ही काटी
अब क्या सीखें नव परिपाटी ?
कौन बनाये आज घरौंदा
हाथों चुन-चुन कंकड़ माटी
ठाठ फकीराना है अपना
बाधाम्बर सोहे अपने तन
हम अनिकेतन, हम अनिकेतन।

देखे महल झोंपड़े देख
देखे हास-विलास सब देखे
संग्रह के विग्रह सब देखे
जंचे नहीं कुछ अपने लेखे
लालच लगा, 'कभी पर हिय में
मच न सका शोणित उद्वेलन
हम अनिकेतन, हम अनिकेतन।

हम जो भटके अब तक दर-दर
अब क्या खाक बनाएँगे घर ?
हमने देखा, सदन बने हैं
लोगों का अपनापन लेकर
हम क्यों सने ईंट गारे में बेमन ?
हम अनिकेतन, हम अनिकेतन ।

ठहरे अगर किसी के दर पर
कुछ शरमाकर, कुछ सकुचाकर
यों दरबान कह उठा, बाबा
आगे जा देखो कोई घर,
हम दाता बनकर बिचरे, पर
हमें भिक्षु समझे, जग के जन।
हम अनिकेतन, हम अनिकेतन ।

सन्दर्भ -

प्रस्तुत कविता बी ए प्रथम वर्ष के पाठ्यक्रम से ली गई है इसके कवि बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' है। जिनका हिंदी साहित्य के दिवेदी युग के कवि है। हिंदी साहित्य के उच्च शीर्ष कवियों में से एक हैं। 'हिंदी साहित्य के महत्त्वपूर्ण कवियों में आपका स्थान है। हम अनिकेतन एक उत्कृष्ट रचना है,

नोट

प्रसंग- प्रस्तुत कविता में कवि स्वछंद और स्वतंत्र रूप से घूमने फिरने वालों को संबोधित करते हुए जीवन के महत्त्व का वर्णन करते हैं। यह कविता "हम अनिकेतन" एक अद्वितीय दर्शन को प्रस्तुत करती है, जो जीवन के बंधनों और स्थायित्व की अवधारणा से परे है। "अनिकेतन" का अर्थ होता है "जिसका कोई स्थायी निवास न हो", और यही विचार इस कविता की आत्मा है।

व्याख्या -

दार्शनिक और समाज-संवेदनशील दृष्टि को प्रस्तुत करती है। यहाँ "अनिकेतन" शब्द का अर्थ है – **जिसका कोई स्थायी निवास न हो**, अर्थात् वह व्यक्ति जो घर, स्थान, सीमाओं और भौतिक बंधनों से परे है।

कवि कहते हैं कि **हम अनिकेतन हैं**, हमारा कोई निश्चित घर, देश या ठिकाना नहीं है। हम तो **रमता योगी, फकीर, घुमक्कड़ आत्मा** हैं, जो हर जगह को अपना मानते हैं और किसी एक स्थान से बंधकर नहीं रहते।

वे कहते हैं कि हमने जीवन अब तक जैसे-तैसे बिताया है, अब **नई परंपराएं या व्यवस्था सीखने की जरूरत नहीं**। कोई हमसे यह अपेक्षा न करे कि हम अब हम तो चलते रहने वाले हैं।

कवि कहते हैं कि हमने दुनिया के **महल और झोंपड़ियाँ, ऐश्वर्य और विलास**, सब कुछ देखा है, लेकिन वह **हमारे मन को नहीं भाया**। लालच कभी आया तो भी **हमारी आत्मा को उद्वेलित नहीं कर सका**। भौतिक संग्रह, पद और प्रतिष्ठा हमें आकर्षित नहीं करते।

फिर वे कहते हैं कि जिन लोगों ने अपने घर बनाए हैं, वे दूसरों के **स्नेह, अपनत्व और विश्वास को चुराकर** बनाते हैं। हमें न तो ईंट-गारे से घर बनाना है, न ही ऐसा "घर" चाहिए जो दूसरों के दुःख पर खड़ा हो। इसलिए हम उस निर्माण में

कवि बताते हैं कि जब हम किसी घर के द्वार पर पहुँचे तो **सदियों की सेवा और दान के बावजूद** हमें वहाँ **भिक्षुक समझा गया** और अपमानित किया गया। हमने **दुनिया को दिया, लेकिन दुनिया ने हमें सिर्फ उपेक्षा दी**। फिर भी हम

सार - आस्थायित्व को स्वीकार करते हुए कवि खुद को एक ऐसे यात्री के रूप में देखता है जो किसी एक स्थान, घर या वतन से बंधा नहीं है। वह कहते हैं, **"हम तो रमते राम, हमारा क्या घर?"** यानी जीवन एक यात्रा है, न कि किसी एक जगह रुकने का नाम। सादगी और फकीराना ठाठ की इस बात पर कवि गर्व महसूस

करता है कि उसके पास भौतिक संपत्ति या आलंकारिक आवरण नहीं है, फिर भी उसका जीवन संपन्न है-“ठाठ फकीराना है अपना, बाधाम्बर सोहे अपने तन।” कवि कहते हैं कि हम घुमक्कड़ जीवन जीने वाले रमते जोगी हैं। अतः न कोई घर है न कोई देश। हमने अब तक अपना जीवन यूँ ही घुमते घुमते निकाल दिया अब शेष बचे हुए जीवन का तरीका हम क्या सीख पायेंगे। हमें अलग से अपने हाथों से मिट्टी, कंकड़ चुनकर घंरौन्दा बनाने की जरूरत महसूस नहीं होती। हमारा जीवन साधुओं के समान संसार से विरक्त हो गया है।

मूल्य और भौतिकता के द्वंद्व- कविता में संग्रह की प्रवृत्ति, लालच और भौतिक सुखों को अस्वीकार किया गया है। कवि कहता है कि उसने महल और झोंपड़े, विलास और संघर्ष सब देखे, लेकिन कभी उनसे आकर्षित नहीं हुआ।

अस्वीकार और आत्मसम्मान- जब समाज भौतिकता के आधार पर लोगों को मापता है, कवि खुद को उन सीमाओं से ऊपर पाता है। “हम दाता बनकर बिचरे, पर हमें भिक्षु समझे जग के जन।” यह पंक्ति दर्शाती है कि लोग बाहरी दिखावे को देखकर ही मूल्यांकन करते हैं, जबकि सच्ची समृद्धि भीतर होती है।

शैली और सौंदर्य- कविता में एक सहज प्रवाह है, जिसमें सरल शब्दों के माध्यम से गहरी दार्शनिकता को पिरोया गया है। हर पंक्ति में एक आत्मनिर्भरता और स्वतंत्रता की गूँज सुनाई देती है।

यह रचना उस व्यक्ति के विचारों को उजागर करती है, जो जीवन की अनंत यात्रा में खुद को खोजने में विश्वास रखता है, न कि भौतिक घरों और सीमाओं में बंधने में।

2.5 स्वतंत्रता पुकारती - जयशंकर प्रसाद

स्वतंत्रता पुकारती - जयशंकर प्रसाद

हिमाद्रि तुंग शृंग से

प्रबुद्ध शुद्ध भारती।

स्वयंप्रभा समुज्ज्वला

स्वतंत्रता पुकारती।

‘अमर्त्य वीर पुत्र हो

दृढ़-प्रतिज्ञा सोच लो,

प्रशस्त पुण्य पंथ है,

बढ़े चलो, बढ़े चलो!’

असंख्य कीर्ति-रश्मियाँ

विकीर्ण दिव्य दाह-सी,

सपूत मातृभूमि के,

नोट

रुको न शूर साहसी!
 अराति सैन्य-सिंधु में
 सुभारद्वाग्नि-से जलो,
 प्रवीर हो, जयी बनो-
 बढ़े चलो, बढ़े चलो!

सन्दर्भ - यह पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित प्रेरणादायक कविता "स्वतंत्रता पुकारती" से ली गई हैं। यह कविता भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय लिखी गई, जब देश गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था। यह रचना **देशभक्ति, आत्मबल, त्याग और वीरता** का आह्वान करती है।

प्रसंग - इस कविता के माध्यम से कवि मातृभूमि की ओर से युवाओं को पुकार कर रहा है। वह कहता है कि भारत माता अब **चुप नहीं है, वह जाग चुकी है**, मार्ग पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित कर रही है। कवि **युवाओं से स्वतंत्रता के लिए जागने और लड़ने का आह्वान** कर रहे हैं।

व्याख्या -

कवि कहता है कि भारत माता, जो हिमालय के ऊँचे शिखरों पर विराजमान है, **प्रबुद्ध और शुद्ध चेतना का प्रतीक** बन चुकी है। वह अब अपनी **स्वप्रभा (स्वयं)** है।"

वीरों! यह समय **दृढ़ संकल्प और आत्मबल** का है।" यह एक **पुण्य मार्ग** है, जिसमें चलकर ही तुम अपने जीवन को सार्थक बना सकते हो। इसलिए **बिना रुके, बिना झुके, आगे बढ़ो!**

कवि आगे कहता है कि मातृभूमि के असंख्य **बलिदानों की कीर्ति की रश्मियाँ** (किरणें) दिव्य अग्निशिखा-सी चमक रही हैं। भारत के सच्चे सपूतों को चाहिए कि वे इन रश्मियों को अपनाएँ और वीरता के साथ आगे बढ़ें।

देश के सामने असुरों (अरातियों) की विशाल सेना है, लेकिन युवाओं को चाहिए कि वे **उस सागर को जला डालें**, जैसे कोई महावीर अग्नि बनकर प्रकट हो। मार्ग है।

मुख्य संदेश -

मातृभूमि की पुकार सुनो।

स्वतंत्रता एक पवित्र धर्म है, इसमें रुकना या डरना नहीं है।

वीरता, त्याग और संघर्ष से ही **विजय और सम्मान** मिलता है।

युवाओं को अपने कर्तव्य का स्मरण कराते हुए **निरंतर आगे बढ़ने** की प्रेरणा मिलती है।

सार -

कवि कहते हैं कि हिमालय की सबसे ऊँची चोटी से आज जागृत और अत्यंत पवित्र मनोभावों से ओत-प्रोत भारतमाता अपने बेटों को पुकार रही हैं। गुलामी के लंबे दौर की पीड़ा और यातना से व्यथित भारतमाता को अपने युवा बेटों से स्वतंत्रता की आशा है। वे हिमालय की सर्वोच्च चोटी पर खड़ी होकर पुकार रही हैं ताकि उनकी आवाज़ पूरे देश में गूँज सके।

स्वयं के तेज से प्रकाशित, समग्र चेतना और प्रकाश से भरपूर स्वतंत्रता की मूर्ति भारतमाता अपने वीर युवाओं को पुकार रही हैं। आज भारतमाता अपने बेटों से कह रही हैं कि तुम अमर शहीदों के वीर संतानों के वंशज हो, इसलिए तुम्हें अपने भीतर किसी भी प्रकार का भय नहीं पालना चाहिए। तुम अपने मन में यह दृढ़ प्रतिज्ञा कर लो कि तुम्हें हर हाल में स्वाधीनता के लक्ष्य को प्राप्त करना है।

स्वाधीनता प्राप्ति का मार्ग अत्यंत श्रेष्ठ और पवित्र है, इसलिए मन में किसी प्रकार की शंका या दुविधा न रखो। इस उदात्त विचार के साथ, हे मेरे भारत के वीरों! तुम अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बस आगे बढ़ते चलो, निरंतर आगे बढ़ते चलो।

इन पंक्तियों में कवि स्वाधीनता आंदोलन में संघर्षरत युवाओं का उत्साहवर्धन करते हुए उन्हें साहस और दृढ़ता के साथ आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। कवि कहते हैं-

"हे वीरों! मातृभूमि की स्वतंत्रता के मार्ग पर निर्भय होकर आगे बढ़ो। जिस पथ पर तुम अग्रसर हो, उस पर यशरूपी अनगिनत किरणें अग्नि की विशिष्ट ज्वाला की भाँति फैली हुई हैं। इसका तात्पर्य है कि देश की आज़ादी की लड़ाई में भाग लेने पर तुम्हारे वीरता और पराक्रम की गाथा दूर-दूर तक गाई जाएगी। यह तुम्हारे मन में नये उत्साह का संचार करेगी।

इसलिए, हे भारतमाता के श्रेष्ठ पुत्रों! तुम कभी भी घबराकर रुकना मत। तुम भारतमाता के वीर और साहसी पुत्र हो। तुम्हें शत्रु की सागर-समान विशाल सेना में बड़वाग्नि (समुद्री अग्नि) की तरह धधकते हुए प्रवेश करना है। जैसे समुद्री आग अपने भीतर जलते हुए विशाल समुद्र को भी भस्म कर देती है, उसी प्रकार तुम्हें शत्रु सेना के भीतर घुसकर उन्हें पराजित करना है।

कविता के माध्यम से कवि भारत के वीर युवकों को कहते हैं—
"हे वीर योद्धाओं! मातृभूमि की स्वतंत्रता के इस महान संग्राम में विजयी बनने के लिए आगे बढ़ते चलो, निरंतर आगे बढ़ते चलो।"

योग्यता संवर्धन

नोट



गतिविधि 2.1

"क्या आप कवयित्री महादेवी वर्मा की इस बात से सहमत हैं कि जीवन-पथ पर सच्चा साथी कोई बाहरी व्यक्ति नहीं, बल्कि आत्मबल और निष्ठा होती है? अपने जीवन के किसी अनुभव या उदाहरण के माध्यम से उत्तर दीजिए।"

निर्देश-

उत्तर 80-100 शब्दों में लिखें।

- अपने विचारों में कविता के संदेश को जोड़ें।
- यदि संभव हो तो एक प्रेरक उदाहरण या अनुभव साझा करें।

☒ अपनी प्रगति जांचें 2.1

1. सही विकल्प चुने -

(i) जयशंकर प्रसाद के अनुसार स्वतंत्रता किसकी गोद में पलती है?

- | | |
|---------------------------|-------------|
| A. दया की | B. दासता की |
| C. वीरता की ⁷⁴ | D. प्रेम की |

(ii) 'स्वतंत्रता पुकारती' में कवि का स्वर कैसा है?

- | | |
|---------------------------|---------------|
| A. करुणामय | B. आलोचनात्मक |
| C. ओजपूर्ण और प्रेरणात्मक | D. चिंतनशील |

(iii) कवि के अनुसार किस भाव से स्वतंत्रता नहीं मिल सकती?

- | | |
|----------|-----------|
| A. शक्ति | B. प्रेम |
| C. करुणा | D. बलिदान |

2. सही-गलत -

- (i) कवि ने स्वतंत्रता को याचक की तरह चित्रित किया है।
- (ii) जयशंकर प्रसाद स्वतंत्रता को वीरों की धरोहर मानते हैं।
- (iii) इस कविता में केवल करुणा की महिमा का वर्णन किया गया है।

3. रिक्त स्थान भरिए -

- (i) स्वतंत्रता _____ की गोद में पलती है।
- (ii) कवि ने स्वतंत्रता को _____ देवी कहा है।
- (iii) केवल _____ से स्वतंत्रता नहीं मिल सकती।

नोट

4. मिलान कीजिए (Match the Following) -

स्तंभ A	स्तंभ B
(a) स्वतंत्रता	(i) वीरों की गोद में पलती है
(b) करुणा	(ii) केवल इससे स्वतंत्रता नहीं मिलती
(c) जयशंकर प्रसाद	(iii) 'स्वतंत्रता पुकारती' के रचयिता

2.6 सारांश

"मानव चेतना और स्वतंत्रता का स्वर" शीर्षक के अंतर्गत प्रस्तुत रचनाएँ मानव जीवन में जागरूकता, आत्मबल और स्वतंत्रता की गूंज को स्वर देती हैं। ये कविताएँ केवल बाह्य स्वतंत्रता की नहीं, बल्कि **आंतरिक चेतना, आत्मनिर्भरता और उत्तरदायित्वपूर्ण स्वतंत्रता** की बात करती हैं।

महादेवी वर्मा की कविता 'जाग तुझको दूर जाना है' आत्मजागरण और कर्मशीलता का आह्वान करती है, जहाँ मनुष्य को बिना थके, बिना रुके अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहने की प्रेरणा मिलती है। **जयशंकर प्रसाद** की 'स्वतंत्रता पुकारती' कविता में स्वतंत्रता को एक देवी के रूप में चित्रित किया गया है, जो समर्पण, बलिदान और त्याग की भावना से ओतप्रोत है। वहीं **बालकृष्ण शर्मा नवीन** की 'हम अनिकेतन' कविता में मनुष्य को सतत यात्री बताया गया है, जो घर-बार के बंधनों से ऊपर उठकर मानवता के व्यापक उद्देश्य के लिए जीवन समर्पित करता है।

इन तीनों रचनाओं के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि **सच्ची स्वतंत्रता वही है जो मनुष्य को चेतन, कर्मठ, निडर और उत्तरदायी बनाती है**। यह स्वर व्यक्ति को अपने भीतर झाँकने, जगाने और समाज के लिए कुछ कर गुजरने की प्रेरणा देता है।

2.7 शब्दावली

क्रमांक	शब्द	अर्थ
1	चेतना	जागरूकता, समझ
2	अनिकेतन	जिसका कोई स्थायी घर न हो
3	पुकारती	आवाज़ देती, बुलाती
4	स्वतंत्रता	आज़ादी, बंधनों से मुक्ति
5	प्रण	दृढ़ संकल्प, व्रत
6	तपस्या	कठोर साधना या आत्मसंयम
7	त्याग	किसी चीज़ का परित्याग करना
8	अंधकार	अज्ञानता या अज्ञान का प्रतीक

9	रथ	वाहन, यहाँ संघर्ष का प्रतीक
10	पंथ	रास्ता, मार्ग
11	कर्मशील	लगातार कार्य करने वाला
12	जाग	उठ, सचेत हो
13	बलिदान	अपनी प्रिय वस्तु का त्याग
14	निष्ठा	ईमानदारी, सच्ची लगन
15	मोह	माया, आकर्षण या आसक्ति

2.8 अपनी प्रगति जांचे - संभावित उत्तर

अपनी प्रगति जांचे 2.1

1. सही विकल्प चुने -

- (i) C
- (ii) C
- (iii) C

2. सही - गलत -

- (i) गलत
- (ii) सही
- (iii) गलत

3. रिक्त स्थान भरिए -

- (i) वीरता
- (ii) वंदनीया
- (iii) करुणा

4. मिलान कीजिए -

- (a) → (i)
- (b) → (ii)
- (c) → (iii)

2.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) -1	http://books.aisectonline.com/User/UnitUrIs?unitId=8	

2.10 संदर्भ

- महादेवी वर्मा – संग्रह - " यामा", "नीरजा", "दीपशिखा"
- जयशंकर प्रसाद – संग्रह - " कामायनी", "आँसू", "झरना"
- बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' – संग्रह - " कड़ियाँ "और" नवीन ज्योति"
- आधुनिक हिंदी कविता का इतिहास – डॉ .रामविलास शर्मा
- हिंदी कविता का विकास – डॉ .नागेन्द्र
- भारतीय काव्यशास्त्र और स्वतंत्रता संग्राम की चेतना – डॉ .नामवर सिंह
- राष्ट्रीय चेतना और हिंदी साहित्य – डॉ .विश्वनाथ त्रिपाठी
- हिंदी कविता - स्वातंत्र्य आंदोलन और आत्मचेतना – डॉ .चंद्रकांत बांदिवडेकर
- साहित्य सौरभ – संपादक - डॉ .ब्रजकिशोर वर्मा

2.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ) –

1. 'जाग तुझको दूर जाना है' कविता में नींद किसका प्रतीक है?
A. उत्साह का
B. आलस्य और जड़ता का
C. क्रांति का
D. प्रेम का
2. 'हम अनिकेतन' कविता में कवि किसके समान जीवन को जीने की प्रेरणा देता है?
A. पर्वत के
B. नदी के
C. बादल के
D. सूर्य के
3. 'स्वतंत्रता पुकारती' कविता का प्रमुख रस कौन-सा है?
A. शृंगार
B. शांत
C. वीर
D. हास्य
4. 'हम अनिकेतन' कविता में 'अनिकेतन' का शाब्दिक अर्थ क्या है?
A. सजग
B. निराश
C. घरहीन
D. एक स्थान पर रहने वाला
5. महादेवी वर्मा किस काव्य-धारा से संबंधित थीं?
A. छायावाद
B. प्रगतिवाद
C. रहस्यवाद
D. यथार्थवाद

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

1. **B) आलस्य और जड़ता का** - नींद यहाँ निष्क्रियता, ठहराव और भीतर के जड़ भाव का प्रतीक है।
2. **C) बादल के** - बादल गतिशीलता और परिवर्तन का प्रतीक है, जिससे जीवन को निरंतर बहते रहने की प्रेरणा मिलती है।
3. **C) वीर** - कविता में स्वतंत्रता के लिए जागरूकता, संघर्ष और बलिदान की वीर भावना प्रकट की गई है।
4. **C) घरहीन** - 'अनिकेतन' का अर्थ है — जिसका कोई स्थायी घर न हो, यानी निरंतर चलायमान।
5. **A) छायावाद** - महादेवी वर्मा हिंदी के छायावादी युग की प्रमुख कवयित्री थीं।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. 'जाग तुझको दूर जाना है' कविता में रात्रि किस प्रतीक के रूप में चित्रित की गई है और उसका क्या आशय है?
2. 'हम अनिकेतन' कविता में बादल को जीवन का प्रतीक क्यों माना गया है?
3. 'स्वतंत्रता पुकारती' कविता के अनुसार स्वतंत्रता प्राप्त करने का मार्ग सरल क्यों नहीं है?
4. महादेवी वर्मा को हिंदी साहित्य में कौन-सी उपाधि से सम्मानित किया गया है और क्यों?
5. कवि ने 'हम अनिकेतन' कविता में जीवन को गतिशीलता से जोड़ते हुए किस दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है?

Part - 2

C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. 'जाग तुझको दूर जाना है' कविता में प्रयुक्त प्रतीकों — 'नींद' और 'यात्रा' — के माध्यम से महादेवी वर्मा किस प्रकार आत्मचेतना और कर्तव्यबोध का संदेश देती हैं?
2. 'हम अनिकेतन' कविता में जीवन को गतिशीलता और स्वतंत्रता से जोड़ने वाले विचारों को स्पष्ट कीजिए। यह दृष्टिकोण वर्तमान समय में युवाओं के लिए किस प्रकार प्रासंगिक है?

Part – 3

नोट

D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. जयशंकर प्रसाद की कविता 'स्वतंत्रता पुकारती' में स्वतंत्रता प्राप्ति की प्रक्रिया को लेकर किस प्रकार की चेतना और बलिदान की भावना व्यक्त की गई है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
2. 'जाग तुझको दूर जाना है', 'हम अनिकेतन' और 'स्वतंत्रता पुकारती' — इन तीनों कविताओं में प्रयुक्त प्रतीकों की तुलना कीजिए और यह स्पष्ट करें कि वे आत्मबोध, संघर्ष और सामाजिक जागरूकता को किस प्रकार व्यक्त करते हैं?
3. 'हम अनिकेतन' और 'जाग तुझको दूर जाना है' — दोनों कविताएँ जीवन की अस्थिरता, संघर्ष और निरंतरता का किस प्रकार आह्वान करती हैं? इनकी विचारधारा समकालीन जीवन पर क्या प्रभाव डालती है?
4. हिंदी कविता के संदर्भ में स्पष्ट करें कि किस प्रकार काव्य प्रतीक और भाव व्यक्ति को आत्मविश्लेषण, प्रेरणा और सामाजिक उत्तरदायित्व के लिए तैयार करते हैं?



आईसेक्ट विश्वविद्यालय समूह

एस. एल. एम. प्रतिक्रिया प्रपत्र (फीडबैक फॉर्म)

कार्यक्रम : _____
पाठ्यक्रम : _____
ब्लॉक : _____
इकाई : _____

प्रिय छात्र,

इस खंड की इकाइयों का अध्ययन करते समय, आपको पाठ के कुछ हिस्सों को समझने में कठिनाई हो सकती है। हम पाठ्यक्रम को बेहतर बनाने के लिए आपकी कठिनाइयों और सुझावों को जानना चाहते हैं। इसलिए, हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप इस ब्लॉक से संबंधित निम्नलिखित प्रश्नावली को भरकर हमें भेजें। यदि आपको दिया गया स्थान अपर्याप्त लगता है, तो कृपया एक अलग शीट का उपयोग करें।

कृपया मेल करें aisectcontent@aisect.org / ऑनलाइन फॉर्म भरने के लिए QR को स्कैन करें :

प्रश्नावली

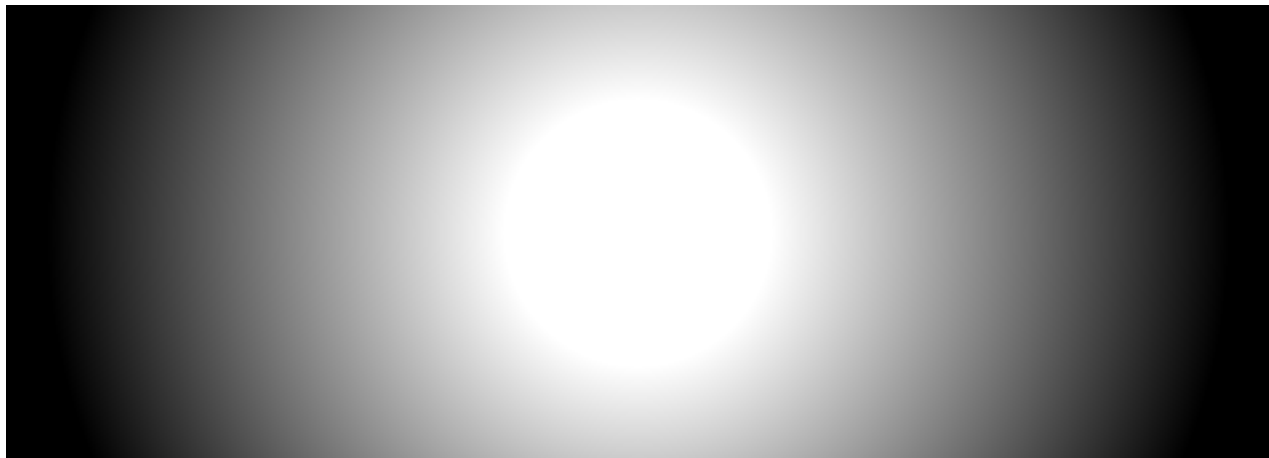
- नाम : _____
- नामांकन क्र :

--	--	--	--	--	--	--	--	--	--	--
- इकाईयों का अध्ययन करने के लिये आपको कितने घंटों की आवश्यकता थी? :
- कृपया इस ब्लॉक को पढ़ने के आधार पर निम्नलिखित मदों पर अपनी प्रतिक्रिया दें:

अवयव	उत्कृष्ट	बहुत अच्छा	अच्छा	खराब	विशिष्ट उदाहरण दें (यदि खराब हो)
प्रस्तुति गुणवत्ता					
भाषा और शैली					
रेखांकन					
प्रयुक्त (आरेख, तालिकाएं, आदि)					
संकल्पनात्मक स्पष्टता					
अपनी प्रगति जाँचें प्रश्न					
सुझाए गए पठन – OER					

5. अन्य सुझाव :

खंड - 2	हिंदी साहित्य, अनुवाद और शब्द-संपदा	39-96
इकाई - 3	मानव मूल्य और सामाजिक चेतना	41
इकाई - 4	अनुवाद और शब्दविज्ञान - भाषा की व्यावहारिक दृष्टि	67



हिं

दी साहित्य केवल मनोरंजन या लेखकीय कला का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना, मानवीय करुणा और विचारधारा का प्रतिबिंब है। इस खंड में विद्यार्थियों को साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से मानव मूल्यों और सामाजिक जिम्मेदारी का बोध कराया जाएगा। साहित्य में निहित करुणा, सहानुभूति, त्याग, समन्वय और सहिष्णुता जैसी संवेदनाओं को गहराई से समझने का अवसर मिलेगा। रामचंद्र शुक्ल, दिनकर, बटरोही जैसे साहित्यकारों की कालजयी रचनाएं विद्यार्थियों को जीवन दृष्टि और सामाजिक जागरूकता की ओर प्रेरित करेंगी। इस खंड में अनुवाद की भूमिका और उसकी प्रक्रिया का भी विश्लेषण किया गया है। अनुवाद मात्र भाषाई परिवर्तन नहीं है, बल्कि यह दो संस्कृतियों, विचारधाराओं और ज्ञान परंपराओं को जोड़ने का सेतु है। इसके अतिरिक्त हिंदी की समृद्ध शब्द-संपदा, तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों की पहचान, निर्माण और प्रयोग को भी विद्यार्थियों को सिखाया जाएगा। पारिभाषिक शब्दावली की आवश्यकता, निर्माण प्रक्रिया और हिंदी भाषा में उसके योगदान को सरल एवं व्यावहारिक उदाहरणों के माध्यम से समझाया जाएगा।

इकाई – 3

मानव मूल्य और सामाजिक चेतना

नोट

इकाई की रूपरेखा

- 3.1 परिचय
- 3.2 उद्देश्य
- 3.3 'करुणा' – आचार्य रामचंद्र शुक्ल
- 3.4 'समन्वय की प्रक्रिया' – रामधारी सिंह दिनकर
- 3.6 सारांश
- 3.7 शब्दावली
- 3.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर
- 3.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER
- 3.10 संदर्भ
- 3.11 अभ्यास

3.1 परिचय

"मानव मूल्य और सामाजिक चेतना" शीर्षक के अंतर्गत ऐसे साहित्यिक निबंधों और कहानियों को प्रस्तुत किया गया है जो मनुष्य की **आंतरिक संवेदनाओं**, **नैतिक मूल्यों** और **समाज के प्रति उसके दायित्वों** को उजागर करते हैं। इस खंड में तीन प्रमुख रचनाएँ सम्मिलित हैं -

'करुणा' – आचार्य रामचंद्र शुक्ल

'समन्वय की प्रक्रिया' – रामधारी सिंह दिनकर

'बिच्छी बुआ' – डॉ. लक्ष्मण विष्ट 'बटरोही'

इन रचनाओं के माध्यम से यह बताया गया है कि **सच्चे मानव जीवन का आधार केवल बौद्धिक विकास नहीं, बल्कि करुणा, सहिष्णुता, समन्वय और मानवीय संवेदनाएं हैं**, जो व्यक्ति को एक सजग, संवेदनशील और जिम्मेदार नागरिक बनाती हैं।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का निबंध 'करुणा' मानव हृदय में बसे उस भाव को स्पष्ट करता है जो दूसरों के दुःख को अनुभव करने और सहायता करने की प्रेरणा देता है। यह मनुष्यता का मूल भाव है।

नोट

विविधता में एकता, सहिष्णुता और विचारों के मेल को रेखांकित करती है। यह समाज में संतुलन और एकता की आवश्यकता को दर्शाती है।

वृद्ध महिला के माध्यम से सामाजिक व्यवहार, पारिवारिक उपेक्षा और भावनात्मक संवेदनाओं को चित्रित करते हैं। यह कहानी मानवीय संबंधों की गहराई और बदलते सामाजिक मूल्यों पर प्रश्नचिह्न भी उठाती है।

इस प्रकार, यह खंड विद्यार्थियों को न केवल साहित्यिक दृष्टि से समृद्ध करता है, बल्कि उन्हें मानवता, करुणा, समन्वय और सामाजिक चेतना जैसे मूल्यों को अपनाने की प्रेरणा भी देता है।

3.2 उद्देश्य

- करुणा, समन्वय, सहिष्णुता, संवेदना, और मानवीयता जैसे गुणों को समझना और जीवन में अपनाना।
- समाज के प्रति उत्तरदायित्व, पारिवारिक संबंधों की अहमियत, और सामूहिक जीवन के महत्व को पहचानना।
- निबंध और कहानी जैसी विधाओं के माध्यम से विद्यार्थियों में नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों का विकास करना।
- समन्वय, सह-अस्तित्व और विविधता में एकता जैसे विचारों को आत्मसात करना।
- वर्तमान सामाजिक परिवेश की विसंगतियों पर सोचने को प्रेरित करना।
- साहित्य के माध्यम से संवेदनशील और जागरूक नागरिक बनाना।
- साहित्यिक रचनाओं के माध्यम से विद्यार्थियों की सोचने, समझने और व्यक्त करने की क्षमता बढ़ाना।

3.3 'करुणा' - आचार्य रामचंद्र शुक्ल

करुणा - (आचार्य रामचंद्र शुक्ल) निबंध का वाचन

जब बच्चे को संबन्ध ज्ञान कुछ-कुछ होने लगता है तभी दुःख के उस भेद की नींव पड़ जाती है जिसे करुणा करते हैं। बच्चा पहले यह देखता है कि जैसे हम हैं वैसे ही ये और प्राणी भी हैं और बिना किसी विवेचना क्रम के स्वाभाविक प्रवृत्ति द्वारा वह अपने अनुभवों का आरोप दूसरे प्राणियों पर करता है। फिर कार्य कारण संबंध से अभ्यस्त होने पर दूसरों के दुःख के कारण या कार्य को देखे उनके दुःख का अनुमान करता है और स्वयं एक प्रकार का दुःख अनुभव करता है। प्रायः देखा जाता है कि जब माँ झूठमूठ ऊँ ऊँ करके रोने लगती है तब

नोट

कोई-कोई बच्चे भी रो पड़ते हैं। इसी प्रकार जब उसके किसी भी भाई या बहन को कोई मारने उठता है तब वे कुछ चंचल हो उठते हैं। दुःख की श्रेणी में प्रवृत्ति के विचार से करुणा का उल्टा क्रोध है। क्रोध जिसके प्रति उत्पन्न होता है उसकी हानि की चेष्टा की जाती है। करुणा जिसके प्रति उत्पन्न होता है उसकी भलाई का उद्योग किया जाता है। किसी पर प्रसन्न होकर भी लोग उसकी भलाई करते हैं। इस प्रकार पात्र की भलाई की उत्तेजना दुःख और आनंद दोनों ही श्रेणियों में रखी गई है। आनंद की श्रेणी में ऐसा कोई शुद्ध मनोविकार नहीं है जो पात्र की हानि की उत्तेजना करें, पर दुःख की श्रेणी में ऐसा मनोविकार है जो पात्र की भलाई की उत्तेजना करता है। लोभ से, जिसे मैंने आनंद की श्रेणी में रखा है चाहे कभी-कभी और व्यक्तियों या वस्तुओं की हानि पहुँच जाए पर जिसे जिस व्यक्ति या वस्तु का लाभ होगा, उसकी हानि वह कभी न करेगा। लोभी महमूद ने सोमनाथ को तोड़ा पर भीतर से जो जवाहरात निकले उनको खूब संभाल कर रखा। नूरजहाँ के रूप में लोभी जहाँगीर ने शेर अफगान को मरवाया पर नूरजहाँ को बड़े चैन से रखा।

ऊपर कहा जा चुका है कि मनुष्य ज्यों ही समाज में प्रवेश करता है उसके सुख और दुःख का बहुत सा अंश दूसरे की क्रिया या अवस्था पर अवलंबित हो जाता है और उसकी मनोविकारों के प्रवाह तथा जीवन के विस्तार के लिए अधिक सहायक हो जाता है। यह दूसरों के दुःख से दुखी और दूसरों के सुख से सुखी होने लगता है। अब देखना यह है कि दूसरों के दुःख से दुखी होने का नियम जितना व्यापक है क्या उतना ही दूसरों के सुख से सुखी होने का भी। मैं समझता हूँ, नहीं। हम अज्ञात कुल, शील, मनुष्य के दुःख को देखकर भी दुखी होते हैं। किसी दुखी मनुष्य को सामने देख हम अपना दुखी होना तब तक के लिए बंद नहीं रखते जब तक कि यह मालूम न हो जाए कि यह कौन है कहाँ रहता है और कैसा है, यह और बात है कि जिसे पीड़ा पहुँच रही है उसने कोई भारी अपराध का अत्याचार किया है हमारी दया दर कम हो जाए। ऐसे अवसर पर हमारे ध्यान दया के सामने वह अपराध या अत्याचार आ जाता है और उस अपराधी या अत्याचारी का वर्तमान कलेश हमने क्रोध की तुष्टि का साधक हो जाता है।

सारांश यह है कि करुणा की प्राप्ति के लिए पात्र में दुःख के अतिरिक्त और किसी विशेषता की अपेक्षा नहीं। पर आनंदित हम ऐसे आदमी के सुख को देखकर होते हैं जो या तो हमारा सहृदय या संबंध हो अथवा अत्यंत सज्जन, शीलवान या चरित्रवान होने के कारण समाज का मित्र या हितकारी हो। यों ही किसी अज्ञात व्यक्ति का लाभ या कल्याण सुनने से हमारे हृदय में किसी प्रकार के आनंद का उदय नहीं होता। इससे प्रकट है कि दूसरों के दुःख से दुखी होने का नियम बहुत व्यापक है और दूसरी के सुख से सुखी होने का नियम उसकी अपेक्षा परिमित है। इसके अतिरिक्त दूसरों को सुखी देखकर आनंद होता है उसका न तो कोई अलग नाम रखा गया है और न उनमें वेग वा प्रेरणा होती है।

नोट

पर दूसरों के दुःख के परिज्ञान से जो दुःख होता है वह करुणा, दया आदि नामों से पुकारा जाता है और अपने कारण को दूर करने की उत्तेजना करता है।

जबकि अज्ञात व्यक्ति के दुःख पर दया बराबर उत्पन्न होती है तब जिसके साथ हमारा अधिक संसर्ग होता है जिसके गुणों से हम अच्छी तरह परिचित रहते हैं जिसका रूप हमें भला मालूम होता है उसके उतने ही दुःख पर हमें अवश्य अधिक करुणा होगी। किसी भोली-माली सुंदरी रमणी को, किसी सचरित्र परोपकारी महात्मा को, किसी अपने भाई भाई बंधु को दुःख में देख हमें अधिक व्याकुलता होगी। करुणा की तीव्रता का सापेक्ष विधान जीवन निर्वाह की सुगमता और कार्य विभाग की पूर्णता के बद्देश्य से समझना चाहिए।

मनुष्य की प्रकृति में शील और सात्विकता का आदि संस्थापक यही मनोविकार है। मनुष्य की सज्जनता या दुर्जनता अन्य प्राणियों के साथ उसके संबंध या संसर्ग द्वारा ही व्यक्त होती है। यदि कोई मनुष्य जन्म से ही किसी निर्जन स्थान में अपना निर्वाह करे तो उसका कोई कर्म सज्जनता या दुर्जनता की कोटि में न आएगा। उसके सब कर्म निर्लिप्त होंगे। संसार में प्रत्येक प्राणी के जीवन का उद्देश्य दुःख की निर्मिति और सुख की प्राप्ति है। अतः सब के उद्देश्यों को एक साथ जोड़ने से संसार का उद्देश्य सुख की स्थापना और दुःख का निराकरण हुआ। अतः जिन कर्मों से संसार के इस उद्देश्य के साधन हों वे उत्तम हैं। प्रत्येक प्राणी के लिए उससे भिन्न प्राणी संसार है। जिन कर्मों से दूसरे के वास्तविक सुख का साधन और दुःख की निवृत्ति हो वे शुभ और सात्विक हैं तथा जिस अंतःकरण-वृत्ति से इन कर्मों में प्रवृत्ति हो वह सात्विक है। कृपा या अनुग्रह से भी दूसरों के सुख की योजना की जाती है, पर एक तो कृपा या अनुग्रह में आत्मभाव छिपा रहता है और उसकी प्रेरणा से पहुँचाया हुआ सुख एक प्रकार का प्रतिकार है। दूसरी बात यह है कि नवीन सुख की योजना की अपेक्षा प्राप्त दुःख की निवृत्ति की आवश्यकता अत्यंत अधिक है। दूसरे के उपस्थित दुःख से उत्पन्न दुःख का अनुभव अपने तीव्रता के कारण मनोविकारों में माना जाता है पर अपने भावी आचरण द्वारा दूसरे के संभावित दुःख का ध्यान या अनुमान, जिसके द्वारा हम ऐसी बातों से बचते हैं जिनसे अकारण दूसरे को दुःख पहुँचे, शील या साधारण सद्भाव के अंतर्गत समझा जाता है। बोलचाल की भाषा में तो शील शब्द से चित की कोमलता का ही भाव समझा जाता है, उनकी आँखों में शील नहीं है, शील तोड़ना अच्छा नहीं। दूसरों का दुःख दूर करना और दूसरों को दुःख पहुँचाना दोनों बातों का निर्वाह करने वाला नियमन पालने का दोषी हो सकता है पर, दुःखशीलता या दुर्भाव का नहीं। ऐसा मनुष्य झूठ बोल सकता है, पर ऐसा नहीं जिससे किसी का कोई काम बिगड़े या जी दुखे। यदि वह किसी अवसर पर बड़ों की कोई बात नहीं मानेगा तो इसलिए कि वह उसे ठीक नहीं जँचती या वह उसके अनुकूल चलने में असमर्थ है इसलिए नहीं कि बड़ों का अकारण जी दुखें।

मेरे विचार में तो सदा सत्य बोलना, बड़ों का कहना मानना आदि नियम के अंतर्गत है शील या सद्भाव के अंतर्गत नहीं। झूठ बोलने से बहुधा बड़े बड़े अनर्थ हो जाते हैं इसी से उसका अभ्यास रोकने के लिए यह नियम कर दिया गया कि किसी अवस्था में झूठ बोला ही न जाए। पर मनोरंजन, खुशामद और शिष्टाचार आदि के बहाने संसार में बहुत सा झूठ बोला जाता है जिसपर कोई समाज कुपित नहीं होता। किसी-किसी अवस्था में तो धर्म ग्रंथों में झूठ बोलने की इजाजत तक दे दी गई है, विशेषतः जब इस नियम भंग द्वारा अंतःकरण की कोई किसी उच्च और उदारवृत्ति का साधन होता हो।

यदि किसी के झूठ बोलने से कोई निरपराध और निस्सहाय व्यक्ति अनुचित दंड से । बच जाए तो ऐसा झूठ बोलना बुरा नहीं बतलाया गया है क्योंकि नियम शील या सद्भाव का साधन है, समकक्ष नहीं। मनोवेग वर्जित सदाचार दंभ या झूठी कवायद है। मनुष्य के अंतःकरण में सात्विकता की ज्योति जगाने वाली यही करुणा है। इसी से जैन और बौद्ध धर्म में इसको बड़ी प्रधानता दी गई है और गोस्वामी तुलसीदास ने भी कहा है -

परहित सरिस धर्म नहीं भाई।

पर-पीड़ा सम नहीं अधमाई ॥

पर-पीड़ा सम नहीं अधमाई ॥ यह बात स्थिर और निर्विवाद है कि श्रद्धा का विषय किसी न किसी रूप में सात्विक शील ही होता है। अतः करुणा और सात्विकता का संबंध इस बात से और भी सिद्ध होता है कि किसी पुरुष को दूसरे पर करुणा करते देख तीसरे को करुणा करने वालों पर श्रद्धा उत्पन्न होती है। किसी प्राणी में और किसी मनोवेग को देख श्रद्धा नहीं उत्पन्न होती। किसी को क्रोध, ईर्ष्या भय, घृणा आनंद आदि करते देख लोग उस पर श्रद्धा नहीं कर बैठते हैं। क्रिया में तत्पर करने वाली प्राणियों की आदि अंतःकरण वृत्ति मन या मनोवेग है। अतः इन मनोवेगों में से जो श्रद्धा का विषय हो वही सात्विकता का आदि संस्थापक ठहरा (दूसरी बात यह भी ध्यान देने की है कि मनुष्य के आचरण के प्रवर्तक भाव या मनोविकार ही होते हैं, बुद्धि नहीं। बुद्धि दो वस्तुओं के रूपों को अलग अलग दिखा देगी, यह मनुष्य के मन के वेग या प्रवृत्ति पर है कि वह उनमें से किसी एक को चुनकर कार्य में प्रवृत्त हो। यदि विचार कर देखा जाए तो स्मृति, अनुमान, बुद्धि आदि अंतःकरण की सारी वृत्तियाँ केवल मनोवेगों की सहायक है, वे भाव या मनोवेगों के लिए उपयुक्त विषय मात्र ढूँढती है। मनुष्य की प्रवृत्ति पर भाव को और भावना को तीव्र करने वाले कवियों का प्रभाव प्रकट ही है।

प्रिय के वियोग से जो दुःख होता है उसमें कभी-कभी दया या करुणा का भी कुछ अंश मिला रहता है। ऊपर कहा जा चुका है कि करुणा का विषय दूसरे का दुःख है। अतः प्रिय के वियोग में इस विषय की भावना किस प्रकार होती है,

नोट

यह देखना है। प्रत्यक्ष निश्चय कराता है और परोक्ष अनिश्चय में डालता है। प्रिय व्यक्ति के सामने रहने से उसके सुख का जो निश्चय होता रहता है, वह उससे दूर होने से अनिश्चय में परिवर्तित हो जाता है। अतः प्रिय के वियोग पर उत्पन्न करुणा का विषय प्रिय के सुख का निश्चय है। जो करुणा हमें साधारण जनो के वास्तविक दुख के परिज्ञान से होती है, वहीं करुणा हमें परिजनों के सुख के अनिश्चय मात्र से होती है। साधारण जनों का तो हमें दुख असह्य होता है, पर प्रियजनों के सुख का अनिश्चय ही। अनिश्चित बात पर सुखी या दुखी होना ज्ञान-वादियों के निकट अज्ञान है, इसी से इस प्रकार के दुख या करुणा को किसी-किसी प्रांतिक भाषा में मोह भी कहते हैं। सारांश यह है कि प्रिय के वियोग जनित दुख में जो करुणा का अंश रहता है उसका भी शायद प्रिय के सुख का अनिश्चय है। राम जानकी के वन चले जाने पर कौशल्या उनके सुख के अनिश्चय पर इस प्रकार दुखी होती है -

बन को निकल गए दोउ भाई।

सावन गरजे भादो बरसे पवन चले पुरवाई।

कौन विरिछ तर भीजत होइहैं राम लखन दोउ भाई। (गीत)

प्रेम को यह विश्वास कभी नहीं होता कि उसके प्रिय के सुख का ध्यान जितना वह रखता है उतना संसार में और भी कोई रख सकता है। श्रीकृष्ण गोकुल से मथुरा चले गए जहाँ सब प्रकार का सुख वैभव था; पर यशोदा इसी सोच में मरती रहती रहीं कि -

प्रात समय उठ माखन रोटी को बिन मांगे दैहैं

को मेरे बालक कुँवर कान्ह को छिन छिन आगे लेहैं

और उद्धव से कहती हैं

संदेशों देवकी सों कहियो।

हाँ तो धाय तिहारे सुत की, मया करत ही रहियो॥

जदपि टेब तुम जानति उनही, तऊ मोहिं कहि आवै।

प्रात होत मेरे लाल लड़ैतै, माखन रोटी भावै॥

उबटन, तेल और तातों जल देखत ही भजि जाते।

जोई जोई माँगत सोई सोई देती क्रम-क्रम करके न्हाते ॥

'सूर' पथिक सुनि मोहि रैन दिन, बढ्यौ रहत उर सोच।

मेरो अलक लड़ैतै मोहन वेहे करत सकोच ॥

वियोग की दशा में गहरे प्रेमियों को प्रिय के सुख का अनिश्चय ही नहीं कभी-कभी घोर अनिष्ट की आशंका तक होती है, जैसे एक पति वियोगिनी स्त्री संदेह करती है कि -

नदी किनारे धुआँ उठत हे, मै जानू कछु होय।

जिसके कारण मैं जली, वही न जलता होय ॥

नोट

शुद्ध वियोग का दुःख केवल प्रिय के अलग हो जाने की भावना से उत्पन्न क्षोभ या विषाद है, ही जिसमें प्रिय के दुःख या कष्ट आदि की कोई भावना नहीं रहती।

जिस व्यक्ति से किसी की घनिष्ठता और प्रीति होती है वह उसके जीवन के बहुत से व्यापारों तथा मनोवृत्तियों का आधार होता है। उसके जीवन का बहुत सा अंश उसी के संबंध द्वारा व्यक्त होता है। मनुष्य अपने लिए संसार आप बनाता है। संसार तो कहने सुनने के लिए है, वास्तव में किसी मनुष्य का संसार तो वे ही लोग हैं जिनसे उसका संसर्ग या व्यवहार है। अतः ऐसे लोगों में से किसी का दूर होना उसके संसार के एक प्रधान अंश का कट जाना या जीवन के एक अंग का खंडित हो जाना है। किसी प्रिय या सहृदय के चिरवियोग या मृत्यु के शोक के साथ करुणा या दया का भाव मिलकर चित को बहुत व्याकुल करता है। किसी के मरने पर उसके प्राणी उसके साथ किए हुए अन्याय या कु व्यवहार, तथा उसकी इच्छा पूर्ति करने में अपने त्रुटियों का स्मरण कर और यह सोच कर की उसकी आत्मा को संतुष्ट करने की संभावना सब दिन के लिए जाती रहें, बहुत अधीर और विकल होते हैं।

सामाजिक जीवन की स्थिति और पुष्टि के लिए करुणा का प्रसार आवश्यक है। समाजशास्त्र के पश्चिम ग्रंथकार का कहना है कि समाज में एक दूसरे की सहायता अपनी-अपनी रक्षा के विचार से की जाती है। यदि ध्यान से देखा जाए तो कर्म क्षेत्र में परस्पर सहायता की सी उतेजना देने वाली किसी न किसी रूप में करुणा ही दिखाई देगी। मेरा यह कहना नहीं कि परस्पर की सहायता का परिणाम प्रत्येक का कल्याण नहीं है। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि संसार में एक दूसरे की सहायता विवेचना द्वारा निश्चित इस प्रकार के दूरस्थ परिणाम पर दृष्टि रखकर नहीं की जाती, बल्कि मन की स्वतः प्रवृत्त करनेवाली प्रेरणा से की जाती है। दूसरे की सहायता करने से अपनी रक्षा की भी संभावना है, इस बात या उद्देश्य का ध्यान प्रत्येक विशेष कर सच्चे, सहायक को तो नहीं रहता। ऐसे विस्तृत उद्देश्यों को ध्यान तो विश्वात्मा स्वयं रखती है; वह उसे प्राणियों की बुद्धि ऐसी चंचल और मुंडे-मुंडे भिन्न वस्तु के भरोसे नहीं छोड़ती। किस युग में और किस प्रकार मनुष्यों ने समाज रक्षा के लिए एक दूसरे की सहायता करने की गोष्ठी की होगी, यह समाजशास्त्र के बहुत से वक्ता लोग ही जानते होंगे। यही परस्पर सहायता की प्रवृत्ति पुरखों की उस पुरानी पंचायत ही के कारण होती और यदि उसका उद्देश्य वहीं तक होता जहाँ तक समाजशास्त्र के वक्ता बतलाते हैं तो हमारी दया मोटे, मुस्टंडे और समर्थ लोगों पर जितनी होती उतनी दीन, अशक्त लोगों पर नहीं, जिनसे समाज को उतना लाभ नहीं। पर इसका बिल्कुल उल्टा देखने में आता है। दुखी व्यक्ति जितना ही अधिक असहाय और असमर्थ होगा उतनी ही अधिक उसके प्रति हमारी करुणा होगी। एक अनाथ अबला को मार खाते देख हमें जितनी करुणा होगी उतनी एक सिपाही या पहलवान को पीटते देख नहीं। इससे स्पष्ट है कि परस्पर सहायता के जो व्यापक उद्देश्य है उनका धारण करने वाला मनुष्य का छोटा सा अंतःकरण नहीं, विश्वात्मा है।

योग्यता संवर्धन

नोट

दूसरों के, विशेषतः अपने परिचितों के, थोड़े क्लेश या शोक पर जो वेग रहित दुःख होता है उसे सहानुभूति कहते हैं। शिष्टाचार में इस शब्द का प्रयोग इतना अधिक होने लगा है कि यह निकम्मा सा हो गया है। अब प्रायः इस शब्द से हृदय का कोई सच्चा भाव नहीं समझा जाता है। सहानुभूति के तार, सहानुभूति की चिट्ठियाँ लोग यूँ ही भेजा करते हैं यह छद्म- शिष्टता के मनुष्य के व्यवहार क्षेत्र से सच्चाई के अंश को क्रमशः चरती जा रही करुणा अपना बीज अपने आलंबन या पात्र में नहीं फेंकती है, अर्थात् जिसपर करुणा की जाती है वह बदले में करुणा करने वाले पर भी करुणा नहीं करता जैसा कि क्रोध और प्रेम में होता है बल्कि कृतज्ञ होता अथवा श्रद्धा या प्रीति करता है। बहुत सा औपन्यासिक कथाओं में यह बात दिखाई गई है कि युवतियाँ दुष्टों के हाथ से अपना उद्धार करने वाले युवकों के प्रेम में फँस गई हैं। कोमल भावों की योजना में दक्ष बंगला के उपन्यास लेखक करुणा और प्रीति के मेल से बड़े ही प्रभावोत्पादक दृश्य उपस्थित करते हैं।

मनुष्य के प्रत्यक्ष ज्ञान में देश और काल की परिमिति अत्यंत संकुचित होती है मनुष्य जिस वस्तु को जिस समय और जिस स्थान पर देखता है उसकी उसी समय और स्थान की अवस्था का अनुभव उसे होता है पर स्मृति अनुमान या दूसरों से प्राप्त ज्ञान के सहारे मनुष्य का ज्ञान इस परिणीति को लाँघता हुआ अपना देश काल संबंधी विस्तार बढ़ाता है। प्रस्तुत विषय के सम्बन्ध में उपयुक्त भाव प्राप्त करने के लिए यह विचार कभी-कभी आवश्यक होता है।

मनोविकारों की उपयुक्तता कभी-कभी इस विस्तार पर निर्भर रहती है। किसी मार खाते हुए अपराधी के विलाप पर हमें दया आती है, पर जब हम सुनते हैं कि कई स्थानों पर कई बार वह बड़े-बड़े अपराध कर चुका है, इससे आगे भी ऐसे ही अत्याचार करेगा, तो हमें अपनी दया की अनुपयुक्तता मालूम हो जाती है। ऊपर कहा जा चुका है कि स्मृति और अनुमान आदि भावों या मनोविकारों के केवल सहायक है अर्थात् प्रकारांतर से वे उनके लिए उपस्थित करते हैं। वे कभी तो अपने से आप विषयों को मन के सामने लाते हैं; कभी किसी विषय के सामने आने पर उससे संबंध (पूर्वापर वा कार्य कारण संबंध) रखने वाले और बहुत से विषय उपस्थित करते हैं जो कभी तो सब के सब एक ही भाव के विषय होते हैं और उस प्रत्यक्ष विषय से उत्पन्न भाव को तीव्र करते हैं, कभी भिन्न-भिन्न भावों के विषय होकर प्रत्यक्ष विषय होकर प्रत्यक्ष विषय से उत्पन्न भावों को परिवर्तित या धीमा करते हैं कि मनोवेग या भावों को मंद या दूर करने वाली, स्मृति, अनुमान या बुद्धि आदि कोई दूसरी अंतःकरण वृद्धि नहीं है, मन का दूसरा भाव या वेग ही है।

मनुष्य की सजीवता मनोवेग या प्रवृत्ति भावों की तत्परता में, है। नीतिज्ञों और धार्मिकों का मनोविकारों को दूर करने का उपदेश घोर पाखंड है। इस विषय में

नोट

कवियों का प्रत्यक्ष ही सच्चा है जो मनोविकारों पर शान ही नहीं चढ़ाते बल्कि उन्हें परिमार्जित करते हुए सृष्टि के पदार्थों के साथ उनके उपयुक्त संबंध निर्वाह पर जोर देते हैं। यदि मनोवेग न हो तो स्मृति, अनुमान, बुद्धि आदि के रहते हुए भी मनुष्य बिलकुल जड़ है प्रचलित सभ्यता और जीवन की कठिनता से मनुष्य अपने इन मनोवेगों को मारने और अशक्त करने पर विवश होता है, इनका पूर्ण और सच्चा निर्वाह उसके लिए कठिन होता जाता है और इस प्रकार उसके जीवन का स्वाद निकल जाता है। वन, नदी, पर्वत आदि को देख आनंदित होने के लिए अब उसके हृदय में उतनी जगह नहीं। दुराचार पर उसे क्रोध या घृणा होती है पर झूठे शिष्टाचार के अनुसार उसे दुराचारी की भी मुँह पर प्रशंसा करनी पड़ती है।

जीवन निर्वाह की कठिनता से उत्पन्न यह बात स्थिर और निर्विवाद है कि श्रद्धा का विषय किसी न किसी रूप में सात्विक शील ही होता है। अतः करुणा और सात्विकता का संबंध इस बात से और भी सिद्ध होता है कि किसी पुरुष को दूसरे पर करुणा करते देख तीसरे को करुणा करने वालों पर श्रद्धा उत्पन्न होती है। किसी प्राणी में और किसी मनोवेग को देख श्रद्धा नहीं उत्पन्न होती। किसी को क्रोध, ईर्ष्या भय, घृणा आनंद आदि करते देख लोग उस पर श्रद्धा नहीं कर बैठते हैं। क्रिया में तत्पर करने वाली प्राणियों की आदि अंतःकरण वृत्ति मन या मनोवेग है। अतः इन मनोवेगों में से जो श्रद्धा का स्वार्थ की शुष्क प्रेरणा के कारण उसे दूसरे के दुःख की ओर ध्यान देने, उस पर दया करने और उसके दुःख की वृत्ति का सुख प्राप्त करने की फुर्सत नहीं। इस प्रकार मनुष्य हृदय को दबाकर केवल क्रूर आवश्यकताओं और कृत्रिम नियमों के अनुसार ही चलने पर विवश और कठपुतली सा जड़ होता जाता है। उसकी भावुकता का नाश होता जाता है पाखंडी लोग मनोवेगों का सच्चा निर्वाह न देख, हताश को मुँह बनाकर कहने लगे हैं करुणा छोड़ो प्रेम छोड़ो, आनंद छोड़ो। बस हाथ, पैर हिलाओ, काम करो।"

यह ठीक है कि मनोवेग उत्पन्न होना और बात है और मनोवेग के अनुसार व्यवहार करना और बात पर अनुसारी परिणाम के निरंतर अभाव से मनोवेगों का अभ्यास भी घटने लगता है। । कोई मनुष्य आवश्यकता बस कोई निष्ठुर कार्य अपने ऊपर ले तो पहले दो चार बार उसे दया उत्पन्न होगी; पर जब बार-बार दया की प्रेरणा के अनुसार कोई परिणाम वह उपस्थित न कर सकेगा तब धीरे-धीरे उसका अभ्यास कम होने लगेगा। यहाँ तक कि उसकी दया की वृत्ति ही मारी जाएगी।

निबंध "करुणा" का सार-

करुणा एक महत्वपूर्ण मानवीय भावना है, जो हमें दूसरों के दुःख और कष्टों को समझने और उनका निवारण करने के लिए प्रेरित करती है। यह एक ऐसी भावना है, जो हमें दूसरों के प्रति सहानुभूति और मदद का जज्बा देती है। जब हम किसी दूसरे व्यक्ति की पीड़ा को महसूस करते हैं, तो हमारे दिल में उनके लिए

नोट

दया और सहायता का अहसास होता है। करुणा केवल शब्दों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह हमें अपने कर्मों के माध्यम से भी दूसरों के दुखों को कम करने के लिए प्रेरित करती है।

निबंध में यह बताया गया है कि करुणा और क्रोध में एक बड़ा अंतर है। जहाँ क्रोध दूसरों को हानि पहुँचाता है और समाज में घृणा फैलाता है, वहीं करुणा हमें दूसरों के प्रति स्नेह और मदद का दृष्टिकोण प्रदान करती है। करुणा से समाज में प्रेम, भाईचारा और सहयोग की भावना मजबूत होती है, जो सामाजिक समरसता को बढ़ावा देती है।

लेखक ने यह भी कहा है कि करुणा का अभ्यास हमें मानसिक शांति और आत्मसंतोष प्रदान करता है। जब हम दूसरों की मदद करते हैं, तो हमें भी आंतरिक खुशी मिलती है। इस प्रकार, करुणा केवल दूसरों के दुःख को कम करने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह एक श्रेष्ठ इंसान बनने का भी मार्ग है।

अंततः, करुणा का समाज में महत्वपूर्ण स्थान है, और हमें इसे अपने जीवन में अपनाना चाहिए।

निबंध "करुणा" की संदर्भ सहित व्याख्या-

"करुणा" पर आधारित यह निबंध एक गहरे मानवीय और सामाजिक दृष्टिकोण से लिखा गया है, जो हमें दूसरों के दुख-दर्द को समझने और उनके प्रति सहानुभूति प्रकट करने की प्रेरणा देता है। निबंध का संदर्भ यह है कि करुणा केवल एक भावनात्मक प्रतिक्रिया नहीं है, बल्कि यह एक सकारात्मक सामाजिक शक्ति भी है, जो समाज में प्रेम, सहयोग और सामूहिकता को बढ़ावा देती है।

लेखक ने इस निबंध में करुणा की महत्वता को रेखांकित किया है, यह बताते हुए कि जब हम किसी व्यक्ति की पीड़ा को महसूस करते हैं, तो स्वाभाविक रूप से हमारे मन में उसे कम करने की इच्छा उत्पन्न होती है। करुणा का यह रूप न केवल मानवता का प्रतीक है, बल्कि यह समाज के भीतर सकारात्मक परिवर्तन लाने की क्षमता रखता है। इसके माध्यम से हम न केवल दूसरों की मदद करते हैं, बल्कि अपनी आंतरिक शांति और संतोष भी प्राप्त करते हैं।

निबंध में लेखक ने यह भी स्पष्ट किया है कि करुणा और क्रोध में बड़ा अंतर होता है। क्रोध न केवल हिंसा और असहमति को जन्म देता है, बल्कि यह समाज में नफरत और द्वंद्व भी पैदा करता है। इसके विपरीत, करुणा हमें समझ, सहानुभूति और सहयोग की ओर प्रवृत्त करती है, जिससे समाज में सामूहिकता और भाईचारा बढ़ता है।

संदर्भ में, लेखक का संदेश यह है कि यदि हम अपने जीवन में करुणा का अभ्यास करें, तो यह हमें न केवल दूसरों की मदद करने के योग्य बनाएगा, बल्कि आत्मिक संतोष और शांति भी देगा। समाज में करुणा के अभ्यास से प्रेम और

सहयोग की भावना मजबूत होती है, जो समाज के भीतर एकता और समरसता को बढ़ावा देती है।

निबंध "करुणा" की अंतर्वस्तु-

इस निबंध की अंतर्वस्तु करुणा की गहरी भावना और इसके समाज में होने वाले सकारात्मक प्रभावों पर केंद्रित है। लेखक ने करुणा को एक उच्च मानवीय गुण के रूप में प्रस्तुत किया है, जो न केवल व्यक्तिगत, बल्कि सामाजिक जीवन में भी अत्यधिक महत्व रखता है।

निबंध में करुणा की परिभाषा दी गई है, जिसमें इसे दूसरों के दुख-दर्द को समझने और उनकी मदद करने की प्रवृत्ति के रूप में समझाया गया है। लेखक ने यह बताया है कि करुणा केवल भावनाओं तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह एक सक्रिय और सकारात्मक क्रिया में बदलती है, जब हम दूसरों की पीड़ा को महसूस करते हैं और उसे कम करने का प्रयास करते हैं।

इसके बाद, निबंध में यह स्पष्ट किया गया है कि करुणा और क्रोध के बीच एक बड़ा अंतर होता है। जहां क्रोध समाज में अशांति और विभाजन उत्पन्न करता है, वहीं करुणा समाज में भाईचारा, प्रेम और सहानुभूति की भावना को बढ़ाती है। करुणा का अभ्यास न केवल दूसरों के लिए मददगार होता है, बल्कि यह हमारे अपने मानसिक शांति और संतोष का भी कारण बनता है।

लेखक ने यह भी बताया है कि करुणा समाज में एकता, सहयोग और समरसता को बढ़ावा देती है, जो समाज के विकास और व्यक्तिगत संतुलन के लिए आवश्यक है।

इस प्रकार, निबंध का उद्देश्य करुणा के महत्व को उजागर करना और यह दिखाना है कि यह मानव जीवन और समाज को कितना बेहतर बना सकती है।

लेखकीय व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति-

लेखकीय व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का अर्थ है लेखक के विचार, दृष्टिकोण और उसकी सोच को शब्दों के माध्यम से व्यक्त करना। यह व्यक्तित्व लेखक की शैली, भाषा, सोच, और उसकी समाज या जीवन के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है। एक लेखक का व्यक्तित्व उसके लेखन में उसकी आंतरिक दुनिया और बाहरी वास्तविकताओं के प्रति उसकी संवेदनशीलता को परिलक्षित करता है।

विचारों की गहराई - लेखक अपने लेखन के माध्यम से अपनी सोच और दृष्टिकोण को व्यक्त करता है। इसके द्वारा लेखक यह दिखाता है कि वह अपने समाज, मानवता, जीवन या किसी विशिष्ट विषय के बारे में क्या सोचता है। उदाहरण के लिए, अगर लेखक समाज की असमानताओं के बारे में लिखता है, तो उसके लेखन में यह व्यक्तित्व नज़र आता है कि वह उन मुद्दों के प्रति संवेदनशील है और उन्हें सुधारने का इच्छुक है।

नोट

भाषा और शैली - लेखक का व्यक्तित्व उसकी भाषा और शैली से भी प्रकट होता है। कुछ लेखक सटीक और साधारण भाषा का उपयोग करते हैं, जबकि अन्य लेखक जटिल और शास्त्रीय भाषा का इस्तेमाल करते हैं। इसका सीधा संबंध लेखक के व्यक्तित्व से है, क्योंकि भाषा के चयन से उसके मानसिक स्तर, शिक्षा, और सोच के तरीके का पता चलता है।

समान्यताएँ और विचारधाराएँ - लेखकीय व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति लेखक की विचारधारा से भी जुड़ी होती है। क्या वह प्रगतिवादी है, या फिर पारंपरिक दृष्टिकोण अपनाता है? क्या वह किसी विशेष विचारधारा के पक्षधर हैं, जैसे समाजवाद, नैतिकता, या धार्मिक विश्वास? ये सब लेखक के व्यक्तित्व के तत्व हैं, जो उसके लेखन में स्पष्ट रूप से दिखते हैं।

सहानुभूति और संवेदनशीलता - एक लेखक का व्यक्तित्व उसकी सहानुभूति और संवेदनशीलता में भी प्रकट होता है। किसी भी समाजिक समस्या या मानवीय पीड़ा पर लिखते समय लेखक की संवेदनशीलता और दूसरों के प्रति करुणा उसके व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण भाग बन जाती है।

संक्षेप में, लेखकीय व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति केवल लेखक के शब्दों तक सीमित नहीं होती, बल्कि यह उसकी सोच, उसकी शैली, उसकी विचारधारा और उसके समाज के प्रति दृष्टिकोण में भी दर्शित होती है।

3.4 'समन्वय की प्रक्रिया' - रामधारी सिंह दिनकर

समन्वय की प्रक्रिया - रामधारी सिंह 'दिनकर' का परिचय

समन्वय मानव समाज की सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जो विविधताओं के बीच सामंजस्य स्थापित कर उन्हें एकता के सूत्र में पिरोती है। यह न केवल समाज और संस्कृति में बल्कि व्यक्तिगत, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी अनिवार्य है। रामधारी सिंह 'दिनकर' जैसे महान कवि और विचारक ने "समन्वय की प्रक्रिया" के महत्व को उजागर करते हुए इसे समाज, संस्कृति और मानवता के विकास के लिए आवश्यक बताया है। उनका मानना था कि विभिन्न धर्मों, संस्कृतियों और विचारधाराओं के बीच तालमेल से ही शांति और प्रगति संभव है।

भारतीय संस्कृति में समन्वय का विशेष महत्व है। यह संस्कृति अपनी विविधताओं के लिए जानी जाती है, लेकिन इन विविधताओं के बावजूद एकता और सामूहिकता बनाए रखना इसका सबसे बड़ा गुण है। रामधारी सिंह 'दिनकर' ने इस निबंध में समन्वय को न केवल भारतीय समाज के लिए बल्कि पूरी मानवता के लिए अनिवार्य बताया है।

समन्वय का अर्थ और इसकी व्यापकता

समन्वय का अर्थ है विभिन्न विचारधाराओं, परंपराओं और तत्वों के बीच तालमेल बनाकर उन्हें एकीकृत करना। यह केवल सहिष्णुता नहीं है, बल्कि एक रचनात्मक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से समाज के सभी घटकों के बीच संवाद और संतुलन

परिवार से लेकर समाज, धर्म, राजनीति और वैश्विक स्तर तक।

जब समाज में विविध विचारधाराएँ और परंपराएँ टकराती हैं, तो संघर्ष और विघटन की संभावना बढ़ जाती है। ऐसे में समन्वय वह माध्यम बनता है, जो मतभेदों को समाप्त कर शांति और स्थायित्व की स्थापना करता है। यह प्रक्रिया न केवल समाज में एकता बनाए रखने में सहायक होती है, बल्कि नई ऊर्जा और विचारों का भी संचार करती है।

भारतीय संस्कृति में समन्वय का महत्व

भारतीय संस्कृति का इतिहास समन्वय की अनगिनत मिसालों से भरा पड़ा है। यह वह भूमि है, जहाँ विविध धर्म, जातियाँ और भाषाएँ सह-अस्तित्व के सिद्धांत पर आधारित रही हैं। प्राचीन भारत में आर्यों और द्रविड़ों के मेल से सांस्कृतिक समृद्धि का उदय हुआ। वैदिक धर्म, बौद्ध धर्म और जैन धर्म के बीच समन्वय ने भारतीय दर्शन को गहराई और व्यापकता प्रदान की।

मुगल काल में इस्लामी और हिंदू परंपराओं के सम्मिश्रण से एक समन्वयवादी संस्कृति का विकास हुआ, जिसे गंगा-जमुनी तहज़ीब कहा जाता है। इसी प्रकार, ब्रिटिश उपनिवेशवाद के दौर में भारतीय समाज ने पश्चिमी विचारधाराओं को आत्मसात करते हुए उन्हें अपनी परंपराओं के साथ जोड़ा। रामधारी सिंह 'दिनकर' ने इस तथ्य को रेखांकित किया है कि भारतीय संस्कृति का यह समन्वयवादी स्वभाव ही इसे विश्व में अद्वितीय बनाता है।

समाज और राजनीति में समन्वय की आवश्यकता

समाज और राजनीति में समन्वय की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण है। आधुनिक समाज में वर्ग, जाति, धर्म और क्षेत्रीयता के आधार पर अनेक प्रकार के विभाजन हैं। ऐसे में समन्वय की प्रक्रिया समाज के विभिन्न वर्गों को जोड़ने और उनके बीच आपसी समझ विकसित करने का माध्यम बनती है।

राजनीति में भी समन्वय का महत्व निर्विवाद है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में विभिन्न विचारधाराओं और दलों के बीच संवाद और सामंजस्य आवश्यक है। यदि राजनीति में समन्वय की कमी हो, तो शासन में अराजकता और अस्थिरता का खतरा बढ़ जाता है। रामधारी सिंह 'दिनकर' ने राजनीति में समन्वय को एक ऐसा माध्यम बताया है, जिससे समाज में संतुलन और न्याय सुनिश्चित किया जा सकता है।

आध्यात्मिक और धार्मिक क्षेत्र में समन्वय

धर्म और अध्यात्म के क्षेत्र में समन्वय की प्रक्रिया विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इतिहास गवाह है कि धार्मिक संघर्ष समाज के लिए विनाशकारी रहे हैं। ऐसे में समन्वय विभिन्न धर्मों के बीच आपसी समझ और सह-अस्तित्व को प्रोत्साहित करता है।

नोट

भारत में हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, जैन, बौद्ध आदि धर्मों का सह-अस्तित्व समन्वय का ही परिणाम है। महात्मा गांधी ने भी विभिन्न धर्मों के बीच समन्वय को बढ़ावा देने पर बल दिया और इसे भारतीय समाज की स्थिरता का आधार बताया। दिनकर ने भी धर्म को एक ऐसी शक्ति माना, जो समन्वय के माध्यम से समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सकती है।

वैश्विक स्तर पर समन्वय की आवश्यकता

आज का युग वैश्वीकरण का है, जहाँ समन्वय की प्रक्रिया की आवश्यकता अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर और भी बढ़ गई है। विभिन्न देशों और संस्कृतियों के बीच संवाद और सहयोग से ही विश्व शांति और समृद्धि संभव है।

विश्व युद्धों, सांप्रदायिकता और आतंकवाद ने यह सिद्ध किया है कि यदि समन्वय की भावना कमजोर हो, तो समाज और राष्ट्र विनाश की ओर बढ़ जाते हैं। समन्वय का अभाव राष्ट्रों के बीच आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक असंतुलन को जन्म देता है। इसलिए, वैश्विक परिप्रेक्ष्य में समन्वय केवल एक विकल्प नहीं, बल्कि अनिवार्यता बन गया है।

समन्वय की प्रक्रिया में चुनौतियाँ

हालाँकि समन्वय की प्रक्रिया आदर्श है, इसे लागू करना आसान नहीं है। समाज में व्यक्तिगत स्वार्थ, संकीर्ण विचारधाराएँ और सांप्रदायिकता जैसी बाधाएँ समन्वय को कठिन बनाती हैं।

राजनीतिक और धार्मिक कट्टरता, जातीय भेदभाव, और सांस्कृतिक टकराव के कारण समन्वय की राह में रुकावटें आती हैं। ऐसे में, रामधारी सिंह 'दिनकर' का यह दृष्टिकोण प्रासंगिक है कि समन्वय के लिए सभी पक्षों में संवाद और सहमति की भावना विकसित करना आवश्यक है।

समन्वय की प्रक्रिया- संदर्भ सहित व्याख्या

रामधारी सिंह 'दिनकर' भारतीय साहित्य के उन महान चिंतकों में से एक हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं में सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक समस्याओं पर गहन विचार प्रस्तुत किए। उनके निबंध "समन्वय की प्रक्रिया" में समाज और संस्कृति में समन्वय की आवश्यकता, उसका महत्व और उसकी व्यापकता का विश्लेषण मिलता है। यह निबंध भारतीय समाज के संदर्भ में लिखा गया है, लेकिन इसका महत्व सार्वभौमिक है। आइए इस निबंध की संदर्भ सहित व्याख्या करें।

संदर्भ

भारत, अपनी सांस्कृतिक विविधता और परंपराओं के लिए विश्व में विशेष स्थान रखता है। यहाँ अनेक धर्म, भाषाएँ और परंपराएँ सह-अस्तित्व की भावना के साथ फल-फूल रही हैं। भारतीय समाज में समन्वय की आवश्यकता प्राचीन काल से ही रही है। आर्य-द्रविड़ सभ्यताओं के मेल से लेकर आधुनिक वैश्वीकरण तक,

भारतीय संस्कृति ने विविधताओं में सामंजस्य स्थापित कर अपनी पहचान बनाई है।

रामधारी सिंह 'दिनकर' ने "समन्वय की प्रक्रिया" के माध्यम से इस तथ्य को रेखांकित किया है कि भारतीय संस्कृति की शक्ति विविधताओं को आत्मसात करने और एकीकृत करने की क्षमता में निहित है।

व्याख्या

1. समन्वय का अर्थ और आवश्यकता

'समन्वय' का अर्थ है विविधताओं के बीच संतुलन और सामंजस्य स्थापित करना। दिनकर इसे केवल सहिष्णुता या सह-अस्तित्व तक सीमित नहीं मानते, बल्कि इसे एक सक्रिय और रचनात्मक प्रक्रिया मानते हैं। उनके अनुसार, समन्वय का अर्थ है विरोधी विचारों, परंपराओं और संस्कृतियों को एक साझा मंच पर लाकर एक नए और सामंजस्यपूर्ण दृष्टिकोण का निर्माण करना।

समाज में समन्वय- आधुनिक समाज में वर्ग, जाति, धर्म और क्षेत्रीयता के कारण विभाजन की स्थिति बनी रहती है। ऐसे में समन्वय समाज के विभिन्न वर्गों के बीच आपसी समझ और शांति स्थापित करता है।

राजनीति में समन्वय- लोकतंत्र में विभिन्न विचारधाराओं और समूहों के बीच संवाद और सहयोग आवश्यक है। समन्वय के बिना राजनीति में अस्थिरता और अराजकता का खतरा बढ़ जाता है।

2. भारतीय संस्कृति में समन्वय

दिनकर ने भारतीय संस्कृति को समन्वय का आदर्श उदाहरण बताया है। भारत में आरंभ से ही विभिन्न धर्मों, जातियों और भाषाओं के बीच संवाद और सामंजस्य की परंपरा रही है।

प्राचीन काल- आर्य और द्रविड़ सभ्यताओं का सम्मिलन, वैदिक और बौद्ध धर्म के बीच संवाद, और जैन धर्म का उद्भव यह दर्शाता है कि भारतीय समाज ने विभिन्न विचारधाराओं को आत्मसात किया।

मध्यकाल- मुगल काल में इस्लामी और हिंदू परंपराओं के मेल ने गंगा-जमुनी तहज़ीब का निर्माण किया।

आधुनिक काल- ब्रिटिश शासन के दौरान पश्चिमी विचारधारा का भारतीय परंपराओं के साथ समन्वय हुआ।

दिनकर ने इसे भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी ताकत बताया है, जो विविधताओं को एक सूत्र में बाँधती है।

3. वैश्विक संदर्भ में समन्वय

दिनकर का दृष्टिकोण केवल भारतीय समाज तक सीमित नहीं है। उन्होंने इसे वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भी लागू किया।

नोट

वैश्वीकरण और सांस्कृतिक संवाद- आज के युग में, जब दुनिया एक 'ग्लोबल विलेज' बन गई है, विभिन्न संस्कृतियों और समाजों के बीच समन्वय और संवाद की आवश्यकता बढ़ गई है।

विश्व शांति- दो विश्व युद्धों और शीत युद्ध के दौर ने यह सिद्ध किया है कि यदि समन्वय न हो, तो मानवता विनाश के कगार पर पहुँच सकती है। दिनकर ने यह माना कि समन्वय ही विश्व शांति का मार्ग है।

4. समन्वय की चुनौतियाँ

हालाँकि समन्वय की प्रक्रिया आदर्श है, लेकिन इसे लागू करना आसान नहीं है।

सांप्रदायिकता और कट्टरता- धार्मिक और सांप्रदायिक कट्टरता समन्वय के सबसे बड़े दुश्मन हैं।

जातीय और क्षेत्रीय विवाद- जाति और क्षेत्रीयता के आधार पर समाज में भेदभाव और संघर्ष उत्पन्न होते हैं।

राजनीतिक स्वार्थ- राजनीति में सत्ता और वर्चस्व के लिए संघर्ष समन्वय के प्रयासों को विफल कर सकता है।

5. समन्वय को सुदृढ़ करने के उपाय

दिनकर ने समन्वय को सुदृढ़ करने के लिए कई उपाय सुझाए।

संवाद को बढ़ावा देना- विभिन्न विचारधाराओं और समूहों के बीच संवाद से मतभेद दूर किए जा सकते हैं।

शिक्षा का योगदान- शिक्षा के माध्यम से समन्वय के महत्व को समझाया जा सकता है।

सांस्कृतिक आदान-प्रदान- कला, साहित्य और संगीत जैसे माध्यमों से विभिन्न संस्कृतियों के बीच संपर्क और समझ विकसित की जा सकती है।

राजनीतिक सुधार- राजनीति में सहयोग और पारदर्शिता को बढ़ावा देना आवश्यक है।

3.5 'बिच्छी बुआ' – डॉ. लक्ष्मण विष्ट 'बटरोही'

"बिच्छी बुआ" कहानी का परिचय-

"बिच्छी बुआ" डॉ. लक्ष्मण विष्ट 'बटरोही' द्वारा रचित एक अत्यंत प्रभावशाली और सामाजिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण कहानी है, जो भारतीय समाज में व्याप्त जातिवाद, असमानता और शोषण की पीड़ा को दर्शाती है। यह कहानी एक गरीब और समाज के निचले वर्ग की महिला बिच्छी बुआ की जीवन यात्रा पर आधारित है, जो समाज के तिरस्कार, भेदभाव, और मानसिक उत्पीड़न का शिकार होती है।

बिच्छी बुआ की कहानी न केवल महिला उत्पीड़न का जीवंत चित्रण है, बल्कि यह समाज में व्याप्त असमानता और अन्याय पर भी कड़ा सवाल उठाती है।

कहानी की मुख्य पात्र बिच्छी बुआ एक वृद्ध महिला हैं, जिनका जीवन संघर्षों से भरा हुआ है। वे एक निर्धन और निम्न वर्ग से आती हैं, और इस कारण उन्हें समाज में तिरस्कार का सामना करना पड़ता है। उनकी जाति, सामाजिक स्थिति और आर्थिक स्थिति के कारण वे समाज के उच्च वर्गों और सशक्त व्यक्तियों द्वारा उपेक्षित और तिरस्कृत हैं। समाज के लोग उनका मजाक उड़ाते हैं, उन्हें नीच समझते हैं और उनका शोषण करते हैं। यह स्थिति केवल उनके शारीरिक अस्तित्व तक सीमित नहीं रहती, बल्कि उनका मानसिक उत्पीड़न भी किया जाता है।

कहानी में बिच्छी बुआ का जीवन इस सामाजिक दुराचार और शोषण का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करता है। उनका जीवन न केवल भौतिक रूप से संघर्षपूर्ण है, बल्कि मानसिक और सामाजिक स्तर पर भी वे लगातार उपेक्षा और अवमानना का शिकार होती हैं। उनके व्यक्तित्व का यह पहलू बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह दर्शाता है कि समाज में न केवल शारीरिक बल्कि मानसिक शोषण भी समान रूप से दुखद और कष्टकारी होता है।

कहानी में बिच्छी बुआ की स्थिति उनके नाम से ही स्पष्ट हो जाती है। 'बिच्छी' शब्द स्वयं में एक विशेष अर्थ समाहित करता है, जो किसी के शरीर में बिच्छू के डंक की तरह चुभने वाली पीड़ा का प्रतीक बन जाता है। बिच्छी बुआ का नाम ही इस बात का संकेत है कि उनका जीवन और उनके साथ होने वाले दुर्व्यवहार में निरंतर दर्द और तकलीफ की स्थिति है। समाज में उन्हें एक 'अजनबी' के रूप में देखा जाता है, जो न तो किसी के लिए मायने रखती हैं और न ही किसी के लिए सम्मानित होती हैं।

कहानी में बिच्छी बुआ की पीड़ा और उनकी स्थिति के माध्यम से डॉ. बटरोही ने समाज के उस अंधेरे पक्ष को उजागर किया है, जिसे हम अक्सर अनदेखा कर देते हैं। वे इस कहानी के माध्यम से यह संदेश देने का प्रयास करते हैं कि समाज में जाति, वर्ग और आर्थिक स्थिति के आधार पर किसी भी व्यक्ति को तिरस्कृत और अपमानित करना गलत है। बिच्छी बुआ का जीवन यह दर्शाता है कि जब किसी व्यक्ति को मानसिक उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है, तो उसका आत्मसम्मान और अस्तित्व बुरी तरह से प्रभावित होता है।

कहानी में बिच्छी बुआ का जीवन केवल एक महिला की पीड़ा नहीं है, बल्कि यह उस वर्ग की पीड़ा भी है, जिसे समाज ने अपने अधिकारों से वंचित किया है। वे भले ही समाज में निचले स्तर पर हों, लेकिन उनका मानवीय अस्तित्व और गरिमा कहीं न कहीं उनके भीतर जीवित रहती है। बिच्छी बुआ की अस्मिता को नकारने और उन्हें तुच्छ समझने वाले लोग यह नहीं समझ पाते कि हर व्यक्ति में एक विशेष प्रकार की ताकत और सम्मान होता है, जो उसे उसके जन्म और वर्ग से परे, एक व्यक्ति के रूप में जन्मता है।

नोट

डॉ. बटरोही ने अपनी इस कहानी में बिच्छी बुआ के माध्यम से यह भी दर्शाया है कि समाज में जब तक हम मानसिकता में बदलाव नहीं लाते, तब तक भेदभाव और असमानता की समस्या का समाधान संभव नहीं हो सकता। वे इस विचारधारा का विरोध करते हैं, जो कहती है कि किसी का जन्म ही उसके जीवन का निर्धारण करता है। उनकी कहानी हमें यह सिखाती है कि एक व्यक्ति का सम्मान केवल उसकी जाति, वर्ग या आर्थिक स्थिति से नहीं होता, बल्कि उसकी मानवीय गरिमा और आत्मसम्मान से होता है।

कहानी का अंत एक दर्दनाक परंतु सशक्त संदेश छोड़ता है। बिच्छी बुआ अपनी पूरी उम्र संघर्षों में बिता देती हैं, लेकिन अंत में भी वे समाज से वही तिरस्कार और असम्मान प्राप्त करती हैं, जिसका सामना उन्हें शुरू से ही करना पड़ा था। उनका जीवन एक चेतावनी है, जो हमें यह सोचने पर मजबूर करता है कि क्या समाज में इस तरह की असमानताएँ और उत्पीड़न जारी रहना चाहिए?

इस कहानी में बटरोही ने न केवल बिच्छी बुआ की पीड़ा को चित्रित किया है, बल्कि समाज के उन पहलुओं को भी उजागर किया है, जो मानवीयता और समानता के खिलाफ हैं। यह कहानी एक गहरी सामाजिक चिंता को प्रकट करती है और समाज में व्याप्त अन्याय और असमानता पर ध्यान केंद्रित करती है। डॉ. बटरोही का उद्देश्य इस कहानी के माध्यम से समाज को जगाना और यह समझाना था कि यदि हमें वास्तव में एक समतामूलक और न्यायपूर्ण समाज की ओर बढ़ना है, तो हमें जातिवाद, असमानता और भेदभाव को समाप्त करना होगा।

कुल मिलाकर, "बिच्छी बुआ" न केवल एक दुखद कहानी है, बल्कि यह समाज के लिए एक आइना है, जो हमें हमारी सामाजिक मानसिकता और रवैये पर विचार करने के लिए प्रेरित करती है। यह कहानी हमें यह समझाने की कोशिश करती है कि समाज में हर व्यक्ति का अधिकार समान रूप से सम्मानित किया जाना चाहिए, चाहे उसकी जाति, वर्ग या स्थिति कुछ भी हो।

"बिच्छी बुआ" (कहानी) का सार

बिच्छी बुआ डॉ. लक्ष्मण विष्ट 'बटरोही' की एक संवेदनशील और सामाजिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण कहानी है। यह कहानी एक वृद्ध महिला बिच्छी बुआ के जीवन संघर्ष को चित्रित करती है, जो समाज में जातिवाद, असमानता और शोषण के शिकार हैं।

कहानी की नायिका, बिच्छी बुआ, एक गरीब और निम्न जाति से संबंध रखने वाली महिला हैं, जिनका जीवन अत्यंत कठिनाई और अपमान से भरा हुआ है। गांव में उन्हें तिरस्कार और उपेक्षा का सामना करना पड़ता है, क्योंकि उनका समाज में निम्न स्थान है। हालांकि उनका जीवन संघर्षपूर्ण है, फिर भी वह किसी प्रकार से अपनी आजीविका चलाने के लिए जुटी रहती हैं। बिच्छी बुआ का नाम उनके

जीवन की स्थितियों का प्रतीक बन जाता है। उनके आसपास के लोग उन्हें अनदेखा करते हैं और सामाजिक दृष्टि से उनका कोई मूल्य नहीं समझते।

कहानी में बिच्छी बुआ के जीवन के माध्यम से यह बताया गया है कि समाज में जातिवाद और असमानता किस हद तक प्रचलित हैं। बिच्छी बुआ के साथ हर जगह भेदभाव होता है, चाहे वह अपने गांव में हो या बाहर। उनका संघर्ष सिर्फ शारीरिक नहीं बल्कि मानसिक भी है। हालांकि बिच्छी बुआ खुद को हर स्थिति में कायम रखने की कोशिश करती हैं, लेकिन समाज की कठोरता और भेदभाव उन्हें कभी भी सम्मानित नहीं करता।

कहानी का उद्देश्य यह है कि हम समाज में व्याप्त जातिवाद, भेदभाव और असमानता के खिलाफ जागरूक हों और इसे समाप्त करने की दिशा में कदम उठाएं। बिच्छी बुआ का जीवन हमें यह सिखाता है कि समाज के हर व्यक्ति को समान अधिकार और सम्मान मिलना चाहिए, चाहे उनकी जाति या स्थिति कुछ भी हो।

कुल मिलाकर, "बिच्छी बुआ" एक मार्मिक कहानी है, जो समाज में बदलाव की आवश्यकता को दर्शाती है और जातिवाद तथा भेदभाव के खिलाफ एक मजबूत संदेश देती है।

"बिच्छी बुआ" कहानी का संदर्भ सहित व्याख्या

संदर्भ

"बिच्छी बुआ" डॉ. लक्ष्मण विष्ट 'बटरोही' की प्रसिद्ध कहानी है। यह कहानी उनके काव्यात्मक और सामाजिक दृष्टिकोण को प्रकट करती है। डॉ. लक्ष्मण विष्ट 'बटरोही' हिंदी साहित्य के महत्वपूर्ण लेखक हैं, जिनकी रचनाओं में समाज के विभिन्न पहलुओं का चित्रण होता है। 'बिच्छी बुआ' एक ऐसी कहानी है, जो सामाजिक असमानताओं, जातिवाद, और गरीबों की दुर्दशा को उजागर करती है। इस कहानी का संदर्भ समाज में व्याप्त भेदभाव और उसकी नकारात्मकताओं से है, खासकर जातिवाद के संदर्भ में।

व्याख्या

कहानी की नायिका, बिच्छी बुआ, एक वृद्ध महिला है जो गरीब और निम्न जाति से संबंध रखती है। बिच्छी बुआ का जीवन संघर्षों और तिरस्कार से भरा हुआ है। उन्हें समाज में न सिर्फ अपमान का सामना करना पड़ता है, बल्कि उन्हें सामाजिक दृष्टि से कोई स्थान भी नहीं मिलता। उनका नाम 'बिच्छी बुआ' इस बात का प्रतीक है कि समाज ने उन्हें उपेक्षित और तिरस्कृत कर दिया है। बिच्छी बुआ का जीवन उनके समाज द्वारा उन पर थोपे गए सीमाओं और कड़ी परिस्थितियों से त्रस्त है।

कहानी का मुख्य उद्देश्य यह है कि समाज में जातिवाद और असमानता के कारण उत्पन्न होने वाली सामाजिक विषमताओं को उजागर किया जाए। बिच्छी बुआ की कहानी में यह दिखाया गया है कि एक व्यक्ति को उसकी जाति, स्थिति या

नोट

सामाजिक स्थान के आधार पर तिरस्कार और असमानता का सामना करना पड़ता है। बिच्छी बुआ का जीवन इस भेदभाव का जीता-जागता उदाहरण है, जिसे समाज के उच्च वर्ग द्वारा नजरअंदाज किया जाता है।

कहानी के माध्यम से लेखक यह संदेश देते हैं कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार और सम्मान मिलना चाहिए, चाहे उसकी जाति, रंग, या वर्ग कुछ भी हो। बिच्छी बुआ की तरह समाज के हाशिए पर रहने वाले लोगों को भी सम्मान मिलना चाहिए। बिच्छी बुआ का संघर्ष एक बड़े सामाजिक बदलाव की आवश्यकता की ओर इशारा करता है, जिससे समाज में समानता और इंसानियत का पालन हो सके।

कहानी में बिच्छी बुआ का पात्र एक शक्तिशाली प्रतीक के रूप में उभरता है, जो समाज की भेदभावपूर्ण प्रवृत्तियों के खिलाफ एक अदृश्य विरोध की आवाज बनता है। वह न केवल अपने जीवन के संघर्षों से जूझती है, बल्कि वह समाज के उन मान्यताओं और सोच के खिलाफ भी खड़ी होती है, जो उसे और उसके जैसे लोगों को नीच मानते हैं।

कहानी में लेखक ने यह भी दिखाया है कि बिच्छी बुआ जैसे पात्रों को अपने अस्तित्व को साबित करने में कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। फिर भी, बिच्छी बुआ अपने आत्मसम्मान और गरिमा को बनाए रखने की कोशिश करती है, जो समाज के तिरस्कार और भेदभाव के बावजूद वह कभी भी हार नहीं मानती।

कहानी की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें लेखक ने सरल, लेकिन प्रभावी तरीके से समाज की जटिलताओं को प्रस्तुत किया है। बिच्छी बुआ की जिंदगी एक परिपूर्ण रूप से संघर्ष, असमानता और समाज के नकारात्मक पक्ष का प्रतीक बनकर उभरती है। यह कहानी हमें अपने दृष्टिकोण को बदलने और समानता की ओर कदम बढ़ाने का संदेश देती है।

गतिविधि 3.1

"तीनों पाठों में मानव जीवन के विभिन्न पक्षों – भावना (करुणा), विचार (समन्वय) और अनुभव (सामाजिक यथार्थ) – को चित्रित किया गया है। आप किन्हीं दो रचनाओं की तुलना करते हुए यह स्पष्ट करें कि लेखक ने जीवन की कौन-सी सच्चाई को अधिक प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है और क्यों?"

निर्देश-

- उत्तर 120-150 शब्दों में दें।
- रचनाओं के भाव और उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए तुलना करें।
- अपने विचारों को स्पष्ट रूप से उदाहरण सहित व्यक्त करें।

.....

.....

.....

.....

नोट

☑ अपनी प्रगति जांचे 3.1

1. करुणा का सामान्य अर्थ क्या है?

.....

.....

.....

.....

2. लेखक के अनुसार करुणा का उद्गम कहाँ से होता है?

.....

.....

.....

.....

3. करुणा किस प्रकार मानवता को जाग्रत करती है?

.....

.....

.....

.....

4. 'समन्वय की प्रक्रिया' का मुख्य उद्देश्य क्या है?

.....

.....

.....

.....

5. रामधारी सिंह दिनकर ने भारत की विविध संस्कृतियों के संदर्भ में समन्वय की आवश्यकता क्यों बताई है?

.....

.....

.....

.....

6. इस निबंध में भारतीय संस्कृति की कौन-कौन सी धाराएँ उल्लेखित हैं?

.....

.....

.....

.....

7. 'बिच्छी बुआ' कहानी का प्रमुख पात्र कौन है और उसका स्वभाव कैसा है?

.....

.....

.....

.....

8. लेखक ने बिच्छी बुआ के माध्यम से किस सामाजिक समस्या को उजागर किया है?

.....

.....

.....

.....

नोट

9. बिच्छी बुआ का जीवन पाठकों के मन में कौन से भाव उत्पन्न करता है?

.....

.....

.....

.....

3.6 सारांश

"मानव मूल्य और सामाजिक चेतना" शीर्षक के अंतर्गत प्रस्तुत रचनाएँ हमें यह समझाने का प्रयास करती हैं कि किसी भी समाज और व्यक्ति का विकास केवल भौतिक उन्नति से नहीं, बल्कि मानवीय मूल्यों और संवेदनशील सोच से होता है। 'करुणा', रामधारी सिंह दिनकर का निबंध 'समन्वय की प्रक्रिया' और डॉ. लक्ष्मण विष्ट 'बटरोही' की कहानी 'बिच्छी बुआ'।

'करुणा' निबंध में करुणा को मनुष्य की सबसे बड़ी आत्मिक शक्ति बताया गया है, जो दूसरों के दुःख में सहभागी बनने की भावना से उत्पन्न होती है। लेखक ने करुणा को समाज में सहयोग और समरसता का आधार बताया है।

'समन्वय की प्रक्रिया' निबंध में दिनकर जी ने भारतीय संस्कृति की उस विशेषता को रेखांकित किया है, जो विरोधी विचारों और परंपराओं को भी अपनाकर एकता में बाँधने का कार्य करती है। यह समन्वय ही भारत की सांस्कृतिक शक्ति है।

'बिच्छी बुआ' एक मार्मिक कहानी है, जिसमें ग्रामीण परिवेश की एक उपेक्षित वृद्धा के जीवन के माध्यम से बदलते सामाजिक मूल्य और पारिवारिक उपेक्षा को दर्शाया गया है। कहानी भावनात्मक रूप से झकझोरती है और बुजुर्गों के प्रति संवेदना जगाती है।

इन तीनों रचनाओं के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि करुणा, समन्वय और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे मूल्य न केवल व्यक्तित्व निर्माण के लिए आवश्यक हैं, बल्कि स्वस्थ और सशक्त समाज की भी नींव हैं।

3.7 शब्दावली

क्रमांक	शब्द	अर्थ (सरल भाषा में)
1	करुणा	दूसरों के दुःख से दुखी होने की भावना
2	संवेदना	भावनात्मक समझ या अनुभूति
3	समन्वय	मेल-जो तालमेल
4	परंपरा	लंबे समय से चली आ रही सामाजिक रीति
5	संस्कृति	जीवन जीने की सभ्य और मूल्यपूर्ण प्रणाली
6	आत्मिक	आत्मा से संबंधित
7	द्वंद्व	विरोध या टकराव
8	विवेक	सही-गलत की पहचान करने की शक्ति

नोट

9	सह-अस्तित्व	साथ मिलकर जीने की भावना
10	विडंबना	विरोधाभासी परिस्थिति
11	उपेक्षा	ध्यान न देना, अनदेखी करना
12	समाज	लोगों का समूह जिसमें नियम और संबंध हों
13	नैतिकता	सही आचरण की भावना
14	समरसता	समानता और मेल
15	परोपकार	दूसरों की भलाई करना

3.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर

1. करुणा का अर्थ है - दूसरों के दुःख को देखकर हृदय में उत्पन्न होने वाला संवेदना-जन्य भाव।
2. करुणा का उद्गम मानव हृदय की स्वाभाविक सहानुभूति और संवेदना से होता है।
3. करुणा मानव को परोपकारी बनाती है और सामाजिक कर्तव्यों के प्रति जागरूक करती है।
4. इस निबंध का उद्देश्य है - विभिन्न सांस्कृतिक धाराओं में समरसता स्थापित कर एकता को बल देना।
5. भारत में अनेक भाषाएँ, धर्म, जातियाँ और संस्कृतियाँ हैं, इसलिए आपसी समन्वय देश की एकता के लिए आवश्यक है।
6. आर्य संस्कृति, द्रविड़ संस्कृति, आदिवासी संस्कृति, इस्लामी और पाश्चात्य प्रभाव - इन सबका उल्लेख हुआ है।
7. बिच्छी बुआ कहानी की मुख्य पात्र हैं, जो कठोर, आत्मनिर्भर, और विद्रोही स्वभाव की महिला हैं।
8. लेखक ने इस पात्र के माध्यम से समाज में महिलाओं के प्रति भेदभाव और उपेक्षा को उजागर किया है।
9. बिच्छी बुआ का जीवन पाठकों में सहानुभूति, आक्रोश और आत्मचिंतन के भाव उत्पन्न करता है।

3.9 सहायक पाठ्य सामग्री – OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) -1	http://books.aisectonline.com/User/UnitUrIs?unitId=9	

नोट

3.10 संदर्भ

- 'करुणा' - 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल
- 'समन्वय की प्रक्रिया' - 'रामधारी सिंह दिनकर
- 'बिच्छी बुआ' - 'डॉ. लक्ष्मण विष्ट 'बटरोही'
- आधुनिक हिंदी निबंध संग्रह - संपादक - डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी
- हिंदी साहित्य का सामाजिक परिप्रेक्ष्य - डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी
- भारतीय संस्कृति और समन्वय की परंपरा - डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय

3.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ) -

1. 'करुणा' निबंध में आचार्य शुक्ल ने करुणा को किस भावना से जोड़कर देखा है?
A. क्रोध
B. प्रेम
C. सहानुभूति
D. घृणा
2. 'समन्वय की प्रक्रिया' में दिनकर ने भारतीय संस्कृति की विशेषता किसे माना है?
A. युद्धप्रियता
B. उपनिवेशवाद
C. समन्वयशीलता
D. आत्मगौरव
3. 'बिच्छी बुआ' किस रूप में प्रस्तुत की गई है?
A. अत्याचारी महिला
B. भोली स्त्री
C. परंपराओं की प्रतीक
D. स्वतंत्रता सेनानी
4. 'करुणा' निबंध में लेखक ने करुणा को किसके लिए आवश्यक बताया है?
A. प्रकृति
B. मानव समाज
C. राजनीतिक दल
D. शासक वर्ग
5. 'समन्वय की प्रक्रिया' निबंध के लेखक हैं-
A. अज्ञेय
B. डॉ. रामविलास शर्मा
C. रामधारी सिंह दिनकर
D. राहुल सांकृत्यायन

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

1. **C) सहानुभूति** - करुणा को लेखक ने सहानुभूति का संवर्धन माना है।
2. **C) समन्वयशीलता** - दिनकर ने भारत की संस्कृति को समन्वय की शक्ति से समृद्ध बताया है।
3. **C) परंपराओं की प्रतीक** - बिच्छी बुआ पारंपरिक भारतीय नारी की जीवंत झलक हैं।
4. **B) मानव समाज** - करुणा को लेखक ने मानवता के मूल गुणों में प्रमुख माना है।
5. **C) रामधारी सिंह दिनकर** - यह निबंध दिनकर जी के सांस्कृतिक दृष्टिकोण को दर्शाता है।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'करुणा' को किस भावना का विस्तार माना है और क्यों?
2. दिनकर ने 'समन्वय की प्रक्रिया' में भारत की संस्कृति को किस विशेषण से सम्बोधित किया है?
3. 'बिच्छी बुआ' कहानी में उनका चरित्र किस प्रकार की पारंपरिक स्त्री का चित्र प्रस्तुत करता है?
4. आचार्य शुक्ल के अनुसार करुणा मानव को किस गुण से संपन्न बनाती है?
5. दिनकर ने भारतीय संस्कृति को किस प्रकार की संस्कृति कहा है और इसका तात्पर्य क्या है?

Part - 2**C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)**

1. 'करुणा' निबंध के माध्यम से आचार्य शुक्ल मानव जीवन में करुणा की क्या भूमिका बताते हैं? क्या यह आज के समाज में भी उतनी ही आवश्यक है?
2. 'समन्वय की प्रक्रिया' निबंध के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि दिनकर ने भारतीय संस्कृति की किन विशेषताओं को मूल मानते हुए समन्वयशीलता को उसका आधार बताया है।

नोट

Part – 3

D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. 'बिच्छी बुआ' कहानी के माध्यम से पारंपरिक भारतीय नारी जीवन की जटिलताओं का चित्रण कीजिए। क्या यह चरित्र आज के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में भी प्रासंगिक है?
2. 'करुणा' और 'समन्वय की प्रक्रिया' दोनों निबंधों में भारतीय समाज के कौन-कौन से नैतिक मूल्य उभर कर आते हैं? आज के संदर्भ में उनका क्या महत्व है?

इकाई - 4

अनुवाद और शब्दविज्ञान - भाषा की व्यावहारिक दृष्टि

इकाई की रूपरेखा

- 4.1 परिचय
- 4.2 उद्देश्य
- 4.3 अनुवाद - परिभाषा, प्रकार विशेषताएँ
- 4.4 हिंदी की शब्द-संपदा
- 4.5 पारिभाषिक शब्दावली
- 4.6 सारांश
- 4.7 शब्दावली
- 4.8 अपनी प्रगति जांचे - संभावित उत्तर
- 4.9 सहायक पाठ्य सामग्री
- 4.10 संदर्भ
- 4.11 अभ्यास
- 4.12 फीडबैक फॉर्म

4.1 परिचय

"अनुवाद और शब्दविज्ञान - भाषा की व्यावहारिक दृष्टि" विषय का अध्ययन भाषा की उपयोगिता, लचीलापन और वैज्ञानिकता को समझने का एक सशक्त माध्यम है। इस खंड में **अनुवाद की परिभाषा, प्रकार, महत्त्व तथा विशेषताएँ** जैसे पहलुओं के साथ-साथ हिंदी की **शब्द-संपदा** और **पारिभाषिक शब्दावली** को भी सम्मिलित किया गया है।

अनुवाद केवल भाषा परिवर्तन की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह एक **संस्कृति, भाव भाषानुकूल, आशयात्मक, साहित्यिक व तकनीकी अनुवाद** — हमें यह सिखाते हैं कि संदर्भ के अनुसार भाषा का प्रयोग कैसे किया जाए।

शब्दविज्ञान भाषा के शब्दों की उत्पत्ति, निर्माण, विकास और अर्थ परिवर्तन को समझने में सहायक होता है। हिंदी की **शब्द-संपदा** (तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी शब्द) और **पारिभाषिक शब्दावली** (technical terminology) भाषा को विभिन्न

नोट

यह खंड भाषा को व्यावहारिक, वैज्ञानिक और उपयोगी दृष्टिकोण से समझने का अवसर देता है, जिससे विद्यार्थी न केवल भाषा की गहराई में उतरते हैं, बल्कि उसे **संचार, अनुवाद और ज्ञान-विज्ञान** के क्षेत्र में **प्रभावशाली माध्यम** बना पाते हैं।

4.2 उद्देश्य

- अनुवाद की मूल अवधारणा को समझना ।
- अनुवाद की व्यावहारिक उपयोगिता को स्पष्ट करना ।
- भाषा के वैज्ञानिक पक्ष की समझ विकसित करना ।
- हिंदी की शब्द संपदा से परिचित कराना
- विभिन्न विषयों के लिए उपयुक्त तकनीकी शब्दों को हिंदी में समझना और उपयोग करना।
- अनुवाद और शब्द प्रयोग के माध्यम से स्पष्ट और प्रभावी अभिव्यक्ति की योग्यता अर्जित करना।

4.3 अनुवाद - परिभाषा प्रकार, महत्व, विशेषताएं

अनुवाद का अर्थ एवं परिभाषा

अनुवाद का अर्थ

अनुवाद शब्द का प्रचलित अर्थ है एक भाषा के पाठ को दूसरी भाषा में ले जाना। सामान्य और व्यापक अर्थों में इसे ही अनुवाद समझा जाता है। अनुवाद शब्द के अर्थ को लेकर अलग-अलग भाषाविदों ने अपने विचार रखे हैं।

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, 'अनुवाद' शब्द का संबंध 'वद्' धातु से है, जिसका अर्थ होता है 'बोलना' अथवा 'कहना'। 'वद्' धातु से 'घञ्' प्रत्यय लगने से 'वाद' शब्द बनता है और फिर उसमें 'अनु' शब्द जोड़ने से 'अनुवाद' शब्द बनता है। इस प्रकार अनुवाद शब्द का मूल अर्थ है 'पुनःकथन' या 'किसी के कहने के बाद कहना' ।

प्रो. हरिमोहन के अनुसार, शब्दार्थ चिंतामणि नामक कोश में अनुवाद का अर्थ दिया गया है- 'प्राप्तस्य पुनःकथने (पहले कहे गए को फिर से कहना) या 'ज्ञातार्थस्य प्रतिपादने (ज्ञात अर्थ को प्रतिपादित करना)।

पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में अनुवाद शब्द का प्रयोग किसी ज्ञात बात को कहने के संदर्भ में किया है अनुवादे चरणम् । स्पष्ट है कि अनुवाद शब्द से तात्पर्य अनुकथन, कहे हुए को फिर से कहना, दोहराना, पुनःकथन से है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि भारत में प्राचीन समय में गुरु द्वारा कहे गए कथन

को दुहराकर स्मरण करने की परंपरा थी। ऐसा इसलिए था कि उस समय शिक्षा की मौखिक परंपरा थी। इसीलिए अनुवाद के पर्यायों के रूप में अनुकथन, भाष्य, टीका, व्याख्या आदि शब्दों का प्रयोग होता रहा। इसके अंतर्गत कहे गए पाठ को उसी भाषा में फिर से कहना या फिर सरल रूप में कहना अर्थ व्यंजित होता है।

अनुवाद शब्द संस्कृत की 'वद्' धातु से बना है, जिसका अर्थ 'बोलना' या 'कहना' होता है। 'वद्' धातु के साथ 'घञ्' प्रत्यय जुड़ने से वह भाववाचक संज्ञा 'वाद' हो गया। 'वाद' का अर्थ है 'कहने की क्रिया' या 'कही हुई बात'। 'वाद' से पहले 'अनु' उपसर्ग जोड़ने से अनुवाद शब्द बनता है। इसमें 'अनु' उपसर्ग का अर्थ 'बाद में' या 'पीछे' होता है। इस प्रकार अनुवाद का अर्थ 'किसी कही हुई बात के बाद कहना' या पुनः कथन है। पीछे बोलने में भाषा रूपांतरित हो जाती है और पहले कही हुई बात का अनुवाद हो जाता है। सामान्यतः एक भाषा की किसी सामग्री को दूसरी भाषा में रूपांतरित करना ही अनुवाद है।

वेद, उपनिषद एवं निरुक्ति में भी इसका प्रयोग 'दुहराने' के ही अर्थ में किया गया है। आचार्य पाणिनि, टीकाकार भट्टोजि दीक्षित, कय्यट आदि विद्वानों ने भी अनुवाद शब्द का प्रयोग 'पुनर्कथन' के अर्थ में ही किया है। इस प्रकार भारतीय वाङ्मय में अनुवाद शब्द का प्रयोग 'गुरु की बात का शिष्य द्वारा दुहराया जाना' पश्चात् कथन, दुहराना, विधि या विहित का पुनः कथन, सार्थक आवृत्ति आदि अर्थों में हुआ है। आज अनुवाद जिस अर्थ में ग्रहण किया जा रहा है वह प्राचीन वाङ्मय से थोड़ा भिन्न है। आधुनिक रूप से अनुवाद एक भाषा में रचित किसी सामग्री का दूसरी भाषा में रूपांतरण को कहते हैं। अर्थात् अनुवाद में दो भाषाएँ होती हैं- (1) स्रोत भाषा (मूल) (2) लक्ष्य भाषा। इसमें जिस भाषा की सामग्री का अनुवाद होता है, उसे स्रोत या मूल भाषा कहते हैं। और जिस भाषा में अनूदित किया जाता है, उसे लक्ष्य भाषा कहते हैं।

अनुवाद की परिभाषा

विभिन्न अनुवाद चिंतकों ने अनुवाद की विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं। इन परिभाषाओं को अनुवाद के आधुनिक और उत्तर आधुनिक चिंतन की दृष्टि से बाँटकर देखना होगा। अनुवाद का आधुनिक चिंतन अनुवाद को एक भाषिक गतिविधि मानता है जिसके अंतर्गत चिंतकों ने अनुवाद को एक भाषिक व्यवहार माना है। भाषिक गतिविधि के रूप में अनुवाद दो भाषाओं के बीच एक सेतु का काम करता है जिसकी सहायता से हम दो संस्कृतियों को जान पाते हैं। वहीं, अनुवाद का उत्तर आधुनिक या कहें कि उत्तर औपनिवेशिक चिंतन अनुवाद वाद को भाषिक से अधिक एक सांस्कृतिक व्यवहार मानता है जिसके अंतर्गत अनुवाद क्यों किया जाता है, और उसके पीछे के कारण क्या हैं, आदि की खोज की जाती है। दोनों ही स्थितियों में चूँकि अनुवाद भाषा से होकर गुज़रता है, इसलिए हम यहाँ अनुवाद के दोनों ही प्रकार के प्रमुख चिंतकों की परिभाषाएँ यहाँ रख रहे हैं। इस क्रम में

नोट

सबसे पहले हम उन चिंतकों की परिभाषाओं की चर्चा करेंगे जो अनुवाद को भाषिक गतिविधि मानते हैं -

मूल भाषा के संदेश के समतुल्य संदेश को लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करने की क्रिया को अनुवाद कहते हैं। संदेशों की यह समतुल्यता पहले अर्थ के स्तर पर होती है और फिर शैली के स्तर पर। (नायडा ई.ए. तथा टेबर आर. थ्योरी एंड प्रेक्टिस ऑफ ट्रांसलेशन, 1969. पृ.12)

एक भाषा की पाठ्यसामग्री को दूसरी भाषा की समतुल्य पाठ्यसामग्री द्वारा प्रतिस्थापित करना अनुवाद कहलाता है। (कैटफर्ड जे.सी., ए लिंग्विस्टिक थ्योरी ऑफ ट्रांसलेशन - एन एस्से इन एप्लाइड लिंग्विस्टिक्स, 1965, पृ.20)

अनुवाद एक ऐसा शिल्प है जिसमें एक भाषा में व्यक्त संदेश के स्थान पर दूसरी भाषा के उसी संदेश को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है। (न्यूमार्क, पीटर, अ टेक्स्टबुक ऑफ ट्रांसलेशन, 1988)

अनुवाद एक संबंध का नाम है, जो दो या दो से अधिक पाठों के बीच होता पाठ समान स्थिति में समान प्रकार्य संपादित करते हैं। (हैलिडे, एम.ए. ट्रांसलेशन, द लिंग्विस्टिक साइंस एंड लैंग्वेज टीचिंग, 1964, पृ.124)

कृष्ण कुमार गोस्वामी के अनुसार- “स्रोत भाषा में व्यक्त पाठ्य सामग्री का निकटतम समतुल्यता के आधार पर लक्ष्य भाषा की पाठ्य सामग्री में पुनर्सृजन करना अनुवाद है।

“मूल भाषा के संदेश के सममूल्य संदेश को लक्ष्य भाषा में प्रस्तुत करने की क्रिया को अनुवाद कहते हैं। संदेशों की यह मूल्यसमता पहले अर्थ और फिर शैली की दृष्टि से, तथा निकटतम एवं स्वाभाविक होती है।” कुमार, सुरेश. (1996). अनुवाद सिद्धांत की रूप रेखा. पृ.-30.

अनुवाद के प्रकार

- साहित्यिक अनुवाद
- व्यावसायिक अनुवाद
- तकनीकी अनुवाद
- समानांतर अनुवाद
- स्वतंत्र अनुवाद

साहित्यिक अनुवाद -

साहित्यिक अनुवाद एक विशेष प्रकार का अनुवाद है, जिसमें साहित्यिक कृतियों जैसे कविता, उपन्यास, नाटक, और कहानियों को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपांतरित किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य यह होता है कि अनुवादित पाठ

मूल रचना के भाव, विचार और सौंदर्य को पूरी सटीकता के साथ संप्रेषित करे। साहित्यिक अनुवाद में शब्दों का अनुवाद ही नहीं, बल्कि लेखक की शैली, भावनात्मक गहराई, सांस्कृतिक प्रतीक, और भाषाई ध्वनियों का भी विशेष ध्यान रखा जाता है।

व्यावसायिक अनुवाद -

व्यावसायिक अनुवाद का उद्देश्य किसी दस्तावेज़, टेक्स्ट, या संदेश को मूल भाषा से दूसरी भाषा में इस प्रकार अनूदित करना है कि वह व्यावसायिक संदर्भ में उपयोगी हो। यह अनुवाद व्यावसायिक दस्तावेज़ों, कानूनी कागजात, विपणन सामग्री, तकनीकी मैनुअल, और व्यावसायिक संवाद जैसे क्षेत्रों में आवश्यक होता है।

व्यावसायिक अनुवाद की विशेषताएँ -

सटीकता - व्यावसायिक अनुवाद में भाषा, शब्दावली, और विषयवस्तु की सटीकता बनाए रखना अनिवार्य है।

पेशेवर शब्दावली का प्रयोग - अनुवाद के दौरान तकनीकी, कानूनी, या व्यापारिक शब्दावली का सही उपयोग सुनिश्चित किया जाता है।

सांस्कृतिक उपयुक्तता - लक्षित भाषा में सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य का ध्यान रखा जाता है, ताकि सामग्री स्थानीय पाठकों के लिए उपयुक्त हो।

गोपनीयता - व्यावसायिक दस्तावेज़ संवेदनशील होते हैं; इसलिए, अनुवादकों के लिए गोपनीयता बनाए रखना आवश्यक है।

मल्टीमीडिया और डिजिटलीकरण - वेबसाइट, ऐप्स, और सॉफ्टवेयर के लिए अनुवाद अक्सर व्यावसायिक अनुवाद का हिस्सा होते हैं।

तकनीकी अनुवाद -

तकनीकी अनुवाद (Technical Translation) का तात्पर्य तकनीकी, वैज्ञानिक, और व्यावसायिक दस्तावेज़ों का एक भाषा से दूसरी भाषा में सटीक और स्पष्ट अनुवाद करना है। इसका मुख्य उद्देश्य तकनीकी विषयों को मूल भावना और अर्थ के साथ लक्षित भाषा के पाठकों तक पहुँचाना है। तकनीकी अनुवाद किसी भी उद्योग, जैसे सूचना प्रौद्योगिकी, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, या एयरोस्पेस, के लिए अनिवार्य है।

तकनीकी अनुवाद की विशेषताएँ -

सटीकता - तकनीकी शब्दों और अवधारणाओं का सही और सटीक अनुवाद आवश्यक है।

विशिष्ट शब्दावली का उपयोग - उद्योग-विशेष की शब्दावली का सटीक और उपयुक्त उपयोग किया जाता है।

नोट

स्पष्टता - अनुवादित सामग्री सरल, समझने योग्य, और उद्देश्यपूर्ण होनी चाहिए।

संदर्भ और सांस्कृतिक अनुकूलन - तकनीकी अनुवाद में स्थानीय संदर्भ और लक्षित पाठक समूह की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का ध्यान रखा जाता है।

गोपनीयता - तकनीकी दस्तावेज़ों में संवेदनशील जानकारी होती है, जिसे सुरक्षित रखना अनिवार्य है।

समानांतर अनुवाद -

वह प्रक्रिया है, जिसमें किसी स्रोत पाठ का अनुवाद दो या अधिक भाषाओं में एक ही समय में किया जाता है। इस प्रकार के अनुवाद का उद्देश्य उच्च सटीकता और गुणवत्ता सुनिश्चित करना है, क्योंकि यह विभिन्न अनुवादकों के कार्य की तुलना और सुधार के अवसर प्रदान करता है।

समानांतर अनुवाद की विशेषताएँ -

बहुभाषीय अनुवाद - स्रोत पाठ का एक साथ दो या अधिक भाषाओं में अनुवाद किया जाता है।

गुणवत्ता नियंत्रण - अनुवादकों के काम की तुलना करके त्रुटियों को कम किया जा सकता है।

सहयोगात्मक प्रक्रिया - अनुवादक आपस में संवाद करके अनुवाद को अधिक प्रभावी और सटीक बनाते हैं।

समय-संवेदनशीलता - जटिल और विस्तृत दस्तावेज़ों के लिए समय सीमा का पालन करते हुए एक साथ काम करना।

स्वतंत्र अनुवाद -

वह प्रक्रिया है जिसमें स्रोत पाठ को ज्यों का त्यों अनुवाद करने के बजाय भाव, संदर्भ, और विचार को ध्यान में रखते हुए अनुवाद किया जाता है। इसमें शब्दशः अनुवाद पर जोर नहीं दिया जाता बल्कि पाठ का सार और अर्थ सहज और स्वाभाविक रूप से प्रस्तुत किया जाता है।

स्वतंत्र अनुवाद की विशेषताएँ -

भाव पर जोर - पाठ के मूल विचार और भाव को ध्यान में रखते हुए अनुवाद किया जाता है।

शब्दशः अनुवाद से मुक्त - इसमें शब्द-से-शब्द मिलान आवश्यक नहीं होता, बल्कि अर्थ और संदर्भ का अनुवाद होता है।

लचीलापन - अनुवादक को अपने विचारों और शैली का उपयोग करने की स्वतंत्रता होती है।

पाठक-केंद्रित - पाठ को लक्षित पाठकों के लिए अधिक प्रभावी और समझने योग्य बनाने पर ध्यान दिया जाता है।

अनुवाद का महत्व -

मानव सभ्यता के प्रारंभ से ही अनुवाद कार्य होता आया है। मनुष्य के मन में उठे विचारों की भाषा में प्रस्तुति एक तरह से अनुवाद ही है। व्यापक संदर्भ में देखा जाए तो भावों का संप्रेषण अनुवाद ही है। किंतु यदि यहाँ अनुवाद की इकाई अंतरभाषिक अनुवाद को माना जाए तो इसका महत्व और अधिक बढ़ जाता है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अनुवाद का महत्व है। विशेष तौर पर भूमंडलीकृत विश्व की कल्पना अनुवाद के बिना लगभग असंभव सी है। विश्व के किसी भी कोने में घटित कोई भी घटना अथवा कोई भी नवाचार की जानकारी पूरे विश्व के लिए अपेक्षित है और इस पूरी प्रक्रिया में अनुवाद महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। महत्व की दृष्टि से कुछेक क्षेत्रों की चर्चा यहाँ की जा रही है। अपनी समझ से इसी क्रम में अन्य क्षेत्रों को भी जोड़ा जा सकता है।

शिक्षा और अनुवाद -

शिक्षा के क्षेत्र में अनुवाद का अत्यधिक महत्व है। विश्वभर में उपलब्ध ज्ञान और शोध को शिक्षार्थियों तक पहुँचाना आज बेहद आवश्यक है। अनुवाद के माध्यम से ही शिक्षार्थियों को नवीनतम जानकारी उपलब्ध करवाई जा सकती है। विद्यालयों में भारतीय भाषाओं के साथ-साथ अंग्रेजी एवं विश्व की अनेक भाषाएँ पढ़ाई जा रही हैं। इन भाषाओं के ज्ञान से बच्चे न केवल ज्ञान की दृष्टि से समृद्ध हो रहे हैं, अपितु वे व्यापक स्तर पर विश्व नागरिक भी बन रहे हैं। उनके लिए शिक्षा केवल उनके क्षेत्र अथवा राष्ट्र तक सीमित नहीं है अपितु वे ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न अनुभवों से भी परिचित हो पा रहे हैं। साथ ही, वे बेहद कम आयु में ही कई भाषाओं के बीच संवाद को न केवल समझ पाते हैं अपितु अनुवाद भी कर पाते हैं। इसके अतिरिक्त, इंटरनेट के प्रवेश, शिक्षा के डिजिटलीकरण तथा ऑनलाइन शिक्षा पद्धति ने शिक्षा के क्षेत्र को अत्यंत समृद्ध किया है। आज शिक्षा प्राप्ति के लिए विद्यार्थी विभिन्न भाषाओं से अनूदित होकर उपलब्ध लिखित साहित्य के साथ-साथ अनुवाद की नई तकनीकों और सूचना प्रौद्योगिकी के समन्वयन से शिक्षा के नए माध्यमों से परिचित हो पा रहे हैं।

पर्यटन और अनुवाद -

पिछले कुछ दशकों में पर्यटन एक बड़े व्यवसाय के रूप में उभरा है। दुनिया भर से जिज्ञासु लोग विभिन्न देशों एवं उनकी संस्कृतियों को जानने के लिए भ्रमण करते हैं। पर्यटन के क्षेत्र में इस हलचल के चलते अनुवाद का महत्व और अधिक बढ़ गया है। विभिन्न पर्यटन स्थलों के विषय में जानकारी लगभग सभी महत्वपूर्ण भाषाओं में उपलब्ध है। सूचना पट्ट, ब्रोशर्स, पंफलेट, मार्गदर्शिका आदि आज विभिन्न भाषाओं में उपलब्ध होती है जिनकी सहायता से विभिन्न भाषा-भाषी पर्यटक अपनी मूल भाषा अथवा अंग्रेजी आदि में सूचना प्राप्त कर सकते हैं।

नोट

प्रशासनिक क्षेत्र और अनुवाद -

भारत के विभिन्न प्रदेशों की राजभाषा उनके क्षेत्र की प्रमुख भाषा है। हिंदी को संघ की राजभाषा घोषित किए जाने के बावजूद यह प्रावधान है कि जब तक सभी क्षेत्रों में हिंदी लागू नहीं हो जाती तब तक अंग्रेजी सह-राजभाषा के रूप में उपयोग में लाई जाती रहेगी। इसका परिणाम यह हुआ कि आज भी प्रशासनिक स्तर पर द्विभाषा की स्थिति बनी हुई है जिसके चलते प्रशासनिक क्षेत्र में अनुवाद का अत्यधिक महत्व है। इसी के परिणामस्वरूप नियम, कानून, आदेशादि मूलतः अंग्रेजी में तैयार किए जाते हैं और हिंदी की अनिवार्यता के चलते उनका हिंदी अनुवाद भी अनिवार्य है। स्थिति यह है कि प्रशासनिक क्षेत्र में हिंदी अनुवाद की भाषा बनकर रह गई है। किंतु यह भी सत्य है कि हिंदी की अनिवार्यता के चलते विभिन्न विभागों, अनुभागों, मंत्रालयों आदि में अनुवादकों की माँग लगातार बनी रहती है और बड़ी संख्या में वर्ष-भर अनुवादकों की भर्ती होती है।

जनसंचार माध्यमों में अनुवाद -

जनसंचार का लगभग पूरा व्यवसाय अनुवाद पर केंद्रित है। 24 घंटे समाचार प्रस्तुति की माँग और समाचार-पत्रों के प्रकाशन के चलते यहाँ व्यापक स्तर पर अनुवाद कार्य होता है। पत्रकारिता, मुख्यधारा की इलेक्ट्रॉनिक मीडिया से लेकर सोशल मीडिया तक समाचारों और जानकारीयों की माँग के चलते जनसंचार के क्षेत्र में अनुवाद और अनुवादकों की माँग अनवरत बनी रहती है। दुनिया भर से आ रही सूचनाओं को देश के गाँव, शहर कस्बों तक पहुँचाने की चुनौती ने मीडिया के क्षेत्र में अपार संभावनाएँ पैदा की हैं। मीडिया के अतिरिक्त विज्ञापन, कार्टून उद्योग, फिल्मों में डबिंग, सबटाइटलिंग, वॉयस ओवर आदि की माँग ने लिखित से लेकर मौखिक अनुवाद तथा आशु अनुवाद आदि के लिए माँग पैदा की है। आज जनसंचार माध्यम सर्वाधिक माँग में है। गीत से लेकर, विज्ञापन, वृत्तचित्र, फिल्में, समाचार आदि सभी क्षेत्रों में अद्यतन सूचना प्रदान करने तथा बाज़ार के तय लक्ष्यों को हासिल करने में अनुवाद सक्रिय भूमिका अदा कर रहा है।

साहित्य और अनुवाद -

साहित्य का मूल उद्देश्य मनुष्य को सहृदय बनाना अथवा बेहतर मनुष्य बनाना है। इस प्रक्रिया में यदि विश्व साहित्य को भी शामिल किया जा सके तो विपुल साहित्य के अध्ययन से एक विश्व संस्कृति का निर्माण किया जा सकता है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में भारतीय साहित्य के साथ-साथ फ्रांसीसी एवं रूसी साहित्य के अध्ययन का विशेष महत्व है। विश्व साहित्य पढ़कर हमने जाना कि दमनकारी शक्तियों से संघर्ष समय-समय पर विभिन्न देश और संस्कृतियाँ करते रहे हैं। उनके संघर्ष में अपने अनुभवों को मिलाकर एक नए साहित्य का उद्भव हुआ जिसके परिणामस्वरूप न केवल व्यापक जागरूकता का उदय हुआ अपितु साहित्य में भी विकास देखा गया। नाटक एवं उपन्यास के क्षेत्र

में हुए परिवर्तनकारी कार्यों से इन क्षेत्रों में भी विकास देखा गया। आज विश्व भर में विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हो रहे हैं। साहित्य के माध्यम से हम किसी समाज को बेहतर जान पाते हैं। साहित्य की महान कृतियों के आधार पर बनी फिल्मों का इसमें विशेष योगदान है। बांग्ला, तमिल, मलयालम, पंजाबी आदि भाषाओं में तथा भाषाओं से लिए गए उत्कृष्ट साहित्य ने विभिन्न भाषा-भाषी समाजों को लाभान्वित किया है। विश्व साहित्य और तुलनात्मक साहित्य के माध्यम से हम किसी समाज की सोच की निर्माण पद्धति को बेहतर समझ पाते हैं और अपने समाज के सर्वांगीण विकास में योगदान दे पाते हैं। विभिन्न भाषाओं के साहित्य को पाठ्यक्रम में लगाने से छात्रों का दायरा भी विकसित होता है। निस्संदेह इन सभी के पीछे अनुवाद की अनिवार्य भूमिका है।

सूचना प्रौद्योगिकी और अनुवाद -

जैसा कि पहले भी चर्चा की जा चुकी है कि सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आई क्रांति ने पूरे विश्व को सूचनाओं से भर दिया है। विभिन्न गेजेट्स के माध्यम से हम हर समय सूचनाओं से लबरेज रहते हैं। आज पूरे विश्व में व्यापक स्तर पर सूचनाओं का आदान-प्रदान चल रहा है जिसके परिणामस्वरूप वैश्विक स्तर पर व्यापार, पर्यटन, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, चिकित्सा आदि के क्षेत्रों में नित नए शोध और ज्ञान के आयाम जुड़ रहे हैं। सूचना प्रौद्योगिकी ने पूरे विश्व को एक गाँव में बदल कर रख दिया है जहाँ बड़ी ही सुगमता से न केवल सूचनाओं का आदान-प्रदान होता है अपितु प्रसार के नए आयाम भी खुलते हैं। विश्व में कितनी भाषिक विविधता के बावजूद यह काम आज उतना कठिन नहीं रह गया है जिसके मूल में निश्चित रूप से अनुवाद है। यहाँ हमने शिक्षार्थियों की सुविधा के लिए कुछेक क्षेत्रों की चर्चा की जहाँ अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक क्षेत्रों में अनुवाद की उपयोगिता और महत्व को भी रेखांकित किया जा सकता है।

4.4 हिंदी की शब्द-संपदा

शब्दों का महत्व

भाषा में ध्वनि हमारे विचारों की वाहक है। लेकिन हम ध्वनियों से अर्थ प्रकट नहीं कर सकते। जैसे अ, क, त आदि ध्वनियाँ सार्थक नहीं हैं, अर्थात् इनसे कोई अर्थ ज्ञात नहीं होता। भाषा के अर्थ का वाहक 'शब्द' है, जो ध्वनियों से बनता है। जैसे 'आम' शब्द कहने पर हमारे मन में एक वस्तु का बोध होगा। आम शब्द में 'आ' और 'म' दो ध्वनियाँ हैं। इसी तरह कुछ ध्वनियों के योग से बनने वाले शब्द भाषा में अर्थ के वाहक होते हैं। भाषा के शब्द समाज-सापेक्ष होते हैं, अर्थात् 'आम' कहने पर हिन्दी भाषी एक विशेष वस्तु का अर्थ ग्रहण करते हैं लेकिन इस शब्द का चीनी भाषी या इतालवी भाषी के लिए यही अर्थ हो, यह आवश्यक नहीं है। उन लोगों के पास इसी वस्तु के लिए अपना शब्द होगा जो उनकी भाषा की

नोट

ध्वनियों से निर्मित होगा। इसका तात्पर्य यह है कि एक समाज के सभी लोग, जो एक भाषा बोलते हों, भाषा के शब्दों के निश्चित अर्थ से परिचित होते हैं और वे इस अर्थ को उच्चारण से दूसरों तक पहुँचा सकते हैं और उनके उच्चारण से एक निश्चित अर्थ ग्रहण कर सकते हैं।

अतः भाषा के शब्दों की एक प्रमुख विशेषता है- अर्थयुक्त होना। ऊपर हमने चर्चा की है कि 'आम' शब्द का अपना अर्थ है, जो हिन्दी भाषी समाज में जाना जाता है। लेकिन यह अर्थ इस शब्द में कहाँ से आया? क्या लाम या ताम कहने पर हमारे मन में कोई अर्थ निकलता है? जिस फल को हम आम कहते हैं क्या उस फल के किन्हीं गुणों के साथ इन ध्वनियों का संबंध है? शायद नहीं। क्योंकि हमने खुद कहा था कि हर भाषाई समुदाय अपने ढंग से अर्थ-ज्ञात करने के लिए शब्दों का व्यवहार करता है। जिस फल को हिन्दी में 'आम' कहा जाता है, उसे तमिल में 'मांगाई' और अंग्रेजी में 'मैंगो' कहा जाता है। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि किसी शब्द में आने वाली ध्वनियों का शब्दों के अर्थ के साथ कोई सीधा संबंध नहीं है। ज्ञात अर्थ के लिए समाज कोई शब्द निश्चित कर देता है और उस शब्द का उस अर्थ के साथ संबंध जुड़ जाता है। यह संबंध स्वाभाविक नहीं होता बल्कि समाज द्वारा आरोपित होता है। वस्तु और शब्द के इस संबंध को हम लोग यादृच्छिकता कहते हैं। यादृच्छिकता का तात्पर्य है इच्छानुकूल आरोपित अर्थ। यह भी देखा जा सकता है कि शब्द और अर्थ का संबंध ऐतिहासिक विकास के साथ बदलता है। जैसे संस्कृत में 'मृग' शब्द पशु या जानवर के लिए प्रयुक्त होता था, सिर्फ हिरन के लिए नहीं। लेकिन आज हम लोग 'मृग' का अर्थ 'हिरन' लेते हैं। इस बात को आप 'मृगराज' शब्द से समझ सकते हैं, जहाँ सिंह को पशुओं का राजा कहा गया। इसी तरह से शिकार के लिए 'मृगया' शब्द का इस्तेमाल करते हैं। 'मृगया' का तात्पर्य केवल हिरन का शिकार नहीं, सभी जंगली जानवरों का शिकार है। प्रत्येक शब्द का अपना अर्थ होता है। जैसे 'आम' शब्द फल का अर्थ सूचित करता है, 'मेज' शब्द एक विशेष वस्तु का अर्थ सूचित करता है, अर्थात् वस्तुओं के लिए प्रयुक्त होने वाले शब्दों से उन वस्तुओं के अर्थ बहुत स्पष्ट दिखाई देते हैं। लेकिन भाषा में हम हमेशा वस्तुओं के लिए ही शब्दों का प्रयोग नहीं करते। हम लोग गूढ़ विचारों को भी शब्दों के माध्यम से प्रकट करते हैं। जैसे 'स्वतंत्रता' शब्द हम लोगों के लिए बहुत परिचित सा लगता है लेकिन एक छोटा बच्चा इस अर्थ को आसानी से ग्रहण नहीं कर सकता। उसके लिए राष्ट्रीयता अभिव्यक्ति, स्वच्छंदता, उदंडता आदि शब्दों के अर्थ को ग्रहण करना कठिन कार्य है। जब व्यक्ति बड़ा होता है और शिक्षित होता चलता है तो वह ऐसे विचारों को समझ कर इन शब्दों के माध्यम से उसे ग्रहण करता चलता है। ऐसा नहीं है कि केवल पढ़े-लिखे लोग ही गूढ़ या सूक्ष्म विचारों की अभिव्यक्ति करते हैं। अनपढ़ व्यक्ति भी समाज में कई सूक्ष्म विचारों को ग्रहण करता है और अपनी भाषा में इन शब्दों का प्रयोग करता है। अतः शब्दों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति के लिए परम्परागत शिक्षा कोई अनिवार्यता नहीं है। कबीर जैसे अनेक

महापुरुष इसके प्रमाण हैं। अक्षर ज्ञान और परंपरागत शिक्षा से वंचित कबीरदास ने सामाजिक व्यवहार और अपने अनुभव ज्ञान के आधार पर दर्शन और धर्म के गूढ़ रहस्यों को सफलतापूर्वक अभिव्यक्त किया है।

दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि भाषा न केवल दृश्यमान जगत से संबंधित वस्तुओं के बारे में अभिव्यक्ति का साधन है, बल्कि विचारों की अभिव्यक्ति का भी साधन है। विचारों की अभिव्यक्ति की शिक्षा हमें अपने समाज से मिलती है और समाज को यह अभिव्यक्ति पूर्व की पीढ़ियों से प्राप्त होती है। इसी को हम उस समाज की वैचारिकता कहते हैं। जब हम लोग समाज से भाषा अर्जित करते हैं तो उसके साथ ही उसकी वैचारिकता को भी अर्जित करते हैं। अतः भाषा शब्दों के माध्यम से केवल अर्थ की अभिव्यक्ति मात्र न होकर सामाजिक-सांस्कृतिक, राजनीतिक, दार्शनिक, ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न उपलब्धियों की अभिव्यक्ति की वाटिका भी होती है। अतः यह हमारे लिए महत्वपूर्ण सामाजिक विरासत है।

भाषा के सामाजिक स्तर भेद

अब तक हमने शब्दों के बारे में जो चर्चा की, उसमें सामाजिक स्तर भेदों को नहीं लिया है और न ही प्रयोग के स्तर पर शब्दों के महत्व की बात की है। आपने देखा होगा कि दो बचपन के दोस्त बात-बात में 'सुन बे', 'अबे', आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं, जबकि औपचारिक चर्चा (स्कूल, दफ्तर आदि) में भाषा भिन्न होती है। हम भाषा के, विशेषकर शब्दों की दृष्टि से भाषा के दो स्पष्ट स्तर पहचान सकते हैं- औपचारिक भाषा और अनौपचारिक भाषा। घरेलू बातचीत, दोस्तों का वार्तालाप आदि में औपचारिक भाषा का प्रयोग होता है। लेकिन सभा-सोसायटी, कार्यालयों, विशिष्ट विषयों पर परिचर्चा की भाषा औपचारिक होती है, जिसमें शब्दों का प्रयोग अत्यंत सावधानी से करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न पेशों और व्यवसायों के लोगों की अपनी भाषा होती है, जिसकी शब्दावली व्यवसाय विशेष से जुड़ी होती है। कक्षा अध्यापक की भाषा, व्यापारियों की भाषा, मजदूरों की भाषा आदि में हम शब्दों के प्रयोग के अंतर की पहचान कर सकते हैं।

सामाजिक स्तर भेद के संदर्भ में हम भाषा और उसमें शब्दों के कुछ विशिष्ट रूपों को भी आसानी से पहचान सकते हैं। अनपढ़ लोगों की बोली मिश्रित भाषा प्रयोग उनके शैक्षिक स्तर का परिचायक है। कुछ लोग अवभाषा (Slang) का प्रयोग करते हैं जो भाषा का बिगड़ा हुआ रूप माना जाता है। कुछ पेशों के व्यक्ति दूसरों से छिपाकर अपनी बात कहने के उद्देश्य से गुप्त भाषा (Argot) का प्रयोग करते हैं। इसकी शब्दावली सामान्य भाषा से भिन्न होती है।

नोट

शब्दों के विभिन्न स्रोत -

भाषा में जो शब्द हैं, वे आखिर कैसे बने हैं और कहाँ से आए हैं? इसकी जानकारी आपके लिए आवश्यक है। हिन्दी भाषा संस्कृत से निकली है, अतः इसमें संस्कृत के अनेक शब्द हैं। कुछ शब्द हिन्दी भाषी समाज ने व्यवहार द्वारा विकसित किए हैं। यह भाषा उर्दू के माध्यम से अरबी-फारसी के शब्दों से भी समृद्ध हुई है। अंग्रेजों के शासन के समय इस भाषा में सैकड़ों शब्द अंग्रेजी से आए हैं। जिस तरह एक नदी में विभिन्न स्रोतों से जल आकर मिलता है और नदी का विस्तार होता है, उसी तरह विभिन्न स्रोतों से आने वाले शब्द भाषा को समृद्ध करते हैं। आगे हम हिन्दी भाषा के शब्द-भंडार के स्रोतों की चर्चा करेंगे।

स्रोतों के आधार पर हिन्दी के शब्दों के चार प्रमुख वर्ग हैं- तत्सम, तद्भव, देशज और बाहरी ।

तत्सम - 'तत्' का अर्थ है 'वह', 'सम' माने 'जैसा ही'। अर्थात् संस्कृत से मूल रूप में हिन्दी में लिए गए शब्द। जो शब्द सीधे संस्कृत से आए हैं वे तत्सम शब्द हैं। अर्थात् संस्कृत के समान शब्द। बालक, पर्वत, पुस्तक, विद्यार्थी, निराशा, सत्य, मैत्री, व्यवस्था, जल आदि संस्कृत के तत्सम शब्द हैं। यहाँ एक बात स्पष्ट करना आवश्यक होगा कि हिन्दी में सारे तत्सम शब्द यथावत् नहीं लिए गए हैं बल्कि उनके रूप में थोड़ा सा परिवर्तन भी हो गया है। संस्कृत शब्द बालकः का विसर्ग हट गया, पुस्तकम् शब्द का म् छोड़ दिया गया। अर्थात् तत्सम शब्द मूल संस्कृत शब्दों के रूप में किंचित परिवर्तन के बाद ही हिन्दी में स्वीकार किए गए। छोड़े गए चिह्न संस्कृत के शब्दों के वचन या लिंग के सूचक हैं। हिन्दी में वचन तथा लिंग के सूचक चिह्न दूसरे हैं, इसलिए ये चिह्न हिन्दी में छोड़ दिए गए।

तद्भव - 'तत्' का अर्थ है 'वह', 'भव' का 'उत्पन्न'। अर्थात् ये वे शब्द हैं जो संस्कृत से हिन्दी में रूप परिवर्तन के साथ आए हैं। तद्भव शब्द भी संस्कृत मूल के हैं, लेकिन मूल रूप में लिए गए शब्द नहीं हैं, बल्कि ये ऐतिहासिक क्रम में बदले हुए रूप में हिन्दी में आए हैं। जैसे- कर्म > काम, हस्त हाथ ।

संस्कृत भाषा के बाद उससे क्रमशः पाली, प्राकृत, अपभ्रंश भाषाएँ बनीं। इन भाषाओं में ध्वनि-परिवर्तन या उच्चारण की भिन्नता के कारण शब्द के रूप भी बदल गए। हिन्दी 'सच' संस्कृत 'सत्य' से बना है। लेकिन यह परिवर्तन अचानक नहीं हुआ, बल्कि धीरे- धीरे हुआ। परिवर्तन के क्रम को हम निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं -

संस्कृत	पाली, प्राकृत, अपभ्रंश में परिवर्तन का क्रम	हिन्दी
सत्य	सत्त-सच्च	सच

इस प्रकार बदले हुए शब्दों को ही हम तद्भव कहते हैं। उच्चारण के लिए अगले पृष्ठ पर कुछ तत्सम और तद्भव शब्द दिए जा रहे हैं

नोट

तत्सम	तद्भव
सूर्य	सूरज
चंद्र	चाँद
वर्ष	बरस
सर्प	साँप
आम्र	आम

तत्सम	तद्भव
संध्या	साँझ
कर्पट	कपड़ा
वृद्ध	बूढ़ा
मयूर	मोर
हस्त	हाथ

कुछ विद्वानों ने तत्सम और तद्भव के साथ ही संस्कृत से अलग शब्दों का एक अर्ध- तत्सम वर्ग भी स्वीकार किया है। जैसे- 'करम', 'धरम', चन्दर आदि। लेकिन इन्हें भी तद्भव वर्ग में ही स्वीकार करना उचित है।

देशज - (देश + ज 'पैदा हुआ') देशज वे शब्द हैं, जिनके स्रोत का हमें ज्ञान नहीं है। ये न संस्कृत मूल के हैं, न किसी बाहरी या विदेशी भाषा से आए हैं। ये हिंदी भाषा के अपने शब्द हैं। इन शब्दों का प्रयोग उस भाषा-भाषी समाज में ही प्रारंभ हुआ, अर्थात् ये सही मायने में भाषा के अपने शब्द हैं। हिंदी के कई बहुप्रचलित शब्द जैसे पेड़, लड़का, खिड़की आदि देशज शब्द हैं।

बाहरी शब्द - ये शब्द बाहर के स्रोतों से आए हैं जिन्हें अध्ययन की सुविधा के लिए तीन उपवर्गों में विभक्त किया जा सकता है -

आर्य परिवार की भाषाओं से आए शब्द -

मराठी- चालू, लागू

बंगला- गल्प

भारत के अन्य भाषा परिवारों से आए शब्द -

द्रविड- मीन (प्राचीन), इडली, सांबर (आधुनिक)

मुंडा - कोड़ी (20 की संख्या)

विदेशी भाषाओं से आए शब्द -

इस वर्ग में हजारों शब्द हैं। अंग्रेजी से साइकिल, रेल, टिकट, स्टैंप, पुलिस, निब, स्टोव, टेलीफोन, फोटो आदि। भारत में इस्लामी शासन के दौरान उर्दू भाषा का विकास हुआ, जिससे हजारों अरबी और फारसी के शब्दों का हिन्दी में आगमन हुआ। मुगल तुर्क थे। इस कारण हिन्दी में तुर्की के भी बहुत से शब्द आए। यहाँ कुछ प्रमुख उदाहरण दिए जा रहे हैं-

अरबी - औरत, गुनाह, तकदीर, फरिश्ता, मन्त्रत, ताबीज, सलाम, कस्बा, किला, बगावत, दफ्तर, अखबार, हिरासत आदि।

फारसी - खुदा, खजांची, खुशामद, जमीन, सरकार, सिफारिश, अंगूर, आबाद, आस्तीन, गुलाब, चपाती, जंजीर, दरी, नमक, नाश्ता, परदा, प्याला आदि।

नोट

तुर्की - तोप, तमगा, दारोगा, बारूद, बंदूक, कुली, बेगम, बहादुर, लाश आदि।

फ्रांसीसी या जापानी आदि भाषा के शब्द अंग्रेजी के माध्यम से आए, क्योंकि हिंदी भाषी क्षेत्र से इन भाषाओं का प्रत्यक्ष संपर्क नहीं था। लेकिन पुर्तगालियों ने अंग्रेजों के आने से पहले भारत के कुछ क्षेत्रों में अपना शासन स्थापित किया था। हिंदी में पुर्तगाली के भी कई शब्द हैं, जो या तो सीधे हिंदी में आए हैं या अन्य भारतीय भाषाओं से होकर।

जैसे -

(1) फ्रांसीसी - रेस्तरां, कूपन, अंग्रेजी, कारतूस

(2) जापानी - रिक्शा

(3) पुर्तगाली - गिर्जा, पादरी, काजू, चाबी, बिस्कुट, कमीज, तौलिया आदि।

विदेशी भाषाओं से शब्द ग्रहण करने की यह प्रक्रिया हमेशा चलती रहती है। आज भी हम नए विचारों को मूल शब्द के साथ ग्रहण करते हैं। इससे भाषा समृद्ध होती है, जीवंत रहती है। ऐसे नए शब्द हैं स्पुतनिक, साफ्टवेयर।

शब्दों का अर्थ पक्ष -

शब्द भाषा में अर्थ के वाहक हैं। शब्दों के माध्यम से हम अपने मन में निहित अर्थ को प्रकट करते हैं। लेकिन शब्द और अर्थ का संबंध तलवार और म्यान की तरह नहीं है। अर्थात् यह नहीं है कि हर शब्द का एक ही अर्थ हो। कहीं एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं और कहीं दो-तीन शब्दों का एक अर्थ। अर्थ विज्ञान में हम भाषा के अर्थ पक्ष का अध्ययन करते हैं। शब्द और अर्थ के संबंध पर विचार करने के लिए हम उन्हें निम्नलिखित पाँच प्रकारों में विभक्त कर सकते हैं-

(i) समरूपी शब्द (Homonym) - कुछ शब्दों से एक से अधिक अर्थ निकलते हैं।

जैसे -

पर - पंख, लेकिन, ऊपर

कल - दूसरा दिन, मशीन, चैन

मगर - लेकिन, एक प्राणी

इसका प्रमुख कारण है भिन्न-भिन्न स्रोतों या प्रकारों से आने या बनने वाले शब्दों का एक जैसा लगना या लिखा जाना। इस बात को निम्नलिखित उदाहरणों द्वारा और स्पष्ट रूप में समझा जा सकता है-

मेल (हिन्दी 'मिलना' क्रिया से) - मित्रता

मेल (अंग्रेजी mail का हिन्दी रूप) - मेल गाड़ी

बरस (संस्कृत वर्ष से) - एक साल
 आम (संस्कृत आम्र से) एक फल
 आम (अरबी से) - साधारण, सामान्य

ii) पर्याय (synonym) - जब एक से अधिक शब्दों का अर्थ समान होता है, तो वे पर्याय कहलाते हैं। व्याकरण में इन शब्दों को पर्यायवाची भी कहते हैं। कुछ

सूरज - सूर्य, भानु, रवि, दिवाकर, आफताब

चंद्र - चंद्रमा, राकेश, मेहताब, चांद, निशाकर

कमल - पंकज, नीरज, राजीव, पद्म, अंबुज, सरोरुह, सरसिज

iii) विलोम (antonym)- जिस प्रकार समान अर्थ वाले शब्द पर्याय कहे जाते हैं, उसी तरह विपरीत (विरोधी) अर्थ वाले शब्द विलोमार्थी या विपरीतार्थी शब्द कहलाते हैं। छोटा-बड़ा, ठंडा-गरम, अच्छा-बुरा, गरीब-अमीर आदि कुछ विलोमार्थी शब्द हैं।

शब्द निर्माण -

भाषा के शब्द बनते कैसे हैं? हम अधिक शब्द कैसे बना पाते हैं? भाषा के अपने शब्द भाषा बोलने वाले समाज में सदियों से चले आते हैं। सामाजिक व्यवहार में शब्दों की रचना में काट-छाँट होती रहती है, शब्दों को नये-नये अर्थ मिलते रहते हैं। कुछ पुराने शब्द छूट जाते हैं, कुछ नये शब्द व्यवहार में आ जाते हैं। इस दृष्टि से देखें तो भाषा एक सामाजिक संपदा है। शब्दों का विकास सामाजिक विकास के साथ जुड़ा हुआ है। लेकिन भाषा को व्यवस्थित रूप प्रदान करने में व्याकरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उसमें प्रयुक्त शब्दों का निर्माण व्याकरण के नियमों के अनुसार ही होता है अतः शब्द-निर्माण की प्रक्रिया को समझने के पूर्व हमें शब्द की रचना पर विचार करना पड़ेगा।

भाषा के बहुत थोड़े से शब्द अपने मूल में व्यवहृत होते हैं। भाषा उन मूल शब्दों से और कई नये शब्दों की सृष्टि करती है। जैसे 'बच्चा' मूल शब्द है, 'पन' अवस्था सूचित करने के लिए उससे व्युत्पन्न (derived) शब्द है। बच्चा+पन बचपन। यहाँ 'पन' एक प्रत्यय है जो, अवस्था का अर्थ देता है। इस दृष्टि से प्रत्यय के अन्य उदाहरण देखे जा सकते हैं।

नया+पन = नयापन, बांका + पन = बाँकपन

क्रिया रचना में 'कर' मूल शब्द है, किया, करता, करना, करेगा आदि क्रिया रूप व्युत्पन्न शब्द हैं। एक मूल क्रिया रूप (जिसे व्याकरण में धातु कहा जाता है) से सैकड़ों शब्दों की व्युत्पत्ति होती है। मूल शब्द में प्रत्ययों को जोड़ने से शब्द का निर्माण होता है। क्या सहायता होने की अवस्था को हम 'सहायतापन' कह सकते योग्यता संवर्धन

नोट

हैं, या भूख होने की अवस्था को 'भूखापन' कह सकते हैं? आप स्वयं ही जानते हैं कि ये दोनों शब्द सही नहीं हैं। अवस्था सूचित करने के लिए यह जरूरी नहीं है कि हर जगह 'पन' प्रत्यय लगाए जाएँ। 'पन' के साथ हिंदी में अवस्था सूचित करने के लिए 'पा' (बुढ़ापा), 'ता' (मनुष्यता), 'त्व' (महत्व) आदि अन्य प्रत्यय भी हैं। एक भाषा-भाषी समुदाय ही निश्चित करता है कि कौन-से प्रत्यय किस मूल शब्द के साथ लगाए जाएंगे। इस प्रकार शब्द-निर्माण की यह प्रक्रिया समाज द्वारा नियंत्रित होती है। प्रत्यय दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के प्रत्यय हैं- व्युत्पन्न प्रत्यय। व्युत्पन्न प्रत्यय वे हैं, जिससे हम अर्थ में विस्तार करते हैं। ऊपर हमने व्युत्पन्न प्रत्ययों की चर्चा की है। व्युत्पन्न प्रत्यय संज्ञा से संज्ञा, संज्ञा से विशेषण, विशेषण से संज्ञा आदि शब्दों के निर्माण में काम आते हैं। जब हम व्युत्पन्न प्रत्ययों का प्रयोग करते हैं तो कभी-कभी मूल शब्द में परिवर्तन हो जाता है। जैसे 'बचपन' शब्द में 'बच्चा' का बदला हुआ रूप देख सकते हैं। 'घुड़सवारी' में 'घोड़ा' शब्द का दूसरा रूप देख सकते हैं। व्युत्पन्न प्रत्यय से वास्तव में नए शब्दों का निर्माण किया जाता है और इससे शब्दावली की वृद्धि होती है। दूसरे प्रकार का प्रत्यय है- रूपात्मक प्रत्यय।

प्रत्ययों का प्रयोग दो प्रकार से होता है। कुछ प्रत्यय शब्द के अंत में आते हैं जैसे प, पन, त्व आदि। कुछ प्रत्यय शब्द के आरंभ में आते हैं जैसे अ + कारण, बे + रहम, ना + पसंद। यहाँ अ, बे, ना आदि विलोमार्थ सूचित करने वाले प्रत्यय हैं, जो शब्द से पहले आते हैं। व्याकरण में इन्हें उपसर्ग कहा जाता है। कुछ विद्वान इन्हें पूर्व-प्रत्यय भी कहते हैं।

शब्द रचना के संदर्भ में हमने देखा कि मूल शब्द के साथ प्रत्यय जोड़ने से हम नए शब्द निर्मित कर सकते हैं और एक भाषा-भाषी समुदाय इसी प्रक्रिया से नए शब्द गढ़ता है। आधुनिक युग में नए-नए विचारों को प्रकट करने के लिए हमें नए शब्दों के निर्माण की आवश्यकता होती है। जैसे हमने 'राष्ट्र' शब्द का प्रयोग शुरू किया तो राष्ट्रीय, अंतराष्ट्रीय, राष्ट्रीयकरण आदि नए शब्दों की भी आवश्यकता पड़ी। यह काम अब योजनाबद्ध तरीके से नवगठित संस्थाओं द्वारा भी किया जाने लगा है, जिससे समन्वित रूप में सारे आवश्यक शब्द भाषा की प्रकृति, एकरूपता आदि को ध्यान में रखते हुए निर्मित किए जा सकें। हिन्दी में नए शब्दों के निर्माण के लिए शिक्षा मंत्रालय के अधीन एक संस्था कार्य करती है, जिसका नाम है- 'वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग'। यह संस्था विविध विषयों के विद्वानों की सहायता से नए शब्दों के निर्माण करती है और शब्दकोशों के रूप में इन्हें प्रकाशित करती है। हिंदी में शब्द निर्माण के लिए हम ज्यादातर संस्कृत भाषा का सहारा लेते हैं, क्योंकि संस्कृत भाषा में शब्द बनाने की अपार क्षमता है।

उदाहरण के तौर पर हम 'आयोग' शब्द ले सकते हैं। यह अंग्रेजी के 'कमीशन' का वाचक शब्द है। लेकिन इस अर्थ में यह संस्कृत में प्रचलित नहीं था। संस्कृत में योग, संयोग, नियोग आदि शब्द तो थे, लेकिन आयोग नहीं। हमने कमीशन के

लिए आयोग शब्द का निर्माण किया और इस अर्थ में यह शब्द चल रहा है। संस्कृत से शब्द बनाने का एक और कारण है। किसी शब्द से अन्य संबद्ध शब्द बनाने के लिए भी हम संस्कृत भाषा का सहारा लेते हैं। आगे के शब्दों को देखिए -

कमिश्रर	आयुक्त
डिष्टी कमिश्रर	उपायुक्त
हाई कमिश्रर	उच्चायुक्त
हाई कमीशन	उच्चायोग आदि ।

शब्द रचना -

इस भाग में हम शब्दों की रचना के बारे में पढ़ेंगे। शब्द दो प्रकार के होते हैं-

मूल शब्द - वे शब्द जिन्हें हम और छोटे रूपों या खंडों में बाँट नहीं सकते।

जैसे- घर, आँख, देश, काम, जल, प्रेम, शब्द, पास, दौड़, पहुँच, चाल आदि।

व्युत्पन्न शब्द - वे शब्द जो मूल शब्दों में प्रत्यय या अन्य शब्द जोड़ने से बनते हैं।

प्रत्ययों के अर्थ मूल शब्द के अर्थ में विस्तार करते हैं।

उपसर्ग - दिन सु 'अच्छा' सुदिन - अच्छा दिन

चैन बे 'बिना' बेचैन - चैन रहित

प्रत्यय - एक ता 'भाव' एकता - एक होने का भाव

नया पन 'अवस्था या स्थिति' नयापन- नया होने की स्थिति

इस संदर्भ में हम आगे कुछ उपसर्गों की चर्चा करेंगे। **संस्कृत के उपसर्ग-** अति (अधिक), अतिवृष्टि, **अधि** (ऊपर) अधिकार, **अनु** (पीछे) - अनुगमन, **अप** (बुरा) - अपयश, **अव** (बुरा) - अवगुण, **अभि** (अधिक) अभिनव, **आ** (अपनी तरफ) आगमन.. **उत** (ऊपर) - उत्क्षेप, **दुः** (बुरा) - दुर्दिन, **निः** (बिना) निर्भय, **परा** (उलटा) पराजय, **परि** (चारों ओर का) परिपूर्ण, **प्रति** (उलटा) - प्रतिपक्ष, **प्र** (अधिक आगे) प्रगति, **वि** (विशिष्ट) - विज्ञान, **सं** (अच्छा)- संयोग, **सु** (अच्छा)-सुपुत्र, **कु** (बुरा) - कुपुत्र । कुछ शब्द भी उपसर्ग की तरह प्रयुक्त हैं। उदाहरण के लिए **अधः** (अधोगति), **अलम्** (अंलकार), **चिर** (चिरकाल), **पुरा** (पुरातत्व), **पुनः** (पुनर्जन्म), **सह** (सहगामी), **स्व** (स्वजन) आदि।

अरबी - फारसी के उपसर्ग: **ना** = नहीं (नापंसद), **ला** = नहीं (लाचार), **बे** = नहीं (बेचारा), **ब** = सहित (बखूबी), **बे** = बिना (बेमिसाल)। कुछ शब्द भी उपसर्गों की

नोट

तरह आते हैं। जैसे, **कम** (कम उम्र), **हर** (हरदम), **हम** (हमउम्र), **बद** (बदनाम)। फारसी 'परसर्ग' भी शब्द से पहले आते हैं। **ता** (तक) ताजिंदगी (जिंदगी तक), **दर** (में)- दरअसल (असल में) **बा** (से) बाकायदा (कायदे से)।

हिंदी में अपने उपसर्गों का पर्याप्त अभाव है। संस्कृत के उपसर्ग ही मूल रूप में या (बदले हुए) तद्भव रूप में हिंदी के शब्दों में आते हैं। जैसे निडर, कुपूत या कपूत, अनजान, अथाह। हिंदी में विशेषण शब्द के पहले आते हैं इनके अधूरे रूप उपसर्ग की तरह लगते हैं- चौराहा, तिगुना, दुनाली, अधमरा, सतलड़ा, नौगाँव आदि। शब्दांत प्रत्यय कई हैं, हमने इकाई 5 तथा 7 में संस्कृत के प्रत्यय ता, त्व, इत, इक आदि से शब्दों की रचना पर विचार कर लिया है। अन्य संस्कृत, अरबी, फारसी और हिंदी के प्रत्ययों की सूची आप हिंदी के किसी व्याकरण ग्रंथ में देख सकते हैं और उनसे बनने वाले हजारों की रचना के विषय में जान सकते हैं। यहाँ हम प्रत्ययों के अर्थ पक्ष की चर्चा करेंगे।

कर्त्ता सूचक प्रत्यय: **आर** (सुनार, लुहार), **एरा** (सपेरा, लुटेरा) **हारा** (लकड़हारा, मछुआरा), **बाज़** (कलाबाज, धोखेबाज), **गर** (जादूगर, कारीगर), **वाला** (मछलीवाला, केलेवाला), **अक** (पाठक, गायक, मारक), **इया** (रसोइया)।

भाववाचक प्रत्यय: (संज्ञा या विशेषण से) - **ई** (लंबाई, मिठाई, कलाबाजी, जादूगरी) **पा** (बुढ़ापा, मुटापा), **आहट** (घबराहट, चिकनाहट) ।

विशेषणसूचक प्रत्यय: **दार** (मालदार, असरदार), **कर** (भंयकर), **कारी** (आज्ञाकारी), **द** (दुखद, सुखद), **दायी** (दुखदायी), **नाक** (शर्मनाक, खौफनाक), **देह** (तकलीफदेह)।

लघुतासूचक प्रत्यय: डिब्बा-डिबिया, बेटी-बिटिया, खाट खटिया, कटोरा-कटोरी, पहाड़-पहाड़ी, नद-नदी।

लिंगसूचक प्रत्यय: **ई** (केलेवाली, चाची), **इन** (सुनारिन, मछुआरिन), **नी** (हथिनी, जादूगरनी, शेरनी) **इका** (अध्यापिका, गायिका, बालिका), **वती / मती** (सत्यवती, श्रीमती)।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

पारिभाषिक शब्दावली से तात्पर्य

आपके मन में सहज ही यह प्रश्न उठता होगा कि पारिभाषिक शब्द किसे कहते हैं, उनकी क्या विशेषता होती है तथा वे किस काम आते हैं। इन प्रश्नों के उत्तर से ही हम इस इकाई की शुरुआत करते हैं। आप जानते हैं कि भाषा की सबसे छोटी सार्थक इकाई को शब्द कहते हैं। प्रयोग के आधार पर शब्द तीन प्रकार के होते हैं 1) सामान्य शब्द, 2) अर्द्ध-पारिभाषिक शब्द, 3) पारिभाषिक शब्द ।

सामान्य शब्द- सामान्य शब्दों की श्रेणी में उन शब्दों को रखा जा सकता है जिनका 1 इस्तेमाल हम दिन-प्रतिदिन के सामान्य व्यवहार में करते हैं, जैसे वस्तुओं, स्थानों, संबंधों आदि के वाचक शब्द। इनका संबंध मूलतया मूर्त वस्तुओं, स्थितियों अथवा अवस्थाओं से होता है। किताब, कलम, घर, विद्यालय, बुढ़ापा, बचपन आदि सामान्य शब्द हैं।

अर्द्ध-पारिभाषिक शब्द अर्ध-पारिभाषिक शब्द उन शब्दों को कहा जा सकता है जो सामान्य और पारिभाषिक दोनों रूपों में प्रयुक्त होते हैं। सामान्य व्यवहार में प्रयुक्त होने के अलावा जब किसी क्षेत्र विशेष संदर्भ में उनका इस्तेमाल पारिभाषिक शब्द के रूप में किया जाता है। उदाहरण के लिए हम 'आदेश', 'दावा', 'रस' आदि शब्दों को ले सकते हैं।

पारिभाषिक शब्द पारिभाषिक शब्द वे शब्द होते हैं जिनकी निश्चित परिभाषा की जा सके अर्थात् जिसकी सीमाएँ बाँध दी गई हों। यानी वे शब्द जिनका किसी क्षेत्र विशेष में एक निश्चित अर्थ सीमित कर दिया गया हो और उस क्षेत्र विशेष में उन्हें उसी अर्थ में प्रयोग किया जाता है। किसी अन्य अर्थ में नहीं। उदाहरण के लिए जैसे एक शब्द है 'आयकर'। अब इस शब्द का प्रयोग किसी व्यक्ति अथवा संस्था की आय पर सरकार के राजस्व विभाग द्वारा वसूल की जाने वाली राशि से है। सरकार से भिन्न किसी संस्था द्वारा वसूल की जाने वाली राशि आयकर नहीं कहलाएगी।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि पारिभाषिक शब्द से तात्पर्य उस शब्द से है जो किसी क्षेत्र विशेष में एक निश्चित और परिसीमित अर्थ का द्योतक हो। उसकी परिभाषा या व्याख्या की जा सकती हो। उसमें ज्ञान के क्षेत्र, शास्त्र, विषय और प्रसंगानुसार नियतार्थता हो और भाषा व्यवहार वर्ग में उसके अर्थ में स्थिर संप्रेषणीयता हो, यानी उस भाषा के प्रयोक्ताओं को वह उसी अर्थ में स्वीकार्य हो।

पारिभाषिक शब्द के लक्षण अथवा विशेषताएँ -

प्रश्न है कि अपनी किन विशेषताओं के कारण कोई शब्द पारिभाषिक शब्द होता है, दूसरे शब्दों में किस दृष्टि से वह सामान्य शब्दों से विशिष्ट होता है। इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए पारिभाषिक शब्द के लक्षणों पर विचार करना आवश्यक है।

नियतार्थता - पारिभाषिक शब्द का अर्थ किसी ज्ञान विशेष के क्षेत्र में नियत और निश्चित होना चाहिए।

परस्पर अपवर्जिता अथवा अनन्यता - एक प्रमुख अर्थ को व्यक्त करने वाला एक ही शब्द होना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि पारिभाषिक शब्दों के पर्यायवाची नहीं होते। उदाहरण के लिए 'पानी', 'जल', 'नीर', तीन शब्दों का इस्तेमाल एक दूसरे की जगह हो सकता है लेकिन 'अधिकारी', 'प्राधिकारी', 'कर्मचारी' शब्दों का एक दूसरे के पर्याय के रूप में प्रयोग नहीं कर सकते।

योग्यता संवर्धन

नोट

स्पष्टता और असंदिग्धता - अर्थ की निश्चितता और परस्पर अपवर्जिता के लिए जरूरी है कि पारिभाषिक शब्द अपने आप में स्पष्ट और असंदिग्ध हो।

एक संकल्पना के लिए एक शब्द - यदि एक संकल्पना के लिए एक से अधिक शब्द होंगे तो उनकी अर्थगत अनन्यता कायम नहीं रहेगी।

भाषा की प्रकृति और उच्चारण पद्धति के अनुकूल हो - यह बात खासतौर पर उन शब्दों के संदर्भ में ध्यान रखने की है जिन्हें अन्य भाषाओं से लिया गया हो। जो शब्द हिंदी भाषा में चल पड़े हैं, वे तो उसकी प्रकृति के अनुरूप ढल गए हैं लेकिन जो बहुत अधिक प्रयोग में नहीं आए हैं, या जिनकी जरूरत अक्सर नहीं पड़ती है उनका अनुकूलन अपेक्षित होता है। यह अनुकूलन रचना और उच्चारण दोनों ही स्तरों पर किया जाता है।)

उर्वरता - उर्वरता से तात्पर्य है किसी शब्द के विस्तार की संभावना। अर्थात् संबंधित संकल्पना के विभिन्न पक्षों को प्रकट करने के लिए संबद्ध शब्द गढ़े जाने की संभावना। उदाहरण के लिए एक पारिभाषिक शब्द लेते हैं विधि। इसमें उपसर्ग-प्रत्यय आदि जोड़कर अन्य अनेक शब्द बनाए जा सकते हैं 'विधि', 'संविधि', 'संविधानिक', 'प्रविधि' आदि।

पारिभाषिक शब्दावली निर्माण की प्रक्रिया -

पारिभाषिक शब्दावली निर्माण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी विशेष क्षेत्र, विषय, या विज्ञान के लिए नए शब्दों को तैयार किया जाता है, ताकि उस क्षेत्र के विशिष्ट विचारों, अवधारणाओं और कार्यों को प्रभावी ढंग से व्यक्त किया जा सके। यह प्रक्रिया आमतौर पर वैज्ञानिक, तकनीकी, साहित्यिक, और शैक्षिक क्षेत्रों में अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है।

पारिभाषिक शब्दावली निर्माण की प्रक्रिया में निम्नलिखित मुख्य चरण होते हैं -

1. **समाज और संस्कृति की समझ** - शब्दावली निर्माण के पहले चरण में यह सुनिश्चित किया जाता है कि नए शब्द समाज और संस्कृति की आवश्यकता और संवेदनशीलताओं के अनुरूप हों। उदाहरण स्वरूप, वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण में यह देखा जाता है कि नया शब्द समाज में आसानी से समझा जा सके और इसे अपनाया जा सके।
2. **मूल शब्दों की पहचान और चयन** - शब्दावली निर्माण में सबसे पहले उस विषय के संदर्भ में मौजूदा शब्दों, धातुओं, और संस्कृतियों का विश्लेषण किया जाता है। यदि पहले से कोई शब्द उपलब्ध नहीं है, तो एक नया शब्द बनाने के लिए मौजूदा शब्दों को आधार बनाया जा सकता है।
3. **वर्ण्य और धातु-आधारित निर्माण** - पारिभाषिक शब्दावली बनाने के दौरान प्रायः धातुओं, उपसर्गों, और प्रत्ययों का उपयोग किया जाता है। यह शब्दों के निर्माण में सटीकता और स्पष्टता लाता है। उदाहरण के तौर पर, "संचार"

(communication) शब्द को "संच" (to send) और "आचार" (action) से लिया जा सकता है।

4. **अनुवाद और व्याख्या** - कई बार किसी क्षेत्र के पारिभाषिक शब्दों का अनुवाद अन्य भाषाओं में करना होता है। यह अनुवाद विषय के संदर्भ में सटीक अर्थ देने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी के "computer" शब्द का हिंदी में "संगणक" शब्द के रूप में अनुवाद किया गया है।
5. **साधारण और सरल रूप में प्रस्तुत करना** - नए शब्दों का निर्माण करते समय यह महत्वपूर्ण होता है कि वे सरल और साधारण रूप से समझे जा सकें। एक तकनीकी शब्द या अवधारणा का सरल रूप में प्रस्तुत करना, ताकि सामान्य जनता या उस क्षेत्र से परिचित न होने वाले लोग भी उसे समझ सकें, यह भाषा के विकास की प्रक्रिया का एक अहम हिस्सा है।
6. **साक्षात्कार और परिष्कार** - जब नए शब्दों का निर्माण किया जाता है, तो आमतौर पर उनके प्रयोग के लिए शब्दों की स्वीकृति की आवश्यकता होती है। इस प्रक्रिया में विशेषज्ञों, विद्वानों, और समाज के लोगों के साथ विचार-विमर्श किया जाता है, ताकि नया शब्द प्रचलन में आ सके। कई बार नए शब्दों को क्षेत्रीय, राष्ट्रीय, या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृति प्राप्त करने के लिए परिष्कृत किया जाता है।
7. **मानकीकरण** - पारिभाषिक शब्दावली के लिए मानकीकरण प्रक्रिया भी महत्वपूर्ण होती है। इसका उद्देश्य यह है कि नए शब्दों का प्रयोग एक समान तरीके से किया जाए और उनके अर्थ में कोई भ्रम न हो। इससे संबंधित आयोग या संस्थाएँ ये सुनिश्चित करती हैं कि शब्दों का सही उपयोग किया जाए और उनका एक निर्धारित अर्थ हो।
8. **प्रचार और प्रसार** - जब नए शब्दों को मान्यता मिल जाती है, तो उन्हें व्यापक रूप से समाज में फैलाने के लिए विभिन्न माध्यमों का उपयोग किया जाता है। यह शब्द शैक्षिक, वैज्ञानिक, और साहित्यिक पत्रिकाओं, किताबों, और इंटरनेट के माध्यम से लोगों तक पहुंचाए जाते हैं। इसके अलावा, शैक्षिक संस्थाओं में इनका प्रयोग बढ़ाने के लिए भी कदम उठाए जाते हैं।
9. **संस्कृत और अन्य भाषाओं से शब्दों का प्रयोग** - कभी-कभी, पारिभाषिक शब्दों के निर्माण में संस्कृत और अन्य भाषाओं के शब्दों का भी उपयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए, "अर्थशास्त्र" शब्द का निर्माण संस्कृत से हुआ है। इसी तरह, अन्य भाषाओं से ऐसे शब्द उठाए जाते हैं जो उस क्षेत्र के लिए उपयुक्त होते हैं।
10. **समीक्षा और सुधार** - शब्दावली निर्माण की प्रक्रिया एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया होती है। एक बार शब्दों का निर्माण हो जाने के बाद, उनकी समीक्षा योग्यता संवर्धन

नोट

की जाती है और यदि कोई सुधार आवश्यक हो, तो वह किया जाता है। यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाता है कि शब्दों का प्रयोग सही तरीके से हो रहा हो और उनके अर्थ में कोई भ्रम न हो।

हिंदी की विभिन्न प्रयुक्तियों से संबंधित पारिभाषिक शब्दावली -

हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली निर्माण की प्रक्रिया के बारे में आप जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। विभिन्न विषय क्षेत्रों में पारंपरिक शब्दावली को भी ग्रहण किया गया है तथा आवश्यकता के अनुसार नए शब्द गढ़े गए हैं। प्रशासन और विधि के क्षेत्र में फारसी से आए शब्दों का भी पर्याप्त प्रयोग है जबकि विज्ञान के क्षेत्र में शब्दावली के मूल रूप से दो स्तर हैं संस्कृत धातुओं पर शब्दावली और अंग्रेजी के माध्यम से गृहीत अंतर्राष्ट्रीय शब्दावली। वाणिज्य क्षेत्र की शब्दावली में पारंपरिक और अंग्रेजी से आए शब्दों का मेल है।

पत्रकारिता और विज्ञापन क्षेत्र की प्रयुक्तियाँ शब्दावली केंद्रित न होकर व्यवहार और विस्तार केंद्रित है क्योंकि इनका विस्तार हर क्षेत्र में है। हर क्षेत्र की शब्दावली इनमें आवश्यकतानुसार प्रयुक्त होती है, राजनीति, अर्थव्यवस्था, क्रीड़ा-जगत और वाणिज्य सभी पत्रकारिता के विषय है।

नीचे हम हिंदी की प्रमुख प्रयुक्तियों के कुछ शब्द आपकी जानकारी के लिए दे रहे हैं। इनका अर्थ आप शब्दकोश की सहायता से जान सकते हैं। इन विषय क्षेत्रों से संबंधित हिंदी सामग्री में इनका उपयोग भी देख सकते हैं।

प्रशासन - निविदा, संविदा, लेखा, तदर्थ समायोजन, अभिकरण, प्राधिकरण, प्रभारी, सेवा निवृत्ति, सेवा में व्यवधान, बजट, अंशदान, बेबाकी प्रमाण पत्र, भविष्य निधि, अभिग्रहण, वीजा, निरीक्षक, नक्शाकार, टेरिफ बोर्ड, तकनीकी लिपिक, राजपत्रित पद, स्थानापन्न अधिकारी, नगर भत्ता, सिविल सेवा, वसीयत, द्विसदनी।

वाणिज्य और बैंकिंग - प्रतिभूति, जमानत, दिवालिया, बीजक, बही खाता, अंत शेष, (रोकड़ बाकी) रोकड़ जमा, रोकड़ बही, रोकड़ शेष, लेखा परीक्षा, ड्राफ्ट, चेक आहरण, देय राशि, लेनदेन, निवेश, शोधन क्षमता, वाउचर, रसीद।

विज्ञान - उत्प्रेरक, अपदलन, कैटा थीसियम, ग्रेफाइट, रासायनिक भार, कीमिया, टर्बरी कॉमन संयुक्त सूक्ष्मदर्शी, अपचय, प्रक्रीर्णाग, कथन, भूस्खलन, एनोमाक्लोन, रेशेदार ऊतक, पूरक धातु, प्रदीप्तिशील, पारिस्थितिक।

विधि - अधिनियम, उपनियम, परिनियम, हस्तांतरण, समनुदेशन, करार, अनुबंध, मुल्लतवी करना, अपील, अपीलीय, व्यादेश, दोषसिद्धि, दोषमुक्ति लिखत, दस्तावेज, दांडिक कार्यवाही, आपराधिक षड्यंत्र।

सामाजिक विज्ञान - आदिम समाजवाद, पूंजीवाद, महानगर, उपनिवेशवाद, उत्पादन प्रणाली, सर्वहारा सार्वजनिक संपत्ति, लोक प्रशासन, वर्ग प्रणाली, कम्यून, समष्टि, व्यष्टि सामासिक संस्कृति, साम्राज्यवाद, बाजार प्रतिस्पर्धा, प्रबंधकीय क्रांति, पैतृकवाद, दबाव समूह।

नोट



गतिविधि 4.1

नीचे दिए गए विषयों से संबंधित 10-10 पारिभाषिक शब्द लिखिए और उनका हिंदी अनुवाद कीजिए -

(a) गणित

.....

.....

.....

(b) विज्ञान

.....

.....

.....

(c) कंप्यूटर

.....

.....

.....

अपनी प्रगति जांचें 4.1

1. अनुवाद की संक्षिप्त परिभाषा लिखिए।
.....
.....
2. अनुवाद के दो प्रमुख प्रकारों के नाम लिखिए।
.....
.....
3. अनुवाद का समाज और संस्कृति में क्या महत्व है?
.....
.....
4. एक अच्छा अनुवादक किन प्रमुख विशेषताओं से युक्त होना चाहिए?
.....
.....
5. 'भावानुवाद' और 'शाब्दिक अनुवाद' में अंतर स्पष्ट कीजिए।
.....
.....
6. हिंदी भाषा की शब्द-संपदा अनुवाद के क्षेत्र में कैसे सहायक है?
.....
.....
7. पारिभाषिक शब्दावली का अर्थ क्या है?
.....
.....

नोट

8. निम्नलिखित अंग्रेज़ी शब्दों के हिंदी पारिभाषिक शब्द लिखिए -

- (a) Biology (b) Software Engineer
(c) Computer (d) Electricity

.....
.....

9. हिंदी की कौन-कौन सी भाषाओं से शब्द संपदा में वृद्धि हुई है?

.....
.....

10. अनुवाद करते समय किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक होता है?

.....
.....

4.6 सारांश

"अनुवाद और शब्दविज्ञान" विषय भाषा की व्यावहारिक उपयोगिता और वैज्ञानिक संरचना को समझने का एक सशक्त माध्यम है। इसमें अनुवाद की परिभाषा, प्रकार, विशेषताएँ और महत्त्व को स्पष्ट किया गया है। अनुवाद केवल भाषा परिवर्तन नहीं, बल्कि भाव, आशय और संदर्भ को सही रूप में व्यक्त करने की प्रक्रिया है। इसके शाब्दिक, आशयात्मक, साहित्यिक और तकनीकी जैसे विभिन्न प्रकारों से यह ज्ञात होता है कि अनुवाद कैसे विभिन्न क्षेत्रों में उपयोगी है।

इस खंड में हिंदी की समृद्ध **शब्द-संपदा** — तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी स्पष्ट होता है। साथ ही **पारिभाषिक शब्दावली** (Technical Terminology) का अध्ययन यह दर्शाता है कि हिंदी विभिन्न वैज्ञानिक और प्रशासनिक क्षेत्रों में भी सहजता से प्रयोग की जा सकती है।

यह खंड विद्यार्थियों को भाषा के **व्यावहारिक प्रयोग, विस्तार, और संचार क्षमता** से जोड़ता है, जिससे वे अनुवाद, लेखन और तकनीकी संप्रेषण में दक्ष बन सकें। यह न केवल भाषा की समझ बढ़ाता है, बल्कि उसे रोजमर्रा के जीवन और व्यावसायिक जगत में उपयोगी भी बनाता है।

4.7 शब्दावली

क्रमांक	शब्द	अर्थ
1	अनुवाद	एक भाषा से दूसरी भाषा में भावांतर
2	आशय	अर्थ या भाव
3	पारिभाषिक शब्दावली	किसी विशेष क्षेत्र की तकनीकी शब्द-सूची

4	शाब्दिक अनुवाद	शब्द-शब्द का अनुवाद
5	आशयात्मक अनुवाद	भाव या आशय के अनुसार अनुवाद
6	तत्सम शब्द	संस्कृत से यथावत लिए गए शब्द
7	तद्भव शब्द	संस्कृत से विकसित होकर बदले हुए शब्द
8	देशज शब्द	देशी या स्थानीय भाषा से उत्पन्न शब्द
9	विदेशी शब्द	विदेशी भाषाओं से लिए गए शब्द
10	संप्रेषण	विचारों या भावों का आदान-प्रदान
11	भाषा संरचना	भाषा की बनावट या ढांचा
12	व्यावहारिक दृष्टिकोण	व्यवहार में उपयोग होने वाला दृष्टिकोण
13	समतुल्य	समान या बराबर
14	अनुवादनीयता	किसी बात को अनुवाद करने योग्य होना
15	वैज्ञानिक शब्दावली	विज्ञान से संबंधित तकनीकी शब्द

4.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर

1. अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसमें एक भाषा में व्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में समान अर्थ और भाव के साथ प्रस्तुत किया जाता है।
2. शाब्दिक अनुवाद और भावानुवाद।
3. अनुवाद भाषाओं और संस्कृतियों के बीच सेतु का कार्य करता है, ज्ञान के आदान-प्रदान को संभव बनाता है और विभिन्न समाजों को जोड़ता है।
4. एक अच्छा अनुवादक सटीक, संवेदनशील, संदर्भ-प्रेमी, सृजनशील और दो भाषाओं का गहरा ज्ञाता होना चाहिए।
5. शाब्दिक अनुवाद में शब्द-से-शब्द अर्थ दिया जाता है जबकि भावानुवाद में मूल भाव, संदर्भ और शैली को ध्यान में रखकर अनुवाद किया जाता है।
6. हिंदी में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों के समावेश के कारण यह अनुवाद की दृष्टि से समृद्ध और लचीली भाषा है।
7. पारिभाषिक शब्दावली से आशय उन विशेष शब्दों से है जो किसी विशिष्ट विषय या क्षेत्र में मानकीकृत अर्थ में प्रयुक्त होते हैं।
8. (a) Biology → जीवविज्ञान
(b) Software Engineer → सॉफ्टवेयर अभियंता
(c) Computer → संगणक
(d) Electricity → विद्युत

नोट

9. हिंदी ने संस्कृत, उर्दू, फारसी, अंग्रेज़ी और देशज भाषाओं से शब्द लेकर अपनी शब्द-संपदा को समृद्ध किया है।
10. अनुवाद करते समय भाषा की प्रकृति, संदर्भ, मूल आशय, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और शैलीगत अनुरूपता का ध्यान रखना आवश्यक होता है।

4.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) -1	http://books.aisectonline.com/User/UnitUrls?unitId=10	

4.10 संदर्भ

1. हिंदी अनुवाद कला - डॉ. कृष्ण कुमार गोस्वामी
2. अनुवाद - सिद्धांत और प्रयोग - डॉ. माधव एच. भंडारी
3. हिंदी भाषा और शब्दविज्ञान - डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र
4. व्यावसायिक हिंदी और अनुवाद कौशल - डॉ. वी.एन. झा
5. शब्दविज्ञान और हिंदी शब्दकोश - डॉ. राजेंद्र कुमार त्रिपाठी
6. अनुवाद - सिद्धांत और प्रक्रिया - डॉ. रमेश कुमार शर्मा
7. हिंदी की पारिभाषिक शब्दावली का विकास - डॉ. उषा रावत
8. अनुवाद विमर्श - डॉ. पुरुषोत्तम अग्रवाल
9. हिंदी भाषा का विकास और शब्द संपदा - डॉ. रामनिवास शर्मा

4.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ) -

1. अनुवाद का मुख्य उद्देश्य क्या होता है?

- | | |
|---|--------------------|
| a) नई भाषा सीखना | b) मौलिक रचना करना |
| c) एक भाषा के विचारों को दूसरी भाषा में प्रस्तुत करना | d) नकल करना |

2. भावानुवाद में मुख्य ध्यान किस पर होता है?

- | | |
|-----------------------|-----------------|
| a) शब्दों की गिनती पर | b) व्याकरण पर |
| c) मूल भावना पर | d) लिप्यंतरण पर |

3. तकनीकी अनुवाद का संबंध किससे होता है?

- | | |
|-----------------------|--------------------------------------|
| a) कविताओं से | b) वैज्ञानिक और प्रशासनिक ग्रंथों से |
| c) धार्मिक ग्रंथों से | d) विज्ञापन से |

4. "अनुवाद" शब्द किस भाषा से लिया गया है?

- | | |
|----------|--------------|
| a) उर्दू | b) संस्कृत |
| c) अरबी | d) अंग्रेज़ी |

5. निम्न में से कौन-सा हिंदी में अनूदित पारिभाषिक शब्द है?

- | | |
|------------------|------------|
| a) सेटेलाइट | b) इंटरनेट |
| c) कान्सटीट्युशन | d) उपग्रह |

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

- 1. C) एक भाषा के विचारों को दूसरी भाषा में प्रस्तुत करना** - यही अनुवाद का मूल कार्य है।
- 2. C) मूल भावना पर** - भावानुवाद में शाब्दिकता नहीं, भावना की शुद्धता प्रमुख होती है।
- 3. B) वैज्ञानिक और प्रशासनिक ग्रंथों से** - तकनीकी अनुवाद मुख्यतः इन क्षेत्रों में होता है।
- 4. B) संस्कृत** - "अनुवाद" शब्द संस्कृत से लिया गया है, जिसका अर्थ है 'किसी के पीछे कहना'।
- 5. D) उपग्रह** - यह "Satellite" का हिंदी में अनूदित पारिभाषिक शब्द है।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. अनुवाद दो भाषाओं के बीच किस प्रकार से सेतु का कार्य करता है?
2. भावानुवाद में किस तत्व की अभिव्यक्ति को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है?
3. "कंप्यूटर" शब्द के लिए हिंदी में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द क्या है और वह क्यों उपयुक्त है?
4. अनुवाद के लिए स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के ज्ञान का महत्व स्पष्ट कीजिए।

नोट

5. हिंदी की शब्द-संपदा के विकास में अनुवाद प्रक्रिया किस प्रकार सहायक सिद्ध हुई है?

Part – 2

C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. अनुवाद की परिभाषा दीजिए और उसके प्रमुख उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए। साथ ही यह भी बताइए कि अनुवाद किस प्रकार भाषाई सेतु का कार्य करता है।
2. भावानुवाद और शाब्दिक अनुवाद में क्या अंतर है? उनके प्रयोग कब और क्यों आवश्यक होते हैं, उदाहरण सहित स्पष्ट करें।

Part – 3

D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. अनुवाद के विभिन्न प्रकारों का उदाहरण सहित वर्णन कीजिए। इनमें साहित्यिक, तकनीकी, वैज्ञानिक और व्यावसायिक अनुवाद कैसे भिन्न हैं?
2. अनुवाद का सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में क्या महत्त्व है? विशेषकर भारत जैसे बहुभाषी देश में यह किस प्रकार की भूमिका निभाता है?
3. एक अच्छे अनुवाद की क्या विशेषताएँ होनी चाहिए? उन विशेषताओं को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
4. हिंदी में पारिभाषिक शब्दावली के विकास में अनुवाद की क्या भूमिका रही है? इस प्रक्रिया ने आधुनिक हिंदी को कैसे समृद्ध किया?



आईसेक्ट विश्वविद्यालय समूह

एस. एल. एम. प्रतिक्रिया प्रपत्र (फीडबैक फॉर्म)

कार्यक्रम : _____
पाठ्यक्रम : _____
ब्लॉक : _____
इकाई : _____

प्रिय छात्र,

इस खंड की इकाइयों का अध्ययन करते समय, आपको पाठ के कुछ हिस्सों को समझने में कठिनाई हो सकती है। हम पाठ्यक्रम को बेहतर बनाने के लिए आपकी कठिनाइयों और सुझावों को जानना चाहते हैं। इसलिए, हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप इस ब्लॉक से संबंधित निम्नलिखित प्रश्नावली को भरकर हमें भेजें। यदि आपको दिया गया स्थान अपर्याप्त लगता है, तो कृपया एक अलग शीट का उपयोग करें।

कृपया मेल करें aisectcontent@aisect.org / ऑनलाइन फॉर्म भरने के लिए QR को स्कैन करें :

प्रश्नावली

- नाम : _____
- नामांकन क्र :

--	--	--	--	--	--	--	--	--	--	--	--
- इकाइयों का अध्ययन करने के लिये आपको कितने घंटों की आवश्यकता थी? :

--
- कृपया इस ब्लॉक को पढ़ने के आधार पर निम्नलिखित मदों पर अपनी प्रतिक्रिया दें:

अवयव	उत्कृष्ट	बहुत अच्छा	अच्छा	खराब	विशिष्ट उदाहरण दें (यदि खराब हो)
प्रस्तुति गुणवत्ता					
भाषा और शैली					
रेखांकन					
प्रयुक्त (आरेख, तालिकाएं, आदि)					
संकल्पनात्मक स्पष्टता					
अपनी प्रगति जाँचें प्रश्न					
सुझाए गए पठन – OER					

5. अन्य सुझाव :

खंड - 3	भाषा का प्रवाह	97-140
इकाई - 5	व्यक्तित्व, व्यंग्य और समाज : अनुभवों की साहित्यिक अभिव्यक्ति	99
इकाई - 6	भाषा की संरचना और अभिव्यक्ति की शक्ति	119



भाषा केवल संवाद का साधन नहीं है, यह समाज, संस्कृति और व्यक्ति के बीच संबंधों का निर्माण करती है। इस खंड में भाषा के प्रवाह और उसके साहित्यिक तथा सामाजिक प्रभावों का विश्लेषण किया जाएगा। भाषा की उत्पत्ति, विकास और संरचना को समझाने के साथ-साथ विद्यार्थियों को यह बताया जाएगा कि कैसे व्यंग्य, व्याख्या और आलोचना के माध्यम से भाषा समाज में विचारों का आदान-प्रदान करती है। व्यक्तित्व निर्माण में भाषा की भूमिका और व्यंग्यात्मक साहित्य की सामाजिक आलोचना को भी इस खंड में स्थान दिया गया है। साहित्यिक अभिव्यक्ति के माध्यम से समाज में व्याप्त विसंगतियों, विडंबनाओं और विरोधाभासों को व्यक्त करने की क्षमता विद्यार्थियों में विकसित की जाएगी। भाषा की वैज्ञानिक संरचना, जैसे ध्वनि, शब्द, वाक्य और अर्थ, का परिचय देते हुए भाषा अध्ययन को रोचक और उपयोगी बनाया गया है। यह खंड विद्यार्थियों में सामाजिक दृष्टिकोण, आलोचनात्मक सोच और सांस्कृतिक समझ को मजबूती प्रदान करेगा।

इकाई – 5

व्यक्तित्व, व्यंग्य और समाज - अनुभवों की साहित्यिक अभिव्यक्ति

इकाई की रूपरेखा

- 5.1 परिचय
- 5.2 उद्देश्य
- 5.3 'विलायत पहुँच ही गया' (आत्मकथांश) महात्मा गाँधी
- 5.4 सारांश
- 5.5 शब्दावली
- 5.6 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर
- 5.7 सहायक पाठ्य सामग्री
- 5.8 संदर्भ
- 5.9 अभ्यास

5.1 परिचय

"व्यक्तित्व, व्यंग्य और समाज" शीर्षक के अंतर्गत साहित्य की उन विधाओं को सम्मिलित किया गया है, जो **व्यक्तिगत अनुभव, सामाजिक पर्यवेक्षण और समकालीन चेतना** को साहित्यिक अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं। इस खंड में तीन भिन्न रचनाएँ शामिल हैं —

'विलायत पहुँच ही गया' (आत्मकथांश) – महात्मा गाँधी,

'अफसर' (व्यंग्य) – शरद जोशी,

'तीर्थयात्रा' (कहानी) – डॉ. मिथलेश कुमार मिश्रा।

इन रचनाओं में अलग-अलग शैलियों के माध्यम से समाज, व्यक्ति और व्यवस्था पर गहन दृष्टिपात किया गया है।

- ◆ 'विलायत पहुँच ही गया' में महात्मा गाँधी अपने इंग्लैंड प्रवास के आरंभिक अनुभवों को बड़ी सादगी, आत्मविश्लेषण और विनम्रता के साथ प्रस्तुत करते हैं। इसमें उनका संघर्ष, भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी निष्ठा और आत्मसंयम की झलक मिलती है।
- ◆ 'अफसर' शरद जोशी द्वारा रचित एक तीखा व्यंग्य है, जो अफसरशाही की विसंगतियों, दिखावे और औपचारिकताओं पर हास्य के माध्यम से प्रहार करता है। यह रचना समाज की प्रशासनिक व्यवस्था की विडंबनाओं को उजागर करती है।
- ◆ 'तीर्थयात्रा' एक सामाजिक कहानी है जो वृद्धों की उपेक्षा, पारिवारिक संवेदनहीनता और धार्मिक आडंबर पर करारा प्रश्नचिह्न लगाती है। इसमें तीर्थयात्रा को एक प्रतीक के रूप में लेकर सामाजिक यथार्थ को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

5.2 उद्देश्य

1. विद्यार्थियों को साहित्य की विभिन्न विधाओं — आत्मकथा, व्यंग्य और कहानी से परिचित कराना
2. व्यक्तित्व निर्माण में अनुभवों और आत्ममंथन की भूमिका को समझाना।
3. समाज की विसंगतियों और संस्थागत विडंबनाओं की पहचान कराना।
4. व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से सोचने और हँसने की दृष्टि विकसित करना।
5. सामाजिक चेतना को गहराई से आत्मसात कराने वाले साहित्य से विद्यार्थियों को जोड़ना।
6. छात्रों में आलोचनात्मक और भावात्मक दृष्टिकोण का विकास करना।

5.3 'विलायत पहुँच ही गया' (आत्मकथांश) – महात्मा गांधी,

विलायत पहुँच ही गया (आत्मकथांश) महात्मा गांधी

जहाज में मुझे समुद्र का जरा भी कष्ट नहीं हुआ। पर जैसे-जैसे दिन बीतते जाते, वैसे-वैसे मैं अधिक परेशान होता जाता था। 'स्टुअर्ड' के साथ बातचीत करने में भी शरमाता था। अंग्रेजी में बात करने की मुझे आदत ही न थी। मजमुदार को छोड़कर दूसरे सब मुसाफिर अंग्रेज थे। मैं उनके साथ बोल न पाता था। वे मुझसे बोलने का प्रयत्न करते, तो मैं समझ न पाता, और समझ लेता तो जवाब क्या देना सो सूझता न था। बोलने से पहले हर एक वाक्य को जमाना पड़ता था। काँटे चम्मच से खाना आता न था, और किस पदार्थ में मांस है, यह पूछने की हिम्मत नहीं होती थी। इसलिए मैं खाने की मेज पर तो कभी गया ही नहीं। अपनी कोठरी में ही खाता था। अपने साथ खास करके जो मिठाई वगैरा लाया था, उन्हीं से काम चलाया। मजमुदार को तो कोई संकोच न था। वे सबके साथ घुलमिल गए थे। डेक पर भी आजादी से जाते थे। मैं सारे दिन कोठरी में बैठा रहता था। कभी-कभार, जब डेक पर थोड़े लोग होते, तो कुछ देर वहाँ जाकर बैठ लेता था। मजमुदार मुझे समझाते कि सब के साथ घुलो- मिलो आजादी से बातचीत करो, वे मुझसे यह भी कहते कि वकील की जीभ खूब चलनी चाहिए। वकील के नाते वे अपने अनुभव सुनाते और कहते कि अंग्रेजी हमारी भाषा नहीं है, उसमें गलतियाँ तो होगी ही, फिर भी खुलकर बोलते रहना चाहिए। पर मैं अपनी भीरुता छोड़ न पाता था।

मुझ पर दया करके एक भले अंग्रेज ने मुझसे बातचीत शुरू की। वे उमर में बड़े थे। मैं क्या खाता हूँ, कौन हूँ, कहाँ जा रहा हूँ, किसी से बातचीत क्यों नहीं करता, आदि प्रश्न वे पूछते रहते। उन्होंने मुझे खाने की मेज पर जाने की सलाह दी। मांस न खाने के मेरे आग्रह की बात सुनकर वे हँसे और मुझ पर तरस खाकर बोले, 'यहाँ तो ((पोर्ट्सईड पहुँचने से पहले तक) ठीक है, पर बिस्के की खाड़ी में पहुँचने पर तुम अपना विचार बदल लोगे। इंग्लैंड में तो इतनी ठंड पड़ती है कि मांस खाए बिना चलता ही नहीं।'

मैंने कहा, 'मैंने सुना है कि वहाँ लोग मांसाहार के बिना रह सकते हैं।' वे बोले, 'इसे गलत समझो। अपने परिचितों में मैं ऐसे किसी आदमी को नहीं जानता, जो मांस न खाता हो।

सुनो, मैं शराब पीता हूँ, पर तुम्हें पीने के लिए नहीं कह सकता। लेकिन मैं समझता हूँ कि तुम्हें मांस को खाना ही चाहिए।'

मैंने कहा, 'इस सलाह के लिए मैं आपका आभार मानता हूँ, पर मांस न खाने के लिए मैं अपनी माताजी से वचनबद्ध हूँ। इस कारण मैं मांस नहीं खा सकता। अगर उसके बिना काम न चला तो मैं वापस हिंदुस्तान चला जाऊँगा, पर मांस तो कभी न खाऊँगा।'

बिस्के की खाड़ी आई। वहाँ भी मुझे न तो मांस की जरूरत मालूम दूई और न मदिरा की। मुझसे कहा गया कि मैं मांस न खाने के प्रमाण पत्र इकट्ठा कर लूँ। इसलिए इन अंग्रेज मित्र से मैंने प्रमाण पत्र माँगा। उन्होंने खुशी-खुशी दे दिया। कुछ समय तक मैं उसे धन की तरह सँभाले रहा। बाद में मुझे पता चला कि प्रमाण-पत्र तो मांस खाते हुए भी प्राप्त किए जा सकते हैं। इसलिए उनके बारे में मेरा मोह नष्ट हो गया। अगर मेरी बात पर भरोसा नहीं है तो ऐसे मामले में प्रमाण-पत्र दिखा कर मुझे क्या लाभ हो सकता है?

दुख-सुख सहते हुए यात्रा समाप्त करके हम साउदैएन बंदरगाह पर पहुँचे। मुझे याद है कि उस दिन शनिवार था। जहाज पर मैं काली पोशाक पहनता था। मित्रों ने मेरे लिए सफेद फलालैन के कोट-पतलून भी बनवा दिए थे। उन्हें मैंने विलायत में उतरते समय पहनने का विचार कर रखा था, यह समझकर कि सफेद कपड़े अधिक अच्छे लगेंगे। मैं फलालैन का सूट पहनकर उतरा। मैंने वहाँ इस पोशाक में एक अपने को ही देखा। मेरी पेटियाँ और उनकी चाबियाँ तो ग्रिंडले कंपनी के एजेंट ले गए थे। सबकी तरह मुझे भी करना चाहिए, यह सोच कर मैंने तो अपनी चाबियाँ भी दे दी थी। मेरे पास चार सिफारशी पत्र थे डॉक्टर प्राणजीवन मेहता के नाम, दलपतराम शुक्ल के नाम, प्रिंस रणजीतसिंह के नाम और दादाभाई नौरोजी का नाम। मैंने साउदैएन से डॉक्टर मेहता को एक तार भेजा था। जहाज में किसी ने सलाह दी थी कि विक्टोरिया होटल में ठहरना चाहिए। इस कारण मजमुदार और मैं उस होटल में पहुँचे। मैं अपनी सफेद पोशाक की शरम से गड़ा जा रहा था। तिस पर होटल में पहुँचने पर पता चला कि अगले दिन रविवार होने से बिंडले के यहाँ से सामान नहीं आएगा। इससे मैं परेशान हुआ।

सात-आठ बजे डॉक्टर मेहता आए। उन्होंने प्रेमभरा विनोद किया। मैंने अनजाने रेशमी रोओवाली उनकी टोपी देखने के खयाल से उठाई और उस पर उलटा हाथ फेरा। इससे टोपी के रोएँ खड़े हो गए। डॉक्टर मेहता ने देखा, मुझे तुरंत ही रोका। पर अपराध तो हो चुका था। उनके रोकने का नतीजा तो यही निकल सकता था कि दुबारा वैसा अपराध न हो।

समझिए कि यहीं से यूरोप के रीति-रिवाजों के संबंध में मेरी शिक्षा का श्रीगणेश हुआ। डॉक्टर मेहता हँसते-हँसते बहुत-सी बातें समझाते जाते थे। किसी की चीज छूनी नहीं चाहिए, किसी से जान-पहचान होने पर जो प्रश्न हिंदुस्तान में यों ही पूछे जा सकते हैं, वे यहाँ नहीं पूछे जा सकते, बातें करते समय ऊँची आवाज से नहीं बोल सकते, हिंदुस्तान में अंग्रेजों से बात करते समय 'सर' कहने का जो रिवाज है, वह यहाँ अनावश्यक है, 'सर' तो नौकर अपने मालिक से अथवा बड़े अफसर से कहता है। फिर उन्होंने होटल में रहने के खर्च की भी चर्चा की और सुझाया कि किसी निजी कुटुंब में रहने की जरूरत पड़ेगी।

इस विषय में अधिक विचार सोमवार पर छोड़ा गया। कई सलाह देकर डॉक्टर मेहता बिदा हुए।

होटल में आकर हम दोनों को यही लगा कि यहाँ कहाँ आ फँसे। होटल महँगा भी था। माल्टा से एक सिंधी यात्री जहाज पर सवार हुए थे। मजमुदार उनसे अच्छे से घुलमिल गए थे। ये सिंधी यात्री लंदन के अच्छे जानकार थे। उन्होंने हमारे लिए दो कमरे किराए पर लेने की जिम्मेदारी उठाई। हम सहमत हुए और सोमवार को जैसे ही सामान मिला, बिल चुका कर उक्त सिंधी सज्जन द्वारा ठीक किए कमरों में हमने प्रवेश किया। मुझे याद है कि मेरे हिस्से का होटल का बिल लगभग तीन पौंड का हुआ था। मैं तो चकित ही रह गया। तीन पौंड देने पर भी भूखा रहा। होटल की कोई चीज रुचती नहीं थी, दूसरी ली, पर दाम तो दोनों के चुकाने चाहिए। यह कहना ठीक होगा कि अभी तो मेरा काम बंबई से लाए हुए पाथेय से ही चल रहा था।

इस कमरे में भी मैं परेशान रहा। देश की याद खूब आती थी। माताजी का प्रेम मूर्तिमान होता था। रात पड़ती और मैं रोना शुरू करता। घर की अनेक स्मृतियों की चढ़ाई के कारण नींद तो आ ही कैसे सकती थी? इस दुख की चर्चा किसी से की भी नहीं जा सकती थी, करने से लाभ भी क्या था? मैं स्वयं नहीं जानता था कि किस उपाय से मुझे आश्वासन मिलेगा। यहाँ के लोग विचित्र, रहन-सहन निचित्र, घर भी विचित्र, घरों में रहने का ढंग भी विचित्र! क्या कहने और क्या करने से यहाँ शिष्टाचार के नियमों का उल्लंघन होगा, इसकी जानकारी भी मुझे बहुत कम थी। तिस पर खाने-पीने की परहेज, और खाने योग्य आहार सूखा तथा नीरस लगता था। इस कारण मेरी दशा सरौते के बीच सुपारी जैसी हो गई। विलायत में रहना मुझे अच्छा नहीं लगता था और देश भी लौटा नहीं जा सकता था। विलायत पहुँच जाने पर तो तीन साल वहाँ पूरे करने का मेरा आग्रह था।

सन्दर्भ -

यह आत्मकथांश महात्मा गांधी की आत्मकथा "सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा" से लिया गया है। इसमें उन्होंने इंग्लैंड की यात्रा के दौरान अपने पहले अनुभवों, मानसिक संघर्षों और सांस्कृतिक भिन्नताओं का वर्णन किया है। यह खंड उनके **संकोचशील, आत्मनिष्ठ और सच्चरित्र** व्यक्तित्व को उजागर करता है।

प्रसंग -

जब गांधी जी इंग्लैंड कानून की पढ़ाई के लिए जा रहे थे, तब वे पहली बार यूरोप के संपर्क में आए। वहाँ का जीवन, भाषा, खानपान, रहन-सहन और रीति-रिवाज उनके लिए **बिल्कुल नए और अजनबी** थे। इस प्रसंग में उन्होंने यात्रा से लेकर होटल में रहने, नए लोगों से मिलने, अंग्रेज़ी बोलने की झिझक और देश की याद तक—हर भावना को बेहद **ईमानदारी और आत्मसमीक्षा के साथ** व्यक्त किया है।

व्याख्या -

यात्रा की कठिनाइयाँ - जहाज में गांधी जी को समुद्र से कोई तकलीफ नहीं हुई, लेकिन वे संवादहीनता, खानपान और सामाजिक मेलजोल में असहज रहे। अंग्रेज़ी में बोलने की आदत न होने के कारण वे बातचीत करने से बचते रहे।

भीतर की संकोचशीलता - वे स्टुअर्ड से बात करने से झिझकते, डेक पर भी कम जाते, खाने की मेज से दूर रहते और अपनी कोठरी में अकेले रहते। यह गांधी जी के **भीतर के अंतर्मुखी और आत्मसंयमी स्वभाव** को दर्शाता है।

माँ से किया व्रत - जब एक अंग्रेज़ ने उन्हें मांसाहार की सलाह दी तो गांधी जी ने स्पष्ट कह दिया कि वे अपनी माँ से किए व्रत के कारण मांस नहीं खा सकते। इससे उनके **संकल्प, चरित्र और नैतिक बल** का पता चलता है।

सांस्कृतिक भिन्नता का प्रभाव - इंग्लैंड पहुँचने पर गांधी जी को पता चला कि वहाँ के रीति-रिवाज, वेशभूषा और बातचीत का ढंग बिल्कुल अलग है। डॉक्टर मेहता ने उन्हें वहाँ के शिष्टाचार सिखाए। पर गांधी जी हर समय **संकोच और आत्ममंथन** में डूबे रहते थे।

मन की पीड़ा और देश की याद - लंदन के कमरे में रहकर वे बार-बार माताजी और घर की याद में रोते थे। यह उनकी **गंभीर संवेदनशीलता और मातृभक्ति** का परिचायक है। भोजन, बोली, रीति और रहन-सहन सब कुछ उन्हें अनजान लगता था।

आत्मसंघर्ष और संकल्प - गांधी जी के मन में इंग्लैंड में तीन साल पूरे करने का दृढ़ संकल्प था। उन्होंने सभी कठिनाइयों को सहते हुए मानसिक और आत्मिक रूप से अपने आप को तैयार किया।

5.4 'अफसर' (व्यंग्य) – शरद जोशी,

अफसर - (व्यंग्य) शरद जोशी

नाव में अफसर के साथ बैठने से बेहतर है कि डूब मरिए, क्योंकि जब सूराख होगा, वह आपसे इसका स्पष्टीकरण मांगेगा। जब नाव हचकोले लेती इधर-उधर डोलेगी, वह आपको जलती आँखों से घूरेगा और डांट लगायेगा। और जब वह धीरे-धीरे सधी हुई लहरों पर बहती चली जाएगी तब? तब वह आपका आभारी नहीं होगा। वह अपने को सफल अफसर मानेगा, जिसके योग्य प्रशासन में नाव ठीक चल रही है।

चांदनी रात है। हवा है। लहर है। चारों तरफ़ वही अमृत बिखरा है जिसमें रोमांस पनपता है और कविताएँ लिखी जाती हैं। पर नाव में एक अफसर बैठा है। हो सकता है इस संगीतमय वातावरण में वह किसी फ़ाइल का किस्सा छेड़ दे - उस फ़ाइल का जो इस समय मुख्य सचिव के पास है, जिसमें मूल टीप अफसर की है और जो केबिनेट के सामने जाने वाली है।

मन करता है नाव से कूद पड़े, क्योंकि दुनिया की जिन झंझटों से मुक्ति पाने के लिए आप नाव में बैठे थे वे इस काव्यमय वातावरण में भी ज्यों-की-त्यों हैं। ग़लती वास्तव में आपकी है। आप नाव में अफसर के साथ बैठे ही क्यों? अफसर अफसर होता है और वह जितना दफ़्तर में अफसर होता है उतना ही नाव में होता है। वह बोर करता है, पर वह इतना सहज बोर है कि बेचारा नहीं जानता कि बोर है। और वह यह भी नहीं जानता कि वह नाव में बैठा है, जब तक आप उसे 'मेमो' न थमा दें कि सर, यह चांदनी रात है और जो

यह ठण्डी हवा चल रही है, भगवान् के बजट में इसका प्रावधान है। और हुजूर, श्रीमान, हेड आफिस से आर्डर हुए हैं कि आप पूनम की रात नाव पर बैठकर सैर को जाएँ।

लोग सोचते हैं, अफसर किस मिट्टी का बना है? मिट्टी तो देशी है, सिर्फ सांचा विदेशी है, जिसमें अफसर ढलता है। अफसर ढलकर तैयार होता है या जनम से अफसर हो जाता है, यह बहस का विषय है। यह सच है कि कुछ लोग पैदायशी अफसर होते हैं। अफसर से रिटायर होने के बाद भी आदमियों में अफसरत्व कायम रहता है, जो घर के लोगों को परेशान करता है। वह परम अवस्था जब पत्नी एक न सुलझने वाली चिरपेंडिंग साक्षात् फ़ाइल की तरह नजर आती है और हर बच्चा अपने-आप में एक केस लगता है, जो हमेशा अनुशासन भंग करता है, पर जिसे न 'सस्पेंड' किया जा सकता है और न जिसका 'प्रमोशन' रोका जा सकता है। वे घर को एक दफ़्तर की तरह चलाते हैं। और जिस तरह दफ़्तर वे कभी ठीक नहीं चला पाये उसी तरह घर भी नहीं चला पाते। जब तक चार सब्जीवालों से मौखिक टेंडर न ले लें, वे कद्दू नहीं खरीदते और जब तक वे 'संक्शन' नहीं दें, प्यार नहीं करते।

वर्षों हो गये। कितने अफसर आये और चले गये। कितनी कुर्सियाँ उनके वजन से चरमराकर टूटीं और फेंक दी गयीं, पर वजन वही रहा। फ़ाइलें उसी तरह बनती और विकसित होती रहीं। अफसर जाता है, पर अफसरी बनी रहती है। वह एक आत्मा है, एक शरीर के रिटायर होने के बाद नया शरीर ग्रहण कर लेती है। अफसर नहीं जाता, वह कायम रहता है। जिस तरह राजा नहीं मरता, उसी तरह अफसर भी नहीं मरता। वह विद्यमान रहता है। पेड़ उगते हैं और उनसे टेबल-कुरसी बनती हैं। कागज का कारखाना चलता है और फ़ाइलें तैयार होती रहती हैं। पता नहीं जब भोज-पत्र पर लिखा जाता था तब फ़ाइलें कैसी होती होंगी! अब उसका सवाल नहीं, क्योंकि कागज की कमी नहीं और अफसरों की कमी नहीं। जैसे-जैसे कागज बढ़ेंगे, नये 'सेक्शन' खुलेंगे और नित नये अफसर कुर्सी पर यों शोभा देंगे जैसे गमले में पौधा, जो झूमता रहता है, खिलता भी रहता है, पर जड़ से मजबूत होता है, हिलता नहीं। देश का विकास होगा, यानी अफसरों का विकास होगा। एक गड्ढा भी बिना दस्तखत के नहीं खुद सकता, सो ज्यादा से ज्यादा अफसर चाहिए। और वे आयेंगे। विकास हो न हो, अफसर आयेंगे।

हर नया अफसर अपने में गमक लिये रहता है। जब आता है चमन में बहार बनकर आता है, और जब जाता है मर्तबान का अचार बनकर जाता है।

कभी अफसर को जाते हुए देखिए। तबादले का दृश्य बड़ा रोचक होता है। कहा जाता है कि इस मौके पर हम क्या कहें! एक तरफ़ हमें बड़ा अफ़सोस है कि वर्मा साहब आज हमारे बीच से जा रहे हैं और दूसरी तरफ़ हमें खुशी भी है कि शर्मा साहब हमारे बीच आ रहे हैं। विदाई का भाषण देने वाले के सामने धरम-संकट रहता है। नये अफसर को मक्खन लगाने और जाते हुए के लिए शाब्दिक अफ़सोस प्रकट करने की मिश्रित अभिव्यक्ति के लिए उसे शब्द नहीं सूझते। कुछ शब्द हैं जो कह दिये जाते हैं और जाता हुआ अफसर संतोष कर नेता है। एक प्लेट से चमचा कूदकर दूसरे प्लेट में आ जाता है। नया अफसर यानी सब कुछ नया। यहां की टेबल वहाँ और वहाँ की टेबल यहाँ। सफ़ाई, झाड़ू चुस्त। नये अफसर को क्रोटन पसन्द है, सो पुराने अफसर के कैक्टस गये भाड़ में।

'पंचुअलटी' पर विशेष जोर। साढ़े दस यानी साढ़े दस। बड़े बाबू की परेड और चपरासी का ओवरटाइम। नया अफसर आया है तो बिगड़ी गाड़ी दुरुस्त होगी। पर यह सारी चुस्ती शुरू के दो माह। बाद में वही ढर्रा। तब तक बड़े बाबू और अफसर में सूत्र जुड़ जाते हैं और दुरुस्त गाड़ी फिर उसी चाल से चलने लगती है जैसी बिगड़ी गाड़ी चलती है।

अफसर के शरीर की कोई रग सरकार के सूत्रों से अलग काम नहीं करती। फ़ाइल, मीटिंग, दौरा, रिपो, डीओ, रिमाइंडर, मेमो, आर्डर की दुनिया में बँधा वह सहानुभूति का पात्र है। सब कुछ 'रुटीन' है। सुबह सूर्य का उगना 'रुटीन' है और देर रात चाँद का डूबना 'रुटीन' है। आँधी आती है, फ़ाइल हो जाती है। फूल खिलता है, स्टोर में जमा हो जाता है। कुछ 'अर्जेंट' होता है, कुछ 'इमीडीएट' होता है। जो नहीं होना होता है, वह भी होता है, बशर्ते बजट में गुंजाइश हो। चार पैसे की मटकी ठोक-बजाकर ली जाती है। पर मटकी ठोकने-बजाने के सरकारी तरीके अलग ही हैं जिन्हें अफसर जानता है।

अफसर से दोस्ती नहीं की जा सकती। उससे रिश्ता किया जा सकता है; क्योंकि रिश्ते में नियम होते हैं, दोस्ती में नियम नहीं होते। अफसर के साथ नहीं चल सकते, उसके पीछे चलना होता है। कहावत है अफसर के सामने और घोड़े के पीछे नहीं आना चाहिए। पुराने जमाने में जब अफसर घोड़े पर बैठ कर दौरा करते थे तब पता नहीं लोग क्या करते होंगे; क्योंकि तब आगे रहें या पीछे, हालत बिगड़ने का अन्देशा हरदम बना रहता है। तब किनारा काटकर बगल में रहना ही एक नीति रही।

अफसर डाँटता है। नेता सारे देश को एक साथ डाँटता है और अफसर हर व्यक्ति को अलग-अलग बुलाकर डाँटता है। हम डाँटते हैं। हम डटे हुए लोग हैं, जो डाँटनेवालों के अधीन सटे हुए काम करते हैं। कुर्सी बनी रहेगी, पर कब खाट खड़ी हो जाएगी, कह नहीं सकते। वह गजेटेड है यानी गजट में है और हम गजट के बाहर हैं, फिर भी फ़ाइल में हैं और फीते से बंधे हैं। फीता हमारी आत्मा पर लिपटा है और लपेटने वाला है अफसर। अफसर सब जगह है। वह 'ऑन ड्यूटी' सर्वव्यापी है। वह 'रेडीमेड' मसीहा है, 'एक्टिव' शहीद है, फुर्तीला कछुआ है। वह खली में सिर रख मूसलों को अनुशासन में रखता है। वह हाथ को बिना आरसी के नहीं देखता और सत्य के प्रमाण मांगता है। अफसर अफसर है। वह अकेला अफसर है। आपके साथ अफसर है। सुबह अफसर है। शाम अफसर है। वह जीता नहीं, जीवन को 'डील' करता है, एक निश्चित तरीके से। वह सहज परिभाषित है और अनुमान से परे नहीं। फिर भी जिज्ञासा का केन्द्र है। क्योंकि प्रशासन के ब्रह्म में कार्य-कारण संबन्ध पहचानता है। उसके साथ रहकर क्या कीजिएगा ? वह जहाँ है, जितना है, मेरी समझ से काफ़ी है। उसे वहीं रहने दें। अफसर अगर इस किनारे जा रहा है तो आप उस किनारे जाइए, इसी में आपकी खैर है।

विषय-वस्तु -

अफसर और अफसरी – यह व्यंग्य बताता है कि अफसर एक व्यक्ति नहीं, एक 'प्रवृत्ति' है। वह जिस भी स्थिति में हो, अफसरी नहीं छोड़ता। यहाँ तक कि नाव की सैर में भी वह फ़ाइलों और मीटिंगों का ही ध्यान रखता है।

प्रशासन की विडंबना – अफसर अपने में इतना डूबा होता है कि प्राकृतिक सुंदरता या मानवीय रिश्तों का आनंद नहीं ले पाता। वह हर चीज को "डील" करता है – भावनाओं को भी नियमों में बाँधकर।

अधिकारी-जनसामान्य के बीच दूरी – लेखक दर्शाते हैं कि अफसर हमेशा 'ऊपर' होता है, आम आदमी को बस उसे झेलना होता है। वह किसी का दोस्त नहीं हो सकता, बस रिश्तेदार हो सकता है – वह भी एक निर्धारित प्रक्रिया के अंतर्गत।

सरकारी मशीनरी की सच्चाई – विकास का मतलब है और अफसर, और कागज, और फ़ाइलें। ज़मीन पर बदलाव आए या नहीं, पर टेबलों पर काम चलता रहता है।

हास्य और व्यंग्य की शैली -

उदाहरण - "हर नया अफसर जब आता है चमन में बहार बनकर आता है, और जब जाता है मर्तबान का अचार बनकर जाता है।" – यह वाक्य अफसरों की लोकप्रियता और वास्तविक प्रभाव पर बहुत ही चुटीला व्यंग्य करता है।

"अफसर सब जगह है। वह 'ऑन ड्यूटी' सर्वव्यापी है।" – यह पंक्ति अफसर की सर्वव्यापकता को भगवान की तरह दिखाकर मजाकिया रूप में दिखाती है।

शिल्प और भाषा -

व्यंग्य में प्रयोग की गई भाषा आम बोलचाल की है, जिससे यह और अधिक प्रभावी हो जाती है।

सरकारी कामकाज से जुड़े शब्दों (जैसे - 'फ़ाइल', 'मीटिंग', 'रिपोर्ट', 'ऑर्डर') का अत्यधिक प्रयोग कर शरद जोशी सरकारी मानसिकता को उजागर करते हैं।

व्याख्या -

"अफसर" शरद जोशी का एक प्रसिद्ध व्यंग्य है, जिसमें उन्होंने भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था और अफसरशाही की कार्यशैली पर तीखे प्रहार किए हैं। इस व्यंग्य के माध्यम से लेखक ने अफसरों की मानसिकता, दिखावे, और उनके आडंबर को उजागर किया है। पाठ में एक अफसर का चित्रण किया गया है, जो अपने पद और रुतबे को समाज में अपनी महत्ता और प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए उपयोग करता है, जबकि उसकी असल जिम्मेदारी जनसेवा और प्रशासनिक कार्यों में होनी चाहिए।

"अफसर" शरद जोशी का एक प्रभावशाली व्यंग्य है, जो अफसरशाही के भीतर की असलियत को उजागर करता है। इस पाठ में हास्य और व्यंग्य के माध्यम से समाज की विसंगतियों को उठाया गया है। यह पाठ न केवल मनोरंजन करता है, बल्कि समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार और आडंबर पर सोचने के लिए प्रेरित भी करता है।

पाठ का संदेश -

"अफसर" व्यंग्य का मुख्य संदेश यह है कि समाज में पद और प्रतिष्ठा का उपयोग दिखावे और स्वार्थ सिद्धि के लिए नहीं, बल्कि वास्तविक जिम्मेदारी और जनसेवा के लिए होना चाहिए। शरद जोशी ने इस पाठ के माध्यम से यह बताया है कि अफसरशाही को अपनी मूल जिम्मेदारियों को समझना होगा और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी निभानी होगी।

5.5 'तीर्थयात्रा' (कहानी) – डॉ. मिथलेश कुमार मिश्रा

तीर्थ-यात्रा - डॉ. मिथिलेश कुमारी मिश्र

बाबू रामदेव गुप्त जब प्राइमरी स्कूल के हेडमास्टर पद से सेवानिवृत्त हुए तो उनके परिवार के सदस्य यही सोच रहे थे कि उन्हें जो रकम मिली है, उससे वे कोई ऐसा कारोबार प्रारम्भ करेंगे जिसमें उनका एक बेकार लड़का नीरज काम से लग जाएगा, इसीलिए घर बैठ जाने पर भी उनकी आव-भगत होने लगी। उनका बड़ा लड़का मनोज रेलवे में क्लर्क था। वह भी यही सोच रहा था। उसकी पत्नी अपने लिए एक नया कमरा बनवाने की योजना बना रही थी और पत्नी गोमती सर्वप्रथम तीर्थ-यात्रा की आस लगाए बैठी थी। किन्तु बाबू रामदेव गुप्त शान्त बैठे सबके चेहरे पर उभरे भावों को पढ़ते और उनके भीतर मच रही उथल-पुथल का अनुमान लगाते। इसी के साथ-साथ वे अपने उद्देश्य तक पहुँचने के विषय में भी पूरी गंभीरता से सोचने तथा उस कार्य को अपने मनोनोकूल स्वरूप देने हेतु उसकी रूप-रेखा के साथ-साथ उस पर आने वाले व्यय के विषय में भी सोचते।

अचानक एक दिन प्रातः तीन ट्रक ईंट, मुरम, बालू, सीमेंट से लदे गुप्त जी के घर के सामने आ खड़े हुए, तो बहू सुधा बहुत प्रसन्न हुई और मनोज की बाँछे खिल गई, "देखा सुधा! बाबू जी हम दोनों का कितना ध्यान रखते हैं। तुम्हारी इच्छा थी कि हमारे लिए एक अलग कमरा बने, सो उन्होंने ताबड़तोड़ तुम्हारी इच्छा पूरी करने की ठान ली।"

"आखिर हमारे बाबू जी जो ठहरे। इसीलिए अम्मा भले उन्हें उल्टी-सीधी सुना देती हैं, किन्तु मैं उन्हें मनुष्य के रूप में देवता ही समझती हूँ।

इस प्रकार दोपहर के पूर्व ही लगभग चार-पाँच मजदूर नींव खोदने में जुट गए। नीरज को अब दृढ़ विश्वास हो गया कि बाबू जी कोई बड़ी दुकान बनवाने का संकल्प कर चुके हैं। धीरे-धीरे बाउण्ड्री तैयार हो गई और जब कमरे की दीवार बनने लगी तो गोमती को छोड़कर शेष सभी निर्माण कार्य में मजदूरों का हाथ बटाने लगे। मनोज ऑफिस से छुट्टी लेकर इस कार्य में तन-मन से जुट गया और अपना कार्य सिद्ध होते देख नीरज मजदूरों से भी अधिक परिश्रम करने लगा। मनोज की बहू सुधा सबके नाश्ते आदि के प्रबंध में व्यस्त रहती थी। परन्तु गोमती को कुछ अच्छा नहीं लग रहा था, क्योंकि वह अपनी तीर्थ-यात्रा का ढिंढोरा सारे गाँव में पीट चुकी थी, जबकि पति की इस निर्माण योजना से वह लगातार कुढ़ रही थी और सौ-सौ के नोटों को घर से बाहर निकलते देखकर उसका अन्तर्मन व्यथित होता जा रहा था। वह भली-भाँति जानती थी कि रुपये-पैसे के मामले में

बाबू जी किसी का विश्वास नहीं करते थे। उनका बक्सा अलग था और उसमें ताला लगाकर उसकी चाभी ये सदैव अपने पास रखते थे।

बाबू जी जानते थे कि परिवार के सारे सदस्य या तो गलतफहमी में जी रहे हैं या खुशफहमी में। उनको पता था कि सारे लोग अपने-अपने स्वार्थ से इस कार्य को जोड़ रहे हैं। जिस दिन उनके उद्देश्य का पता चलेगा, तो सारे लोग सहयोग तो दूर, उनके पास तक नहीं फटकेंगे। किन्तु उनका सोचना था कि केवल अपने विषय में सोचा तो क्या सोचा? समाज के विषय में भी तो सोचना चाहिए। अतः कार्य निर्बाध गति से चलता रहा।

अन्ततः एक महीने के भीतर ही कमरे की छत डाल दी गई। गुप्त जी के दोनों लड़के इस लम्बे-चौड़े हॉल जैसे कमरे की बनावट देखकर हैरान थे कि उसका निर्माण किस प्रयोजन से हुआ है? परन्तु ग्रामवासियों का सहयोग देखकर वे अनुमान लगाने लगे कि यह हॉल सत्संग भवन है, जहाँ गाँव के नर-नारी एकत्र होकर कीर्तन-भजन करेंगे। यद्यपि गुप्त जी के घरवाले अच्छी तरह इस तथ्य से अवगत थे कि बाबू जी इस प्रकार के सत्संगों में कभी भी रुचि नहीं रखते थे, तथापि वे इस तथ्य पर सहमत हो गए कि निस्सन्देह चौथेपन में बाबू जी भगवद-भक्ति की ओर मुड़ गए हैं, क्योंकि धार्मिक प्रवृत्ति इस अवस्था में स्वाभाविक ही है।

इस प्रकार गुप्त जी के पारिवारिक सदस्य घोर आश्चर्य में पड़े हुए थे। किन्तु इस विषय में कुछ भी पूछने का साहस कोई नहीं कर पा रहा था। सब जानते थे कि अपनी जिज्ञासा शान्त करने हेतु बाबू जी से कुछ पूछना बर्रे के छत्ते को छेड़ने जैसा है, इसीलिए सभी सब कुछ चुपचाप देखते हुए भी शांत थे। किन्तु आते-जाते उनकी पत्नी उनको टेढ़ी नजर से देखती और अपनी नाराजगी का एहसास कराती, मगर वे सब कुछ समझते हुए भी मौन थे। भीतर-ही-भीतर अपने उद्देश्य को फलीभूत होते देखकर वे फूले नहीं समा रहे थे। उनकी खुशी उनके भीतर ही कैद थी। उसको उनके चेहरे पर उमरने की भी अनुमति नहीं थी। (वह एक शिक्षक थे। अतः शिक्षा के महत्व को वे भलीभाँति समझते थे। वे समझते थे कि राष्ट्र को प्रगति पर अग्रसर करने हेतु उससे प्रत्येक नागरिक को शिक्षित होना अनिवार्य है। निस्संदेह यह सरकार का दायित्व है, किन्तु केवल सरकार का ही दायित्व नहीं, यह दायित्व प्रत्येक बुद्धजीवी एवं प्रबुद्ध नागरिक का है कि अपने-अपने स्तर पर वह इस दिशा में कार्य करके सरकार को सहयोग दे। सरकार की आलोचना मात्र करने से तो कार्य नहीं हो पाएगा। राष्ट्र की उन्नति देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। अतः इस हेतु कुछ त्यागना भी पड़े, तो त्याग देना चाहिए। शिक्षा से उनका तात्पर्य केवल शब्द ज्ञान ही नहीं था। वे प्रत्येक नागरिक को प्रत्येक दृष्टिकोण से तथा प्रत्येक स्तर पर सुशिक्षित करना चाहते थे। शिक्षा नौकरी पेशा से जुड़ी हो, यह अनिवार्य है, किन्तु एक मनुष्य एवं एक सच्चे नागरिक के दायित्वों की जानकारी उसको उसके भीतर से होनी चाहिए। नैतिकता एवं चरित्र प्रत्येक व्यक्ति में कूट-कूटकर भरा होना चाहिए।)

"क्या कुछ सोच रहे हैं?"

"अ...हाँ... यों ही कुछ विशेष नहीं... कहो! कुछ कहना है?"

"आपको मेरी बातें सुनने की कभी फुर्सत ही कहाँ रही है, जो आज...! पहले आप स्कूल चले जाते थे..... बच्चों को पढ़ाने में व्यस्त थे और आज.... आप क्या कर रहे हैं.... आप ही जानें।"

"तुमने जानने की चेष्टा ही कब की?"

"तीर्थ-यात्रा पर जाने को कहा था। लगता है. अपना वायदा तक भूल गए...।"

"मैं कुछ भी नहीं भूला हूँ...मैं तीर्थ यात्रा का ही तो कार्य कर रहा हूँ...।"

पति की बात शायद उसकी समझ में नहीं आयी और कंधे उचकाते हुए, "आपकी पहेलियों आप ही जानें..." और वह अपने घरेलू कार्यों में व्यस्त हो गयी और गुप्त जी अपने निर्माण कार्य के बाद की योजना पर विचार करने लगे।

अन्ततः लगभग पंद्रह दिन के बाद गुप्त जी बीस-पच्चीस प्रौढ़ जनों को उस नवनिर्मित कक्ष में टाट पर बैठाकर सायंकाल जब ककहरा और गिनती पढ़ाने लगे तो घरवाले चौंक पड़े।

"यह क्या होने लगा?" गोमती ने आक्रोश भरी मुद्रा में मनोज से पूछा।

"अम्मा।" मनोज खिसिया उठा, "बाबू जी जो भी कर रहे हैं उन्हें करने दो। क्योंकि इस समय उन पर जो भूत सवार है, उसकी धुन में वे किसी की सुनने वाले नहीं हैं। विचार करो, भला ऐसा कौन होगा, जो अपना घर फूंककर तमाशा देखेगा?"

"बेटा!" गोमती निराशा भरी वाणी में बोली, "उन्हें अब समझाने से लाभ ही क्या है, जिसे गिरस्ती और बाल-बच्चों की तनिक भी चिंता न हो, या जो जान-बूझकर अपनी भलाई की ओर से आँखें मूंदे बैठा हो, ऐसे आदमी के आगे रोने से भी क्या मिलेगा? मुझे तो चारों ओर अँधेरा-ही-अँधेरा दिख रहा है।"

"अम्मा!" बाहर से आकर नीरज क्षुब्ध होते हुए बोला, "बाबू जी को जो कुछ हिसाब मिला था, उसे उन्होंने इस अनाथालय को बनाने में उड़ा दिया। अब मैं घर में रहकर ही क्या करूँगा? कहीं बाहर जाकर कम-से-कम अपना पेट तो पाल सकता हूँ।"

"नहीं नीरज ! तुम कहीं नहीं जाओगे। पहले यह बताओ, इस धर्मशाले में तुम्हारे बाबू जी क्या कर रहे हैं?" गोमती ने पूछा।

"अम्मा!" सुधा ने तत्काल उत्तर दिया, "बाबू जी गाँव के गँवारों को पढ़ाने का महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं। उनका कथन है कि उनकी इस योजना से अब गाँव में कोई निरक्षर नहीं रहेगा।"

"तो इससे कुछ आमदनी की भी उम्मीद है?" गोमती ने आँखें घुमाते हुए पूछा।

"अम्मा ! आमदनी नहीं बल्कि खर्च बढ़ेगा।"

"वह कैसे?"

"पढ़ने वालों के लिए किताब-कॉपी-कलम-पेंसिल में सैकड़ों का खर्च होगा हर महीने।"

"हे भगवान! अब क्या होगा? लगता है परिवार की नैया मझधार में ही डूबेगी।"

"यही नहीं, अम्मा। वे तो मुझसे कह रहे थे कि गाँव की लड़कियों, बड़ी-बुढ़ियों को मैं पढ़ना-लिखना सिखाऊँ।"

"तो तुमने क्या कहा?"

"मैं भला क्या कहती? चुपचाप उनकी बातें सुनती रही। वे गाँव के लोगों को साक्षर बनाना चाहते हैं। अम्मा! बाबू जी के विचार बहुत ऊँचे हैं। वे गाँव का सुधार करने का।"

"बहू! जिसने अपना घर नहीं सुधारा, वह भला गाँव को क्या सुधारेगा? आने दो आज ही फैसला हो जाएगा। मैं तो अपने जेवर बेचकर तीर्थ-यात्रा पर चली जाऊँगी और तुम्हारे बाबू जी यहीं बैठे-बैठे गाँव सुधार करते रहें।"

"अम्मा जी! सहसा बाहर से आकर मंगरू बोला, "मास्टर जी ने कुछ जलपान मंगाया है।"

"जलपान! क्या ब्रह्मभोज भी करने वाले हैं?"

"मैंगरू भैया!" सुधा बोली, "लगता है, कोई आया है?"

"हाँ दीदी! शहर से कोई बड़े साहब आए हैं।"

"ठहरो ! मैं अभी प्रबंध करती हूँ।"

"करो प्रबंध!" कहती हुई जली-भुनी गोमती वहाँ से हट गई।

इस प्रकार गाँव के निरक्षरों को साक्षर बनाने की योजना धूम-धाम से चलने लगी। लगभग दस-पंद्रह गाँवों के लोग वहाँ एकत्र होकर समर्थन करने लगे, तो दूसरी ओर गुप्त जी के परिवार में कलह की आँधी तेजी से चलने लगी। सुधा को बाबू जी के इस पावन अनुष्ठान के प्रति बड़ी श्रद्धा थी। इसलिए, वह भी उनके कार्य में सहयोग दे रही थी। नीरज इस समय किसी कम्पटीशन की तैयारी कर रहा था।

वस्तुतः गुप्त जी के साक्षरता अभियान ने लगभग तीन-चार महीने में ही काफी जोर पकड़ लिया था। उनके दो शिष्य भी सुबह-शाम आकर इस पुनीत कार्य में योगदान दे रहे थे। पढ़ने वालों की संख्या इतनी बढ़ गई कि उनके बैठने का स्थान भी कम पड़ने लगा, इसलिए उन्हें कमरे के साथ ही बरामदे की नींव भी डालनी पड़ी और जब ईंट आदि से लदा एक ट्रक द्वार पर आकर खड़ा हुआ, तो उसे देखते ही गोमती का पारा और गरम हो गया। गुप्त जी जैसे ही भोजन करके उठे तो गोमती उन पर बरस पड़ी, " तुम्हें यह क्या पागलपन सूझ गया कि सारी कमाई गाँव के इन गधों के ऊपर उड़ाने पर उतारू हो। एक लड़का बेकार है और नौकरी के लिए मारा-मारा फिर रहा है। यही रकम अगर घूस में दे देते. तो वह कहीं-न-कहीं काम पैर लग जाता । तुम ऐसे सनक गए हो कि घर को धर्मशाला बनाने पर तुले हो। लगता है, तुम सठिया गए हो।"

"कुछ और भी कहना हो, तो वह भी कह ही डालो।"

"मेरी बातों का तुम्हारे ऊपर असर ही कब पड़ा है. जो आज पड़ेगा। मैंने सोचा था, कि रिटायर होकर हम लोग तीर्थ-यात्रा करेंगे। देवी-देवताओं की मनौती मानकर दान-उदान करेंगे, जिससे परिवार में खुशहाली आती, लेकिन...!"

"लेकिन गोमती! यह साक्षरता अभियान क्या किसी भी तीर्थ-यात्रा से कम है? और विद्या-दान से बड़ा संसार में कोई दान है ही नहीं।"

"साक्षरता अभियान से हमें क्या मिलेगा? हाँ! बुढ़ापे के सहारे के लिए जो रकम मिली थी, वह भी इस व्यर्थ के काम में डूब गई।"

"नहीं गोमती! ऐसा मत कहो। तुम स्वयं देख लो कि जो अभी तक अँगूठे का निशान लगाते थे, वे भी अब लिखने-पढ़ने लगे हैं। उनकी अन्तरात्मा हमें आशीर्वाद दे रही है। क्या यह तीर्थ-यात्रा नहीं है? यह कार्य सम्पन्न कर हम चारों धाम का पुण्य-लाभ कर रहे हैं। जो लोग इससे लाभान्वित होंगे, वे सभी हमें आशीर्वाद देंगे.... हमारे बच्चों को दुआ देंगे, हमें इस अवस्था में और क्या चाहिए? रिटायर होने के बाद मेरे जीने का लक्ष्य भी हो गया, मैं पुनः व्यस्त हो गया।"

तभी पोस्टमैन ने एक रजिस्ट्री गुप्त जी को दी, जिसे खोल कर पढ़ते ही वे हर्ष-विभोर हो उठे।

"क्या है इसमें, जो आनन्दमग्न हो रहे हो?" गोमती ने पूछा।

"नीरज की नौकरी लग गई, गोमती? यह इसी तीर्थ-यात्रा का प्रसाद है।"

गदगद होते हुए गोमती की आँखें भर आयीं, देखो जी तुम पढ़े-लिखे मास्टर हो, मैं सीधी-सादी गँवार हूँ। मैं तुम्हारी ऊँची-ऊँची बातें क्या जानूँ, बहू पढ़ी-लिखी है, अतः वह समझती है। तभी तो वह तुम्हारे काम में लगी रहती है। मुझे क्षमा...!

"अरे नहीं। ऐसी कोई बात नहीं।" दोनों पति-पत्नी एक दूसरे की ओर देख कर मुस्करा दिए और फिर एकाएक न जाने क्या सोचकर खिलखिला पड़े।

तीर्थ-यात्रा — डॉ. मिथिलेश कुमारी मिश्र द्वारा लिखी गई यह कहानी एक साधारण शिक्षक की असाधारण सोच और सेवा भावना का चित्रण करती है, जिसमें नायक बाबू रामदेव गुप्त अपने रिटायरमेंट के बाद अपने जीवन की "सच्ची तीर्थ-यात्रा" पर निकलते हैं — पर यह यात्रा धार्मिक स्थलों की नहीं, बल्कि समाज की सेवा और साक्षरता की ओर होती है।

विषय-वस्तु-

इस कहानी की मूल थीम **"सच्ची तीर्थ-यात्रा" की परिभाषा** को पुनर्परिभाषित करना है। यह दर्शाती है कि जीवन में सच्ची तीर्थ-यात्रा वही है जो दूसरों के जीवन को बेहतर बनाए — शिक्षा, सेवा और समाज के उत्थान के माध्यम से।

मुख्य पात्र -

बाबू रामदेव गुप्त – रिटायर्ड प्राइमरी स्कूल हेडमास्टर, जिनका जीवन उद्देश्यवान है। वे अपने रिटायरमेंट फंड को समाज के अशिक्षित वर्ग की साक्षरता पर खर्च करते हैं।

गोमती – उनकी पत्नी, जो शुरू में तीर्थ-यात्रा के लिए उत्सुक थी लेकिन बाद में पति की भावना को समझती है।

नोट

मनोज – बड़ा बेटा, जो रेलवे में क्लर्क है और स्वार्थवश निर्माण कार्य में सहयोग देता है।

नीरज – छोटा बेटा, बेरोजगार है, लेकिन शिक्षा केंद्र के निर्माण में मेहनत करता है।

सुधा – मनोज की पत्नी, पढ़ी-लिखी और समझदार, बाबूजी के मिशन में सहयोग करती है।

प्रमुख घटनाएं - रिटायरमेंट के बाद बाबू रामदेव गुप्त अपने पैसे से घर में एक बड़ा हॉल बनवाते हैं।

परिवार को भ्रम होता है कि यह हॉल या तो किसी धार्मिक आयोजन के लिए है या किसी व्यवसाय के लिए।

लेकिन बाबूजी का उद्देश्य था – **गाँव के निरक्षरों को पढ़ाना**, विशेष रूप से वृद्धों और महिलाओं को।

धीरे-धीरे, उनका यह प्रयास "साक्षरता अभियान" बन जाता है, जिसमें गाँव भर से लोग जुड़ते हैं।

परिवार के लोग पहले नाराज़ होते हैं, विशेषकर गोमती, परंतु अंत में जब नीरज की नौकरी लगती है, तब उन्हें इस "तीर्थ-यात्रा" का मर्म समझ आता है।

प्रमुख संदेश -

विद्या-दान ही सबसे बड़ा दान है।

सच्ची तीर्थ-यात्रा वह है जो आत्मा को तृप्त करे और दूसरों के जीवन में प्रकाश फैलाए।

जीवन में त्याग और सेवा का मार्ग ही आत्मसंतोष और समाज के हित का मार्ग है।

राष्ट्र की प्रगति केवल सरकार नहीं, प्रत्येक नागरिक की जिम्मेदारी है।

शैली और भाषा -

कहानी सरल, भावनात्मक और व्यंग्यात्मक शैली में लिखी गई है।

भाषा सहज और ग्रामीण परिवेश के अनुकूल है।

पात्रों की मानसिकता और सामाजिक सोच को लेखक ने बारीकी से उकेरा है।

व्याख्या -

मिथिलेश कुमारी मिश्र की कहानी "तीर्थयात्रा" साक्षरता आंदोलन पर आधारित है, जिसमें शिक्षा को समाज के सर्वांगीण विकास और व्यक्तिगत उत्थान का महत्वपूर्ण माध्यम बताया गया है। यह कहानी न केवल शिक्षा के महत्व को रेखांकित करती है, बल्कि यह भी दिखाती है कि किस प्रकार साक्षरता के माध्यम से समाज में सकारात्मक बदलाव लाया जा सकता है।

कहानी का कथानक -

कहानी की मुख्य पृष्ठभूमि ग्रामीण परिवेश है, जहाँ शिक्षा का अभाव है। लेखक ने साक्षरता आंदोलन को एक तीर्थयात्रा के रूप में प्रस्तुत किया है। यह यात्रा न केवल शारीरिक है, बल्कि मानसिक और बौद्धिक भी है, जो अज्ञानता के अंधकार से ज्ञान के प्रकाश तक पहुँचने की प्रक्रिया का प्रतीक है।

नोट

कहानी के पात्र विभिन्न प्रकार के सामाजिक संदर्भों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें से कुछ लोग शिक्षा के महत्व को नहीं समझते, जबकि कुछ इसे अपनाने के लिए तत्पर हैं। कहानी यह दिखाती है कि जब कोई व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करता है, तो वह न केवल अपनी जिंदगी बदलता है, बल्कि पूरे समाज को जागरूक करता है।

शिक्षा का महत्व -

कहानी में शिक्षा को केवल अक्षरों और शब्दों की समझ तक सीमित नहीं रखा गया है। इसे नैतिक, सांस्कृतिक, और सामाजिक सुधार का साधन माना गया है। यह कहानी यह संदेश देती है कि शिक्षा से व्यक्ति अपनी क्षमताओं को पहचान सकता है और अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक हो सकता है।

साक्षरता आंदोलन का प्रभाव -

साक्षरता आंदोलन का उद्देश्य केवल पढ़ना-लिखना सिखाना नहीं है, बल्कि समाज में समानता, जागरूकता, और आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना है। कहानी में यह दिखाया गया है कि कैसे शिक्षा लोगों को आत्मसम्मान और स्वाभिमान प्रदान करती है। यह आंदोलन एक ऐसा साधन है, जो समाज के पिछड़े और वंचित वर्गों को मुख्यधारा में लाने का काम करता है।

अंत में "तीर्थ-यात्रा" केवल मंदिरों के दर्शन तक सीमित नहीं है, यह एक दृष्टिकोण है — एक ऐसी सोच, जो समाज में सकारात्मक बदलाव लाने के लिए प्रेरित करती है।

बाबू रामदेव गुप्त की यह कहानी हमें यह सिखाती है कि अगर हम चाहें, तो रिटायरमेंट के बाद का जीवन भी एक नई शुरुआत हो सकता है — दूसरों के लिए कुछ करने की शुरुआत।

गतिविधि 5.1

"विलायत पहुँच ही गया" के घटनाक्रम से प्रभावित होकर एक पात्र की सोच और विचारों को व्यक्त करने वाली एक छोटी कहानी लिखिए।

.....

.....

.....

.....

☒ अपनी प्रगति जांचें 5.1

1. गांधीजी के विलायत जाने का उद्देश्य क्या था?

.....

.....

2. गांधीजी ने विलायत पहुँचने के बाद अपने जीवन में क्या संकल्प लिया?

.....

.....

3. इस पाठ से गांधीजी के व्यक्तित्व की कौन-कौन सी विशेषताएँ झलकती हैं?
.....
.....
4. लेखक ने 'अफसर' को किस नजरिए से प्रस्तुत किया है?
.....
.....
5. इस व्यंग्य में कौन-से सरकारी तंत्र की समस्याएँ उजागर की गई हैं?
.....
.....
6. "अफसर" पाठ में भाषा और शैली की क्या विशेषता है?
.....
.....
7. कहानी 'तीर्थयात्रा' का प्रमुख संदेश क्या है?
.....
.....
8. लेखक ने वृद्ध तीर्थयात्रियों की मानसिकता को किस प्रकार दिखाया है?
.....
.....
9. 'तीर्थयात्रा' में धर्म के प्रति लेखक की दृष्टि कैसी है?
.....
.....

5.6 सारांश

"व्यक्तित्व, व्यंग्य और समाज" खंड में तीन विविध रचनाएँ सम्मिलित हैं जो साहित्य के माध्यम से व्यक्ति के अनुभवों, प्रशासनिक व्यवस्था पर व्यंग्य, और समाज की वास्तविकताओं को उजागर करती हैं।

'विलायत पहुँच ही गया' (महात्मा गांधी) एक आत्मकथात्मक अंश है, जिसमें गांधी जी के इंग्लैंड प्रवास के शुरूआती अनुभवों का चित्रण है। इसमें उनकी आत्मानुशासन, संस्कृति के प्रति निष्ठा और नैतिक मूल्यों की झलक मिलती है। यह रचना उनके चरित्र निर्माण और आत्मबल को सामने लाती है।

'अफसर' (शरद जोशी) एक तीखा और हास्यपूर्ण व्यंग्य है, जो अफसरशाही के बनावटीपन, नौकरशाही की जटिलता और दिखावटी शिष्टाचार पर व्यंग्य करता है। यह

आम जनता और शासकीय तंत्र के बीच की खाई को हास्य के माध्यम से उजागर करता है।

'तीर्थयात्रा' (डॉ. मिथिलेश कुमार मिश्र) एक मार्मिक सामाजिक कहानी है, जो वृद्धों की उपेक्षा, पारिवारिक संबंधों में आई संवेदनहीनता और तीर्थयात्रा के नाम पर दिखावे की मानसिकता की सच्चाई को उजागर करती है। इसमें बूढ़े पिता की पीड़ा और जीवन की त्रासदी गहराई से उभरती है।

ये तीनों रचनाएँ मिलकर यह दर्शाती हैं कि साहित्य व्यक्ति के भीतर की सच्चाई, समाज की कड़वी हकीकत और सत्ता-प्रणालियों की विसंगतियों को उजागर करने का सशक्त माध्यम है।

5.7 शब्दावली

क्रम	शब्द	अर्थ
1	आत्मकथांश	आत्मकथा का अंश
2	अनुष्ठान	धार्मिक/संस्कारजन्य क्रिया
3	स्वावलंबी	जो स्वयं पर निर्भर हो
4	अनुशासन	नियमों के अनुसार आचरण
5	विडंबना	विरोधाभासी स्थिति
6	अफसरशाही	सरकारी अधिकारियों का प्रभुत्व
7	औपचारिकता	दिखावे की प्रक्रिया या रस्म
8	तीर्थयात्रा	धार्मिक स्थानों की यात्रा
9	संवेदनहीनता	भावनाओं की कमी
10	प्रतीकात्मक	सांकेतिक, रूपक के रूप में
11	उपेक्षा	नज़रअंदाज़ करना
12	सामाजिक यथार्थ	समाज की सच्ची स्थिति
13	कुटुंब	परिवार
14	हास्य – व्यंग्य	मजाक के साथ कटाक्ष
15	मूल्य बोध	नैतिक या सांस्कृतिक मूल्यों की समझ

5.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर

- गांधीजी इंग्लैंड (विलायत) बैरिस्टरी की पढ़ाई के लिए गए थे।
- उन्होंने मांस, शराब और स्त्री से दूरी बनाए रखने का संकल्प लिया और सादा जीवन अपनाया।
- गांधीजी में आत्मसंयम, सिद्धांतप्रियता, ईमानदारी और दृढ़ निश्चय जैसी विशेषताएँ झलकती हैं।

4. लेखक ने अफसर को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है जो अधिकार और औपचारिकताओं में उलझा रहता है और आम जनता से दूर होता है।
5. सरकारी विभागों में काम टालने की प्रवृत्ति, भ्रष्टाचार और गैर-जिम्मेदारी की मानसिकता को व्यंग्यात्मक रूप से उजागर किया गया है।
6. इस पाठ में भाषा सहज, व्यंग्यपूर्ण और चुटीली है, जो पाठक को हँसी के साथ-साथ सोचने पर भी मजबूर करती है।
7. कहानी का प्रमुख संदेश यह है कि सच्ची तीर्थयात्रा आत्मिक शुद्धि और मानवता से जुड़ी होती है, न कि केवल बाहरी यात्रा से।
8. लेखक ने दिखाया है कि कई वृद्ध तीर्थयात्री केवल सामाजिक दबाव या मोक्ष की आशा से तीर्थ करते हैं, लेकिन भीतर से वे धार्मिक नहीं होते।
9. लेखक की दृष्टि यथार्थवादी है- वे दिखावे और आडंबर की तीर्थयात्रा से अधिक आत्मिक सच्चाई को महत्त्व देते हैं।

5.9 सहायक पाठ्य सामग्री – OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) -1	http://books.aisectonline.com/User/UnitUrls?unitId=11	

5.10 संदर्भ

1. सत्य के प्रयोग (My Experiments with Truth) – महात्मा गांधी
2. रचना संग्रह- शरद जोशी
3. हिंदी कहानियाँ - आधुनिक संदर्भ में – संपादक - डॉ. दिनेश मिश्र
4. हिंदी आत्मकथाओं का समाजशास्त्रीय अध्ययन – डॉ. शिवानी पाठक
5. समकालीन हिंदी व्यंग्य साहित्य – डॉ. रमेश त्रिपाठी
6. आधुनिक हिंदी कहानी - संरचना और मूल्य – डॉ. वीरेन्द्र यादव

5.11 अभ्यास

नोट

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ) –

1. 'विलायत पहुँच ही गया' में गांधी जी की मुख्य चिंता क्या थी?
A) खाना B) कपड़े
C) धर्म का पालन D) पढ़ाई
2. 'अफसर' व्यंग्य में लेखक किस पर कटाक्ष करता है?
A) किसानों पर B) नेताओं पर
C) सरकारी अफसरों की कार्यप्रणाली पर D) विद्यार्थियों पर
3. 'तीर्थयात्रा' कहानी का मुख्य पात्र कौन था?
A) एक सैनिक B) एक बूढ़ा व्यक्ति
C) एक व्यापारी D) एक पंडित
4. महात्मा गांधी को किन वस्तुओं का मोह नहीं था?
A) किताबों का B) आभूषणों का
C) धर्म और नैतिकता का D) खाने का
5. 'अफसर' कहानी में लेखक किस माध्यम से सरकारी व्यवस्था की आलोचना करता है?
A) कविता B) गंभीर निबंध
C) हास्य और व्यंग्य D) संवाद

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

1. **C) धर्म का पालन** – गांधी जी ने विलायत में धर्म और नैतिकता के पालन को सर्वोपरि माना।
2. **C) सरकारी अफसरों की कार्यप्रणाली पर** – लेखक ने अफसरशाही की निष्क्रियता और ढीले रवैये पर कटाक्ष किया है।
3. **B) एक बूढ़ा व्यक्ति** – कहानी एक वृद्ध की तीर्थयात्रा की आकांक्षा और पारिवारिक उपेक्षा पर आधारित है।
4. **B) आभूषणों का** – गांधी जी सांसारिक वस्तुओं से दूर रहते थे, विशेषतः आभूषणों से।
5. **C) हास्य और व्यंग्य** – लेखक ने प्रशासनिक विफलताओं को व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. गांधी जी को विलायत में किस बात की सबसे अधिक चिंता थी और इसका क्या कारण था?
2. 'अफसर' पाठ में लेखक ने अफसरों की किस प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया है?
3. 'तीर्थयात्रा' कहानी में वृद्ध पात्र किस स्थान की यात्रा पर जाना चाहता था और क्यों?
4. गांधी जी ने विदेश में रहते हुए भी किस प्रकार भोजन की शुद्धता का पालन किया?
5. 'अफसर' पाठ के लेखक कौन हैं और उन्होंने किस शैली में व्यवस्था पर प्रश्न उठाए हैं?

Part - 2**C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)**

1. गांधी जी की विलायत यात्रा उनके जीवन के किस मोड़ को दर्शाती है? उन्होंने अपने आचार, विचार और आहार संबंधी नियमों का कैसे पालन किया?
2. 'अफसर' व्यंग्य के माध्यम से सरकारी कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार, अकर्मण्यता और संवेदनहीनता को लेखक ने किस प्रकार उजागर किया है? उपयुक्त उदाहरणों सहित उत्तर दीजिए।

Part - 3**D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)**

1. 'तीर्थयात्रा' कहानी में एक वृद्ध व्यक्ति की तीर्थ-इच्छा को परिवार द्वारा उपेक्षित करना किस सामाजिक विडंबना को दर्शाता है? वर्तमान समाज में इस प्रकार की स्थिति की प्रासंगिकता पर चर्चा कीजिए।
2. 'अफसर', 'विलायत पहुँच ही गया' और 'तीर्थयात्रा' - इन तीनों पाठों में भारतीय समाज की किन-किन समस्याओं को उजागर किया गया है? उनके मूल कारणों और संदेशों की तुलनात्मक विवेचना कीजिए।

इकाई – 6

भाषा की संरचना और अभिव्यक्ति की शक्ति

इकाई की रूपरेखा

- 6.1 परिचय
- 6.2 उद्देश्य
- 6.3 मकड़ी का जाला (व्यंग्य) डॉ. रामप्रकाश सक्सेना
- 6.4 वाक्य- संरचना - परिचय
- 6.5 वाक्य- संरचना - तत्सम, तद्भव देशज विदेशी
- 6.6 सारांश
- 6.7 शब्दावली
- 6.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर
- 6.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER
- 6.10 संदर्भ
- 6.11 अभ्यास
- 6.12 फीडबैक फॉर्म

6.1 परिचय

"भाषा की संरचना और अभिव्यक्ति की शक्ति" खंड का उद्देश्य भाषा के आंतरिक ढाँचे, उसकी विन्यासगत विशेषताओं, और व्यक्तिगत व सामाजिक अभिव्यक्ति की शक्ति को समझना है। यह खंड भाषा को केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि विचार, व्यंग्य, और आलोचना का उपकरण मानता है।

- ◆ 'मकड़ी का जाला' डॉ. रामप्रकाश सक्सेना द्वारा रचित एक प्रभावी व्यंग्य है, जिसमें सरकारी दफ्तरों की **जटिल प्रक्रियाएँ, बेकार कागजी कार्रवाई**, और **ब्यूरोक्रेसी** को एक **मकड़ी के जाले** से जोड़ा गया है। लेखक ने सरल भाषा में गहरी बात कही है कि कैसे तंत्र खुद में इतना उलझा हुआ है कि आम आदमी उसमें फँसकर रह जाता है।
- ◆ 'वाक्य संरचना - परिचय' खंड में वाक्य के निर्माण की मूलभूत इकाइयों – विषय, विधेय, कर्म, विशेषण आदि – का परिचय दिया गया है। इससे भाषा के *संगठित और तार्किक पक्ष* को समझा जा सकता है।

◆ 'वाक्य संरचना - तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी शब्द' खंड में यह स्पष्ट किया गया है कि हिंदी की शब्द-संपदा विभिन्न स्रोतों से समृद्ध हुई है।

- तत्सम शब्द संस्कृत से ज्यों के त्यों लिए गए हैं,
- तद्भव शब्द संस्कृत से परिवर्तित होकर आए हैं,
- देशज शब्द स्थानीय भाषाओं से लिए गए हैं,
- और विदेशी शब्द अन्य भाषाओं (अरबी, फारसी, अंग्रेज़ी आदि) से हिंदी में आए हैं।

इनका प्रयोग भाषा को अधिक समर्थ, लचीला, और प्रभावशाली बनाता है।

6.2 उद्देश्य

1. विद्यार्थियों में **भाषिक संरचना** की स्पष्ट समझ विकसित करना।
2. **व्यंग्यात्मक लेखन** के माध्यम से सामाजिक वास्तविकताओं की पहचान कराना।
3. **वाक्य निर्माण के विविध रूपों** को पहचानना और उनका प्रयोग करना।
4. हिंदी की **शब्द-संपदा के स्रोतों** को जानना और उन्हें उपयोग में लाना।
5. भाषा की **अभिव्यक्तिशीलता** और **विचार सम्प्रेषण** की शक्ति को पहचानना।

6.3 मकड़ी का जाला(व्यंग्य) डॉ.रामप्रकाश सक्सेना

मकड़ी का जाला राम प्रकाश सक्सेना

मेडिकल कालेज के वार्ड नं. 3 के बेड नं. 28 के मरीज ने नर्स से कहा कि उसके बेड पर जो रॉड लगा है, उस पर मकड़ी का जाला लटक रहा है उसे हटा दीजिए। नर्स ने उत्तर दिया कि बेड की सफाई की जिम्मेदारी मेरी है। मकड़ी के जाले को हटाने का काम स्वीपर का है। जब वह आए, तब उससे कहिए।

यह मरीज कोई और नहीं, दुर्भाग्य से स्वयं लेखक ही था, जिसे सर्वाइकल स्पोन्डिलाइटिस के कारण चौबीसों घंटों के ट्रेक्शन में रखा गया था। इसमें हिलने-डुलने की सख्त मनाही थी। बेबसी की इस हालत में मैं इंतजार करने लगा कि कब स्वीपर आये। दो-तीन घंटों के बाद एक खुशनुमा नौजवान हाथ में झाड़ू लिये रूम में आया। मैंने उससे कहा, "स्वीपर जी। जरा मकड़ी का जाला हटा दो।"

उस नौजवान ने बिगड़ते हुए कहा, "मैं स्वीपर नहीं, फर्श हूँ। मेरा काम फर्श की सफाई करना है। अगर फर्श पर जाला हो, तो साफ कर दूँ।"

अब मैं स्वीपर के आगमन की प्रतीक्षा उसी आतुरता से करने लगा, जिस प्रकार एक प्रेमी अपनी प्रेमिका का करता है। आधे घण्टे के बाद एक व्यक्ति आया, जो स्वीपर जैसा लग रहा था। मैंने उसे स्वीपर कहकर संबोधित किया। उसने नाराज होकर कहा, "मैं क्या तुम्हें स्वीपर दिखाई देता हूँ? मैं तो यहां का अटेंडेंट हूँ।"

मैंने झट माफी मांग ली। मैं इतना डर गया कि उधर आते-जाते किसी भी व्यक्ति से मैंने स्वीपर का नाम नहीं लिया। थोड़ी देर के बाद एक व्यक्ति मेरे पास आया और कहने लगा, "मैं यहां का स्वीपर हूँ। आपसे पहले इस बेड पर जो साहब थे, वे बहुत भले आदमी थे। जाते समय इनाम में पांच रूपये दे गये थे। मेरे लायक कोई सेवा हो तो बता देना।" मैंने पिछले अनुभवों के आधार पर सहमते हुए कहा, "भैया जरा इस मकड़ी के जाले को साफ कर दो।"

स्वीपर ने गुंड्याई आवाज में कहा, "मेरा काम मकड़ी का जाला साफ करना नहीं।" मैं फिर घबड़ा गया। स्वीपर जाते-जाते मेरे ऊपर दया करते हुए यह सलाह दे गया, "थोड़ी देर में बड़ी सिस्टर राउंड पर आयेंगी। वह ही वार्ड की ओवरऑल इंचार्ज है। आप उनसे कहना।"

शिकायत के इसी क्रम में सारा दिन निकल गया। पर कहीं कोई आसार नजर नहीं आ रहा था। शाम होने लगी। रात आ गई, पर जाला छुटाने कोई न आया।

दूसरे दिन भी कुछ न हुआ। इत्तिफाक से उसी दिन शाम को मेरे एक पत्रकार मित्र मुझसे मिलने आये। मैंने उनको यह सब हाल बताया। इसके दूसरे दिन शहर के लगभग सभी दैनिक पत्रों में यह खबर छपी। एक अखबार ने तो सम्पादकीय ही छाप डाला। उसमें उन्होंने लिखा, "हमारे प्रजातंत्र की नौकरशाही में मकड़ी का जाला लग गया है।"

उक्त समाचार पूरे मेडिकल कॉलेज में फैल गया। फलस्वरूप सुपरिटेडेंट को एक इमरजेंसी मीटिंग बुलानी पड़ी, जिसमें इस प्रश्न पर गंभीरता से विचार किया गया। जब सुपरिटेडेंट ने वार्ड नं० 3 के हाउस-सर्जन को जिम्मेदार ठहराना चाहा, तब उसने सफाई में कहा, "सर, यह बेड हमारे यूनिट का नहीं है।"

इस बात पर मीटिंग में तू-तू मैं-मैं हो गई। अतः यह सभा शीघ्र ही समाप्त करनी पड़ी। चूंकि यह राजधानी का मेडिकल कालेज था, इसलिए यह संपूर्ण राज्य में चर्चा का विषय बन गया। एक विरोधी पक्ष के सदस्य ने इसका फायदा उठाया। उसने विधानसभा में इस घटना पर स्वास्थ्य मंत्री से वक्तव्य देने को कहा। मंत्री महोदय ने बताया कि वे शीघ्र ही मेडिकल कॉलेज का दौरा करेंगे और इस संबंध में अपना वक्तव्य देंगे।

समाचार पत्रों में जब यह खबर छपी, तब सुपरिटेडेंट महोदय को पुनः इस घटना पर विचार करने के लिए मीटिंग बुलानी पड़ी। मीटिंग में सुपरिटेडेंट ने इस विजय पर अपनी चिंता व्यक्त की और लोगों से सुझाव मांगे। काफी विचार-विमर्श के बाद भी जब कोई नतीजा नजर नहीं आया, तब सुपरिटेडेंट महोदय ने खीज कर कहा, "मकड़ी का जाला मैं ही हटा दूंगा।"

नोट

इस बात पर सुपरिटेण्डेंट के एक चमचे को बहुत बुरा लगा और उसने कहा, "सर आप चिंता न करें, मकड़ी का जाला मैं हटा दूंगा।" इस कथन पर एक नर्स ने, जिसका रिकार्ड बहुत खराब था और जिसका प्रमोशन ऊँच था, यह सोचा कि ऐसा अवसर अपने हाथ से नहीं जाने देना चाहिए। ऐसा विचार मन में आते ही उस नर्स ने मधुर स्वर में घोषणा की, "आप डॉक्टरों को यह शोभा नहीं देता। इस कार्य को करने के लिए आप मुझे अवसर दीजिए। यदि आप आज्ञा दें, तो मैं अभी यह कार्य करके आती हूँ।"

एक जूनियर डॉक्टर ने, जो उस सुंदर नर्स पर मरता था, सोचा कि क्यों न इस अवसर का लाभ उठाया जाये। अतः उसने सुपरिटेण्डेंट से कहा, "सर, आप इनको तकलीफ मत दीजिए। यह काम मैं कर दूंगा।" सुपरिटेण्डेंट उस जूनियर डॉक्टर के मन की बात को भांप गया, इसलिए उसने इस विचार से कि यहां डॉक्टर की दाल न गलने दी जाए, यह निर्णय लिया "क्योंकि इस काम को करने की पहल सिस्टर निर्मल ने की है, अतः यह अवसर उन्हीं को प्रदान किया जाये।" सुपरिटेण्डेंट का अंतिम वाक्य समाप्त होते ही नर्स मीटिंग से उठ ली और वार्ड नं 3 की ओर चल दी। यह दृश्य देखकर लोग हक्के-बक्के रह गये और नर्स के पीछे चल दिये।"

जब यह मीटिंग चल रही थी, उसी समय वार्ड नं 0 3 के बेड नं 0 28 के मरीज यानी मुझको मकड़ी का जाला हटाने की एक नई योजना सूझी। मैंने फर्राश से कहा, "मकड़ी का जाला कई दिनों से लगा है। मैं तुम्हें दो रूपये दूंगा। तुम्हीं हटा दो।"

इतना सुनते ही फर्राश की बाछे खिल गई। उसने जैसे ही मकड़ी का जाला हटाने के लिए हाथ बढ़ाया, पीछे से स्वीपर ने, जो दो रूपये की बात सुन चुका था, फर्राश को धक्का दिया और बोला, "साले, दो रूपये के लालच करता है। चल हट, यह काम मैं अकेला कर देता हूँ।" इस बात पर दोनों में गुथम-गुथा हो गई। इसका लाभ उठाते हुए पास में खड़े अटेंडेंट ने मरीज से कहा, "साहब। ये दोनों साले बदमाश हैं। आप मुझे एक रूपया दे देना।" इतना कहकर उसने जाला छुटा दिया।

वार्ड में जब यह हंगामा हो रहा था, तभी वहां नर्स, सुपरिटेण्डेंट व अन्य डॉक्टरों ने प्रवेश किया। सुपरिटेण्डेंट ने समझा-बुझा कर इस हंगामे को शांत किया।

वार्ड में हुए गुथम-गुथा जैसी अनियमितताओं के विरुद्ध कार्रवाई करने हेतु सुपरिटेण्डेंट ने पुनः मीटिंग बुलाई। जब यह मीटिंग चल रही थी, तभी सुपरिटेण्डेंट को स्वास्थ्य मंत्री के सचिव का फोन मिला। फोन पर सचिव ने बताया, अभी-अभी मंत्री महोदय ने नगर के पत्रकारों के समक्ष यह घोषणा की है कि वह कल अस्पताल का दौरा करेंगे और इस गांधी सप्ताह में सफाई अभियान के अंतर्गत मकड़ी का जाला वह स्वयं साफ करेंगे। मंत्री महोदय के साथ कुछ पत्रकार तथा फोटोग्राफर भी होंगे। आप मकड़ी का जाला ज्यों का त्यों लगा रहने दीजिए। बाकी अस्पताल की अच्छी साफ-सफाई करा दीजिए। बीस-पच्चीस लोगों के नाश्ते-पानी का भी प्रबंध अस्पताल में करा दीजिए।

जब सुपरिटेण्डेंट ने सचिव का यह कथन मीटिंग में सुनाया तब यह चिंता होने लगी कि मकड़ी का जाला तो पहले ही हटा दिया गया है, फिर मंत्री महोदय क्या हटायेंगे।

इस पर सुपरिटेण्डेंट के चमचे ने सुझाव दिया, "सर, आप चिंता क्यों करते हैं, अपने मेडिकल कालेज में बहुत मकड़ी के जाले हैं। जिस अटेंडेंट ने मकड़ी का जाला हटाया है, उसे यह आदेश दिया जाये कि वह मकड़ी का जाला फिर उसी स्थान पर लागू दे।" इस सुझाव पर सभी ने एक मत में समर्थन किया। अटेंडेंट के द्वारा मकड़ी का जाला उसी स्थान पर पुनः लगा दिया गया।

रात भर मकड़ी का जाला अपने भाग्य को सराहता हुआ मंत्री महोदय के कर कमलों का इंतजार करता रहा और नासमझी का उपहास भी।

दूसरे दिन प्रातः मंत्री महोदय के आगमन की सभी तैयारियां मेडिकल कॉलेज में कर ली गई। ऐन मौके पर सुपरिटेण्डेंट साहब को मंत्री महोदय के सचिव द्वारा फोन पर यह सूचना मिली, "खेद है कि मंत्री महोदय आज न आ सकेंगे। उनके चुनाव क्षेत्र में सूखा-ग्रस्त इलाके का दौरा करने हेलिकॉप्टर से मुख्यमंत्री आ रहे हैं। अतः मंत्री महोदय भी उनके साथ दौरे पर रहेंगे।"

मंत्री महोदय के अगले दौर का इंतजार करता हुआ, मकड़ी का जाला जहां था, वहीं है।

व्याख्या-

1. मकड़ी का जाला - जीवन का प्रतीक

मकड़ी जिस तरह अपने चारों ओर जाला बुनती है, उसी तरह मनुष्य अपने जीवन में इच्छाओं और दिखावे का जाल बुनता है।

- मकड़ी का जाला सुरक्षा और आश्रय का प्रतीक है, लेकिन यही जाला उसकी सीमाओं को भी निर्धारित करता है।
- इसी तरह, मनुष्य भौतिक सुख-सुविधाओं के लालच में ऐसा जाल बुन लेता है, जिससे उसका जीवन उलझ जाता है।

2. दिखावे की प्रवृत्ति पर प्रहार

लेखक ने इस व्यंग्य में दिखावे की संस्कृति और सामाजिक प्रतिस्पर्धा पर करारा प्रहार किया है।

- मनुष्य अधिक संपत्ति, प्रतिष्ठा और सामाजिक स्वीकृति पाने के लिए अपनी वास्तविक आवश्यकताओं को भूलकर अनावश्यक चीजों का संग्रह करता है।
- यह प्रवृत्ति न केवल मानसिक तनाव का कारण बनती है, बल्कि व्यक्ति को वास्तविक सुख और शांति से दूर ले जाती है।

3. भौतिकवाद की आलोचना

मकड़ी का जाला भौतिकवाद का प्रतीक है।

- मनुष्य की बढ़ती इच्छाएं और लालच उसे एक अंतहीन चक्र में फंसा देती हैं।

- भौतिक सुख-सुविधाओं के पीछे भागना, जीवन को सरल और सहज बनाने के बजाय और जटिल बना देता है।

4. सादगी और आत्म-संतोष का संदेश

लेखक यह संदेश देते हैं कि जीवन का असली सुख और शांति सादगी और आत्म-संतोष में है।

- अनावश्यक दिखावे और संग्रह की प्रवृत्ति को छोड़कर हमें अपने जीवन को सरल और उद्देश्यपूर्ण बनाना चाहिए।
- केवल संतोष और सादगी से ही हम मानसिक शांति प्राप्त कर सकते हैं।

5. प्रतीकात्मकता और व्यंग्य का प्रभाव

लेखक ने मकड़ी और उसके जाले को एक सशक्त प्रतीक के रूप में प्रयोग किया है।

- मकड़ी का जाला न केवल जीवन की जटिलताओं को दर्शाता है, बल्कि यह भी दिखाता है कि इन जटिलताओं का समाधान स्वयं हमारे हाथों में है।

व्यंग्य की विशेषताएँ -

बात एक मामूली-सी समस्या की- एक अस्पताल के मरीज को सिर्फ एक मकड़ी के जाले से परेशानी होती है, लेकिन उसकी शिकायत को हल करने में पूरा सिस्टम उलझ जाता है।

जिम्मेदारियों की गोलमाल -

नर्स कहती है ये काम स्वीपर का है।

फर्गराश कहता है उसका काम फर्श साफ करना है।

अटेंडेंट बुरा मानता है कि उसे स्वीपर समझ लिया गया।

स्वीपर साफ इनकार कर देता है कि ये उसका काम नहीं।

मामला बन जाता है राष्ट्रीय मुद्दा -

अखबारों में खबर छपती है, संपादकीय आता है, विधानसभा में चर्चा होती है।

स्वास्थ्य मंत्री तक का दौरा तय हो जाता है सिर्फ एक जाले को हटाने के लिए!

ब्यूरोक्रेसी का मजाक -

हर कोई अपनी जिम्मेदारी से बचता है और काम को दूसरे पर टालता है।

जब मंत्री का दौरा तय होता है, तब जाले को फिर से लगा दिया जाता है – ताकि मंत्री उसे हटा सकें और फोटो खिंचवाया जा सके।

6.4 वाक्य- संरचना - परिचय

वाक्य संरचना - अर्थ और परिभाषा

अर्थ- वाक्य संरचना का तात्पर्य शब्दों को एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित करके ऐसा समूह बनाने से है, जो व्याकरण-सम्मत हो और स्पष्ट अर्थ प्रदान करे। यह भाषा की सबसे छोटी पूर्ण इकाई है, जो एक विचार, भावना, या सूचना को व्यक्त करती है।

विद्वानों द्वारा दी गयीं परिभाषाएँ

वाक्य संरचना को विभिन्न विद्वानों ने अपनी दृष्टि से परिभाषित किया है। इन परिभाषाओं के माध्यम से वाक्य संरचना के महत्व और उसके व्याकरणिक स्वरूप को बेहतर ढंग से समझा जा सकता है।

"वाक्य वह है, जिसमें शब्द, उनके रूप, और उनका क्रम इस प्रकार व्यवस्थित हो कि वह अर्थपूर्ण और व्याकरण-सम्मत हो।" - पाणिनि

"वाक्य शब्दों का ऐसा समूह है, जो किसी विचार या भाव को स्पष्ट और व्यवस्थित रूप से व्यक्त करता है।" - पतंजलि

"वाक्य संरचना वह प्रक्रिया है, जिसमें शब्दों का उचित चयन और क्रम निर्धारण करके विचारों को व्याकरण-संगत और स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया जाता है।" - डॉ. रामचंद्र वर्मा

"वाक्य संरचना भाषा का आधारभूत ढाँचा है, जो विचारों को व्यक्त करने के लिए शब्दों और उनके व्याकरणिक संबंधों को एक व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करता है।" - डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी

विद्वानों की परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि वाक्य संरचना का मूल आधार भाषा की शुद्धता, शब्दों का सही क्रम, और व्याकरणिक नियमों का पालन है। यह भाषा को प्रभावी और अर्थपूर्ण बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

महत्त्व-

वाक्य संरचना भाषा की नींव है। यह संवाद को स्पष्ट, प्रभावशाली और रोचक बनाती है। इसके बिना भाषा अराजक और अस्पष्ट हो सकती है।

वाक्य संरचना के मुख्य तत्त्व

वाक्य के अंग - वाक्य मुख्यतः दो भागों में विभाजित होता है -

उद्देश्य (Subject) - वाक्य में जिसका वर्णन किया जाता है।

विधेय (Predicate) - उपवाक्य के बारे में जो कहा जाता है।

शब्दों का क्रम - हिंदी में वाक्य का सामान्य क्रम उपवाक्य + क्रिया + कर्म होता है। **उदाहरण** - "राम स्कूल जाता है।"

अंग्रेजी में इसका क्रम Subject + Verb + Object होता है।

योग्यता संवर्धन

व्याकरणिक संबंध - वाक्य के शब्दों के बीच सही व्याकरणिक संबंध होना आवश्यक है। जैसे, संज्ञा और सर्वनाम का क्रिया के साथ संख्या, पुरुष, और वचन में मेल होना।

वाक्य के प्रकार - वाक्य संरचना के आधार पर वाक्य को निम्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है -

सरल वाक्य - एक ही विचार को व्यक्त करता है। उदाहरण - "मैं पुस्तक पढ़ता हूँ।"

संयुक्त वाक्य - दो या अधिक सरल वाक्य संयोजक शब्दों द्वारा जुड़े होते हैं। उदाहरण - "मैं स्कूल गया और वहाँ खेला।"

मिश्र वाक्य - एक मुख्य वाक्य और एक या अधिक आश्रित वाक्य होते हैं। उदाहरण - "जब बारिश हुई, तब मैं घर पर था।"

वाक्य रचना (Sentence Formation)

वाक्य रचना शब्दों के संयोजन की प्रक्रिया है, जिसमें शब्दों को सही क्रम में रखा जाता है ताकि वे एक स्पष्ट और अर्थपूर्ण संदेश व्यक्त कर सकें। वाक्य रचना में प्रमुख रूप से वाक्य संरचना और वाक्य के अवयव शामिल होते हैं। वाक्य एक समूह होता है जिसमें सामान्यतः एक विषय (Subject), क्रिया (Verb), और कृदंत (Object) होते हैं।

वाक्य की संरचना -

वाक्य की संरचना प्रत्येक भाषा में अलग होती है, लेकिन हिंदी में सामान्यतः वाक्य की संरचना विषय + क्रिया + कर्म के रूप में होती है। उदाहरण के लिए -

राजू खेलता है। (विषय - राजू, क्रिया - खेलता है, कर्म -)

वाक्य रचना में शब्दों का सही स्थान बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे वाक्य का अर्थ बदल सकता है। जैसे -

राम स्कूल जाता है। (यह वाक्य सामान्य है।)

जाता है राम स्कूल। (यह वाक्य अनुवाद की स्थिति में हो सकता है या अस्पष्ट हो सकता है।)

वाक्य के अवयव -

विषय (Subject) - वाक्य का वह हिस्सा जो मुख्य रूप से क्रिया को करता है।

क्रिया (Verb) - वह क्रिया जो किसी कार्य को व्यक्त करती है।

कर्म (Object) - क्रिया से प्रभावित होने वाला तत्व।

6.5 वाक्य- संरचना - तत्सम, तद्भव देशज विदेशी

वाक्य-संरचना -

भाषा मानव की अभिव्यक्ति का सबसे शक्तिशाली माध्यम है। शब्द और वाक्य रचना भाषा की संरचना के दो मुख्य घटक हैं। शब्द रचना, यानी शब्दों का निर्माण और उनका संयोजन, तथा वाक्य रचना, यानी शब्दों का उचित क्रम में संयोजन, भाषा के प्रभावी उपयोग के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। भाषा का उद्देश्य विचारों, भावनाओं और सूचनाओं का आदान-प्रदान करना है, और इसे सही ढंग से करने के लिए शब्दों और वाक्यों की उचित रचना की आवश्यकता होती है। हमारी भाषा के विकास और संरचना में शब्दों का विशेष स्थान होता है। शब्द किसी भी भाषा के संवाद और विचारों के आदान-प्रदान का प्रमुख माध्यम होते हैं। हिंदी भाषा के शब्दों की उत्पत्ति और विकास की प्रक्रिया बहुत जटिल रही है, और इस प्रक्रिया में समय के साथ कई भाषाओं का प्रभाव पड़ा है। हिंदी शब्दावली में प्रयुक्त शब्दों का वर्गीकरण प्रमुख रूप से तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों के रूप में किया जाता है। इन शब्दों के माध्यम से हम न केवल भाषा की संरचना को समझ सकते हैं, बल्कि भाषा के इतिहास, संस्कृति और सामाजिक परिवेश का भी अध्ययन कर सकते हैं।

1. शब्द रचना (Word Formation)

शब्द रचना किसी भाषा की प्राथमिक संरचना होती है। शब्द रचना से तात्पर्य है किसी विचार, वस्तु, या भावना को व्यक्त करने के लिए शब्दों का निर्माण। शब्दों का निर्माण विभिन्न विधियों से होता है, जैसे - संज्ञा, क्रिया, विशेषण, सर्वनाम, आदि। हिंदी में शब्द रचना की प्रक्रिया विविध होती है, और यह मुख्य रूप से मूल शब्द (Root Word), रूपांतरण (Derivation), और समास (Compound Words) पर आधारित होती है।

मुख्य रूपांतरण विधियाँ -

प्रत्यय (Suffix) - किसी शब्द के अंत में एक प्रत्यय जोड़कर नया शब्द बनाना।

उदाहरण - शिक्षण (शिक्षा + प्रत्यय -ण)

प्रारंभ (Prefix) - किसी शब्द के प्रारंभ में एक उपसर्ग जोड़कर नया शब्द बनाना।

उदाहरण - असमर्थ (समर्थ + उपसर्ग -अ)

समास - दो या दो से अधिक शब्दों को जोड़कर एक नया शब्द बनाना। उदाहरण

- पुस्तकमेला (पुस्तक + मेला)

विलोम - किसी शब्द का विरोधी अर्थ प्रकट करने वाला शब्द। उदाहरण - अच्छा

- बुरा, गर्म - ठंडा

शब्द रचना की प्रक्रिया में भाषा की परंपरा, सांस्कृतिक प्रभाव और ऐतिहासिक विकास का भी महत्वपूर्ण योगदान होता है। जैसे-जैसे समाज और जीवनशैली में परिवर्तन आता है, नए शब्दों की आवश्यकता महसूस होती है, और शब्दों का निर्माण होता है।

शब्द-विचार (तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी)

शब्द - प्रयोग-योग्य, एकार्थ-बोधक तथा परस्पर अन्वित वर्णों के समूह को शब्द कहते हैं। दूसरे शब्दों में एक या अनेक वर्णों के मेल से निर्मित स्वतंत्र एवं सार्थक ध्वनि ही शब्द कहलाती है। जैसे - एक वर्ण से निर्मित शब्द-न (नहीं) व (और), अनेक वर्णों से निर्मित शब्द-कुत्ता, शेर, कमल, नयन, प्रासाद, सर्वव्यापी, परमात्मा, बालक, कागज, कलम आदि।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है तथा वह समाज में भाषा के माध्यम से परस्पर विचार-विनिमय करता है। इस प्रक्रिया में जो वाक्य प्रयुक्त हैं, उनमें सार्थक शब्दों का प्रयोग करता है। शब्द किसी भाषा के प्राण हैं। बिना शब्दों के भाषा की कल्पना करना असंभव है। शब्द भाषा की एक स्वतंत्र एवं सार्थक इकाई है, जो एक निश्चित अर्थ का बोध कराती है।

♦ शब्द-भेद -

हिन्दी भाषा, विकास की दीर्घ परम्परा और अनेक भाषाओं के सम्पर्क का परिणाम है। फलतः हिन्दी शब्दावली का वर्गीकरण अनेक आधारों पर किया जाता है, जो इस प्रकार है -

- ♦ **विकास (स्रोत) के आधार पर शब्द-भेद** - प्रत्येक भाषा का विकास निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसमें भाषा के नये-नये शब्दों का निर्माण होता रहता है। हिन्दी भाषा में विकास के आधार पर शब्दों को छः वर्गों में विभाजित किया जाता है -

- (1) **तत्सम् शब्द** - हिन्दी भाषा का उद्भव संस्कृत से माना जाता है; इस कारण हिन्दी में संस्कृत के कुछ शब्द मूल रूप के समान प्रयुक्त होते हैं और इनके सहयोग से अनेक शब्दों का निर्माण किया जाता है।

जो शब्द संस्कृत से हिन्दी में बिना परिवर्तन किये अपना लिये जाते हैं, उन्हें तत्सम् शब्द कहते हैं। 'तत्' का आशय 'उसके' और 'सम्' का आशय 'समान' है। इस प्रकार जो शब्द संस्कृत के समान होते हैं या जो शब्द बिना विकृत हुए संस्कृत से ज्यों के त्यों हिन्दी भाषा में आ गये हैं, वे तत्सम् शब्द होते हैं। जैसे - भानु, प्राण, कर्म, अग्नि, कोटि, हस्त, मस्तक, यौवन, शृंगार, ज्ञान, वायु, अश्रु, ग्रीवा, दीपक आदि।

(2) तद्भव शब्द -

जो शब्द संस्कृत से उत्पन्न या विकसित हुए हैं या संस्कृत से विकृत होकर हिन्दी में प्रयुक्त किये जाते हैं, उन्हें तद्भव शब्द कहते हैं। इस वर्ग में वे शब्द आते हैं जो संस्कृत भाषा से पालि, प्राकृत, एवं अपभ्रंश के माध्यम से अपना पूरा मार्ग तय करके आये हैं। जैसे - काम, आग, कबूतर, हाथ, साँप, माँ, भाई, घी, दूध, भैंस, खाट, थाली, सुई, पानी, थन, चून, आँसू, गर्दन, आँवला, गर्मी आदि।

तत्सम	-	तद्भव
अंक	-	आँक
अंगरक्षक	-	अँगरखा

(3) अर्द्धतत्सम शब्द -

अर्द्धतत्सम शब्द वे शब्द होते हैं, जो संस्कृत शब्दों से व्युत्पन्न या विकसित होकर सीधे ही हिन्दी भाषा में आ गये हैं। इन्हें मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषा परिवार में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ, फलतः इनके रूप में इतना परिवर्तन नहीं आया, जितना तद्भव शब्दों के रूप में आया। उधर इनका रूप वैसा भी नहीं रह पाया जैसे तत्सम शब्दों का रहा, इसलिए इन्हें न तत्सम कहा जाता है और न तद्भव, इन्हें 'अर्द्धतत्सम' की संज्ञा दी गई है। इनकी संख्या अधिक नहीं है। जैसे - अग्नि, असमान, आँगन, आखर, कारज, किरिपा, किशुन, किसन, चंदर, चूरन, तन, तोल, बरस, भूख, मउर, लगन, लासा, लिछमन, लिछमी, वच्छ, समान।

(4) देशी या देशज शब्द - जो शब्द स्थानीय आधार पर या ध्वनि के अनुसार गढ़ लिए जाते हैं उन्हें देशी या देशज शब्द कहते हैं। जैसे - पेड़, झगड़ा, चीलगाड़ी आदि।

ज्यादातर देशी और देशज, इन दोनों शब्दों में अन्तर नहीं किया जाता है। पर दोनों शुद्ध एक-दूसरे के पर्याय नहीं हैं। इनके अन्तर को समझ लेना आवश्यक है। 'देशी' शब्द का प्रयोग संस्कृत काल से चला आ रहा है। जिनका अर्थ है, वे शब्द जिन्हें संस्कृत व्याकरण के नियमों से सिद्ध नहीं किया जा सके। कुछ आदिवासियों की भाषा के जो आर्यों के आगमन के समय भारत में निवास करते थे। इनमें से आस्ट्रिक जैसे कबीले तो आर्यों के आगमन से आस्ट्रेलिया एवं इण्डोनेशिया की ओर चले गये। कुछ काल कवलित हो गये और कुछ आर्यों में घुल-मिल गये। भाषा में इनका अन्तर्मिश्रण संस्कृत काल से ही प्रारम्भ हो गया था। पालि, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में तो इनकी पर्याप्त बहुलता पाई जाती है। इसलिए हेमचन्द्र को 'देशी' नाम माला कोष में लिखना पड़ा। दूसरी ओर 'देशज' शब्द उन्हें कहा जाना चाहिए,

नोट

जिनका निर्माण विभिन्न भाषा-भाषी लोगों ने अपनी आवश्यकतानुसार अनुकरण के आधार पर अथवा अन्य प्रकार से कर लिया है। इनको इस आधार पर एक वर्ग में रखा गया है कि दोनों की ही व्युत्पत्ति संधिगुह्य है। किसी भी ज्ञात देशीय या विदेशीय भाषा के आधार पर इन्हें व्युत्पन्न नहीं किया जा सकता है।

- ♦ **देशज शब्द** - चिड़िया, डाब, ढोलक, ओढ़ना, बाल, खाल, छोटा, घघरी, पाग, पेंट, झाड़ी, जाँटी, बेटी, तरकारी, आला, भौँपू, चीलगाड़ी, फटफटिया, टैं-टैं, चैं-चैं, पों-पों, में-में, टप-टप, झर-झर, कल-कल, धड़ा-धड़, झल-मल, झप-झप, अण्टा, तेंदुआ, ठुमरी, फुनगी, खिचड़ी, बियाना, ठेठ, गाड़ी, थैला, खटखटाना, ढूँढना, मूँगा, खौँपा, झुग्गी, लुटिया, चुटिया, खटिया, लोटा, सरपट, खर्राटा, चाँद, चुटकी, लौकी, ठठेरा, पटाखा, खुरपी, कटोरा, केला, बाजरा, ताला, लुंगी, जूता, बछिया, मेल-जोल, सटकना, डिबिया, पेट, कलाई, भौँदू, चिकना, खाट, लड़का, छोरा, दाल, रोटी, कपड़ा, भाण्डा, लत्ते, छकड़ा, खिड़की, झाड़ू, झोला, पगड़ी, पड़ोसी, खचाखच, कोड़ी, भिण्डी, कपास, परवल, सरसों, काँच, इडली, डोसा, उटपटांग, खटपट, चाट, चुस्की, साग, लूण, मिर्च, पेड़, धब्बा, कबड्डी, झगड़ा आदि।

- (5) **विदेशी शब्द** – विदेशी भाषाओं से आये तत्सम् एवं तद्भव शब्द इस वर्ग में रखे जाते हैं। दूसरे 'विदेशी' या विदेश शब्द का अर्थ भारतीय आर्य परिवार से मित्र भाषाएँ लिया जाना चाहिए, क्योंकि हिन्दी में द्रविड़ परिवार की भाषाओं के शब्द भी मिलते हैं, किन्तु द्रविड़ भाषाओं को विदेशी भाषा नहीं कहा जा सकता है। इसलिए विदेशी भाषा का 'देश से बाहर की भाषा' अर्थ लेने से अव्यक्ति दोष आ जाएगा। हिन्दी भाषा अपने उद्भव से लेकर आज तक अनेक भाषाओं के सम्पर्क में आयी जिनमें से प्रमुख हैं—अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी, पुर्तगाली व फ्रेंच।

- ♦ **अरबी शब्द** - गरीब, मालिक, कैदी, औरत, रिश्त, कलम, अमीर, औलाद, दिमाग, तरक्की, तरफ, तकिया, जालिम, जलसा, जनाब, जुलूस, खबर, कायदा, शराब, हमला, हाकिम, हक, हिसाब, मतलब, कसरत, कसर, कसूर, उम्र, ईमानदार, इलाज, इमारत, ईनाम, आदत, आखिर, मशहूर, मौलवी, मुहावरा, मदद, फायदा, नशा, तमीज, तबियत, तबला, तबादला, तमाम, दावत, आम, फकीर, अजब, अजीब, अखबार, असर, अल्ला, किस्मत, खत, जिक्र, तजुरबा, दुनिया, बहस, मुकदमा, वकील, हमला, अहमक, ईमान, किस्त, खत्म, जवाब, तादाद, दिन, दुकान, दलाल, बाज, फैसला, मामूली, मालूम, मुन्सिफ, मजमून, वहम, लायक, वारीस, हाशिया, हाल, हाजिर, अदा, आसार, आदमी, औसत, कीमत, कुर्सी, जिस्म, तमाशा, तारीफ, तकदीर, तकाजा, तमाम, एहसान, किस्सा, किला, खिदमत, दाखिल, दौलत, बाकी, मुल्क, यतीम, लफ्ज, लिहाज, हौसला, हवालात, मौसम, मौका, कदम, इजलास, नकल, नहर, मुसाफिर, कब्र, इज्जत,

इमारत, कमाल, ख्याल, खराब, तारीख, दुआ, दफ्तर, दवा, मुद्दई, दवाखाना, मौलवी, ताज, मशाल, शेख, इरादा, इशारा, तहसील, हलवाई, नकद, अदालत, लगान, वालिद, खुफिया, कुरान, अरबी, मीनार, खजाना, ऐनक, खत आदि।

- ♦ **फारसी शब्द** - जबर, जोर, जीन, जहर, जंग, माशा, राह, पलंग, दीवार, जान, चश्मा, गोला, किनारा, आफत, आवारा, कमरबंद, गल्ला, चिराग, जागीर, ताजा, नापसन्द, मादा, रोगन, रंग, बेरहम, नाव, तनख्वाह, जादू, चादर, गुम, किशमिश, आमदनी, आराम, अदा, कुश्ती, खूब, खुराक, गोश्त, गुल, ताक, तीर, तेज, दवा, दिल, दिलेर, बेहूदा, बहरा, बेवा, मरहम, मुर्गा, मीन, आतीशबाजी, आबरू, आबदार, अफसोस, कमीना, खुश, खरगोश, खामोश, गुलाब, गुलुबन्द, चाशनी, चेहरा, चूँके, चरखा, तरकश, जोश, जिगर, जुर्माना, दंगल, दरबार, दुकान, देहात, पैमाना, मोर्चा, मुफ्त, पेशा, पारा, मलीदा, पुल, मजा, पलक, मुर्दा, मलाई, पैदावार, दस्तूर, शादी, वापिस, वर्ना, हजार, हफ्ता, सौदागर, सूद, सरकार, सरदार, लश्कर, सितार, सुर्ख, लगाम, लेकिन, सितारा, चापलूसी, गन्दगी, बर्फ, बीमार, नमूना, नमक, जमींदार, अनार, बाग, जिन्दगी, जनाना, कारखाना, तख्त, बाजार, रोशनदान, चिलम, हुक्का, अमरूद, गवाह, जलेबी, किसमिस, कारीगर, पर्दा, कबूतर, चुगलखोर, शिकार, चापलूसी, चालाक, प्याला, रूमाल, आन, आबरू, आमदनी, अंजाम, अंजुमन, अन्दाज, अगर, अगरचे, अगल, बगल, आफत, आवज, आईना, किनारा, गर्द, गीला, गिरह, नेहरा, तीन, नाजुक, नापाक, पाजी, परहेज, याद, बेरहम, तबाह, आजमाइश, जल्दी आदि।
- ♦ **अंग्रेजी शब्द** - डाक्टर, टेलीफोन, टैक्स, टेबल, अफसर, कमेटी, एजेन्ट, कमीशन, नर्स, कम्पाउंडर, कालेज, जेल, होल्डर, बॉक्स, गैस, चेयरमैन, अपील, टिकिट, कोर्ट, गिलास, सिनेमा, नम्बर, पैन्सिल, रबर, रजिस्टर, प्रेस, समन, थियटर, डिग्री, बोतल, मील, कैप्टन, पैन, फाउन्टेन, ड्राइवर, डिस्ट्रिक्ट, डिग्री, ट्यूशन, काउन्सिल, क्रिकेट, क्वार्टर, कम्पनी, एजेन्सी, इयरिंग, इन्टर, इंच, मीटिंग, केम, पाउडर, पेट्रोल, पार्सल, प्लेट, पार्टी, दिसम्बर, थर्मामीटर, ऑफिस, ड्रामा, ट्रक, कैलेण्डर, आंटी, बैग, होमवर्क, मजिस्ट्रेट, पोस्टमैन, कमेटी, कूपन, डबल, कम्पनी, ओवरकोट, कमीशन, फोटो, इन्स्पेक्टर, राशन, गार्ड, रेल, लाइन, रिकार्ड, सूटकेस, हाईकोर्ट, मशीन, डायरी, मिनट, रेडियो, स्कूल, हॉस्टल, सर्कस, स्टेशन, फुटबॉल, टॉफी, प्लेटफार्म, टाइप, पाउडर, पास, नोटिस आदि।
- ♦ **तुर्की शब्द** - लफंगा, चिक, चेचक, लाश, कुर्की, मुगल, कुली, कैची, बहादुर, कज्जाक, बेगम, काबू, तलाश, कालीन, तोप, तमगा, आगा, उर्दू, चमना, जाजिम, चुगुल, सुराग, सौगात, उजबक, चकमक, बावर्ची, मुचलका, गलीचा, चमचा, बुलबुल, दरोगा, चाकू, बारुद, अरमान आदि।
- ♦ **पुर्तगाली शब्द** - तौलिया, तिजोरी, चाबी, गमला, कारतूस, आलपिन, अचार, कमीज, कॉफी, तम्बाकू, साबुन, फीता, किरानी, बाल्टी, आलमारी, अन्नानास,

नोट

अलकतरा, काजू, मस्तूल, पिस्तूल, नीलाम, गोदाम, किरच, कमरा, कनस्तर, संतरा, पीपा, मिस्त्री, बिस्कुट, परात, बोटल, काज, पपीता, मेज, आलू आदि।

- ♦ **फ्रांसीसी शब्द** - पुलिस, कप्पू, अंग्रेज, इंजन, कारतूस, कूपन, इंजिनियर, रेस्तरां, फिरंगी, फ्रैंचाइज, फ्रांस आदि।
- ♦ **यूनानी शब्द** - टेलीफोन, डेल्टा, एटम, टेलीग्राफ आदि।
- ♦ **डच शब्द** - तुरुप, बम।
- ♦ **चीनी शब्द** - चाय, लीची, तूफान आदि।
- ♦ **तिब्बती शब्द** - डांडी।
- ♦ **ग्रीक शब्द** - दाम, सुरंग आदि।
- ♦ **जापानी शब्द** - रिक्शा, झम्पान आदि।

(6) **संकर शब्द** - संकर शब्द वे शब्द होते हैं, जो दो मित्र भाषाओं के शब्दों से मिलकर सामाजिक शब्दों के रूप में निर्मित होते हैं। ये शब्द भी हिन्दी में प्रयुक्त होते हैं। जैसे-

- रेलगाड़ी (अंग्रेजी+हिन्दी),
- बमवर्षा (अंग्रेजी+संस्कृत),
- नमूनार्थ (फारसी+संस्कृत),
- सजाप्राप्त (फारसी+संस्कृत),
- रेलयात्रा (अंग्रेजी+संस्कृत),
- जिलाधीश (अरबी+संस्कृत),
- जेब खर्च (पुर्तगाली+फारसी),
- रामदीन (संस्कृत+फारसी),
- रामगुलाम (संस्कृत+फारसी),
- हैड मुनीम (अंग्रेजी+हिन्दी),
- शादी ब्याह (फारसी+हिन्दी),
- तिमाही (हिन्दी+फारसी)

गतिविधि 6.1

वाक्य-संरचना में सुधार लाने के लिए एक छोटे संवाद का निर्माण करें जिसमें तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों का सही प्रयोग किया गया हो।

.....

.....

.....

.....

नोट

☑ अपनी प्रगति जांचे 6.1

1. 'मकड़ी का जाला' पाठ में जाले को किसका प्रतीक बताया गया है?
.....
.....
2. लेखक ने सरकारी कार्यालयों की किस समस्या पर व्यंग्य किया है?
.....
.....
3. लेखक ने 'प्रगति' शब्द को किस प्रकार व्यंग्यपूर्ण रूप में प्रस्तुत किया है?
.....
.....
4. वाक्य-संरचना का क्या अर्थ है?
.....
.....
5. किसी वाक्य के मुख्य अंग कौन-कौन से होते हैं?
.....
.....
6. सरल, संयुक्त और मिश्र वाक्य में क्या अंतर होता है?
.....
.....
7. तत्सम शब्द किसे कहते हैं? एक उदाहरण दीजिए।
.....
.....
8. तद्भव और देशज शब्दों में क्या अंतर है?
.....
.....
9. विदेशी शब्द किसे कहते हैं? दो उदाहरण दीजिए।
.....
.....

6.6 सारांश

"भाषा की संरचना और अभिव्यक्ति की शक्ति" शीर्षक के अंतर्गत तीन प्रमुख विषयों को सम्मिलित किया गया है -

'मकड़ी का जाला' (डॉ. रामप्रकाश सक्सेना) एक तीखा व्यंग्य है जो सरकारी दफ्तरों की जटिल, धीमी और अव्यवस्थित कार्यप्रणाली पर करारा प्रहार करता है। इसमें लेखक ने कार्यालयी तंत्र की उलझनों को मकड़ी के जाले की उपमा देकर

यह दिखाया है कि कैसे आम व्यक्ति इन प्रक्रियाओं में फँसकर असहाय हो जाता है। भाषा सरल, व्यंग्यात्मक और कटाक्ष से भरपूर है।

'वाक्य संरचना - परिचय' विषय में हिंदी भाषा में वाक्य निर्माण की मूल समझ विकसित की जाती है। इसमें वाक्य के अंग - कर्ता, क्रिया, कर्म, विशेषण आदि - के प्रयोग को स्पष्ट किया जाता है। यह खंड छात्रों को वाक्य रचना की शुद्धता और विविधता को समझने में मदद करता है।

'वाक्य संरचना - तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी शब्द' खंड में यह बताया गया है कि हिंदी की शब्दावली किन-किन स्रोतों से आती है और विभिन्न प्रकार के शब्द भाषा को कैसे समृद्ध बनाते हैं। तत्सम और तद्भव शब्द संस्कृत आधारित हैं, देशज शब्द स्थानीय बोलियों से लिए गए हैं और विदेशी शब्द अरबी, फारसी, अंग्रेज़ी आदि से आए हैं। इन सभी शब्दों का प्रयोग भाषा को अधिक प्रभावशाली बनाता है।

यह खंड विद्यार्थियों को भाषा की बनावट और उसकी गहराई को समझने में सक्षम बनाता है और भाषा के व्यावहारिक पक्ष को उजागर करता है।

6.7 शब्दावली

क्रम	कठिन शब्द	अर्थ
1	संरचना	किसी वस्तु की आंतरिक रचना या बनावट
2	अभिव्यक्ति	व्यक्त करने की क्रिया या प्रक्रिया
3	व्यंग्य	कटाक्ष के साथ कही गई आलोचना
4	तंत्र	व्यवस्था, प्रणाली
5	उपमा	तुलना करने वाली काव्य अलंकार
6	अनावश्यक	जिसकी आवश्यकता नहीं हो
7	पद्धति	कार्य करने का तरीका
8	कर्ता	वाक्य का करने वाला व्यक्ति/वस्तु
9	कर्म	जिस पर कार्य होता है
10	तत्सम	संस्कृत से लिया गया ज्यों का त्यों शब्द
11	तद्भव	संस्कृत से विकसित हिंदी शब्द
12	देशज	देशी या बोलचाल की भाषा से लिया गया शब्द
13	विदेशी	अन्य भाषाओं से लिया गया शब्द (जैसे अंग्रेज़ी)
14	दफ्तरीकरण	कार्यालयीन प्रक्रिया
15	उलझन	कठिनाई या भ्रम की स्थिति

6.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर

- लेखक ने मकड़ी के जाले को सरकारी कार्यालयों में फैले जटिल तंत्र और निष्क्रियता का प्रतीक माना है।
- उन्होंने फ़ाइलों की धूल, कामचोरी, लेट-लतीफी और अनावश्यक औपचारिकताओं पर कटाक्ष किया है।
- प्रगति को लेखक ने इस रूप में प्रस्तुत किया है कि जहाँ केवल योजनाएँ बनती हैं, लेकिन कोई ठोस क्रियान्वयन नहीं होता – एक 'स्थिर गति की प्रगति'।
- वाक्य-संरचना का अर्थ है – वाक्य में शब्दों का व्याकरणिक और अर्थपूर्ण क्रम से व्यवस्थित होना।
- वाक्य के मुख्य अंग होते हैं – कर्ता (Subject), क्रिया (Verb) और कर्म (Object)।
- सरल वाक्य एक ही विचार प्रकट करता है, संयुक्त वाक्य दो या अधिक वाक्य खंडों को संयोजक से जोड़ता है, जबकि मिश्र वाक्य में मुख्य और आश्रित उपवाक्य होते हैं।
- तत्सम शब्द वे होते हैं जो संस्कृत से बिना परिवर्तन के लिए गए हैं। जैसे- "दीपक", "माता"।
- तद्भव शब्द संस्कृत से बदले हुए रूप में आए हैं, जबकि देशज शब्द स्थानीय बोली से उत्पन्न होते हैं, जैसे – "घर" (तद्भव), "कूड़ा" (देशज)।
- विदेशी शब्द वे हैं जो हिंदी में अन्य भाषाओं (जैसे – अंग्रेज़ी, फारसी, अरबी) से आए हैं। उदाहरण – "कुर्सी", "बाज़ार"।

6.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) -1	http://books.aisectionline.com/User/UnitUrls?unitId=12	

6.10 संदर्भ

मकड़ी का जाला – डॉ. रामप्रकाश सक्सेना

हिंदी भाषा और व्याकरण – डॉ. हरिमोहन

हिंदी वाक्य संरचना – डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी

शब्द सम्पदा और शब्द संरचना – डॉ. रामस्वरूप वर्मा

व्यंग्य साहित्य की परंपरा और प्रवृत्तियाँ – डॉ. रवींद्र कालिया

हिंदी शब्दकोश (तत्सम-तद्भव सहित) – राजपाल हिंदी शब्दकोश

भाषा विज्ञान और व्याकरण – डॉ. रमेश चंद्र

6.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ) -

1. 'मकड़ी का जाला' व्यंग्य में लेखक किसकी तुलना मकड़ी के जाले से करता है?

- | | |
|-----------------------|--------------------|
| A) मकान की दीवारों से | B) सरकारी तंत्र से |
| C) समाज के नियमों से | D) अदालत से |

2. डॉ. रामप्रकाश सक्सेना की लेखनी की विशेषता क्या है?

- | | |
|---------------------|-------------|
| A) गंभीरता | B) भावुकता |
| C) हास्य और व्यंग्य | D) देशभक्ति |

3. वाक्य-संरचना का मुख्य उद्देश्य होता है -

- | | |
|-----------------------|--|
| A) केवल शब्द याद करना | B) वाक्य की रचना और उसके प्रकारों को समझना |
| C) मुहावरे सीखना | D) कविता लिखना |

4. 'तत्सम' शब्द का उदाहरण कौन-सा है?

- | | |
|---------|---------|
| A) आग | B) जल |
| C) पानी | D) फायर |

5. 'विदेशी' शब्द किस भाषा से लिए जाते हैं?

- | | |
|---------------|-------------------------------|
| A) केवल अरबी | B) केवल संस्कृत |
| C) केवल उर्दू | D) अरबी, फारसी, अंग्रेज़ी आदि |

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

1. C) समाज के नियमों से – लेखक ने समाज की उलझी और निष्क्रिय व्यवस्था को मकड़ी के जाले से जोड़ा है।
2. C) हास्य और व्यंग्य – सक्सेना जी की भाषा शैली में तीखा व्यंग्य और सहज हास्य प्रमुख है।

3. **B) वाक्य की रचना और उसके प्रकारों को समझना** – यही वाक्य संरचना का उद्देश्य है।
4. **B) जल** – ‘जल’ एक शुद्ध तत्सम शब्द है, जो संस्कृत से बिना बदले आया है।
5. **D) अरबी, फारसी, अंग्रेज़ी आदि** – विदेशी शब्दों के स्रोत इन्हीं भाषाओं से होते हैं।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. ‘मकड़ी का जाला’ किस प्रकार की रचना है और इसका उद्देश्य क्या है?
2. लेखक ने समाज की जटिलता को किस प्रतीक से जोड़ा है और क्यों?
3. तत्सम शब्द किसे कहते हैं? कोई दो उदाहरण दीजिए।
4. तद्भव शब्दों की उत्पत्ति कैसे होती है और उनमें क्या परिवर्तन आता है?
5. देशज शब्दों की विशेषता क्या होती है और उनका स्रोत क्या है?

Part – 2

C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. ‘मकड़ी का जाला’ व्यंग्य में समाज की किन समस्याओं को लेखक ने प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत किया है? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
2. डॉ. रामप्रकाश सक्सेना की भाषा-शैली में हास्य-व्यंग्य के कौन-से विशेष तत्व दृष्टिगोचर होते हैं? उनके लेखन की प्रभावोत्पादकता का मूल्यांकन कीजिए।

Part – 3

D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. समाज में व्यर्थ नियमों, परंपराओं और जटिलताओं को लेखक ने किस प्रकार ‘मकड़ी के जाले’ के प्रतीक से उजागर किया है? क्या यह आज के समाज में भी लागू होता है?
2. वाक्य रचना और शब्दों की प्रकृति - तत्सम, तद्भव, देशी और विदेशी - इन का भाषा की शुद्धता, अभिव्यक्ति और प्रभावशीलता पर क्या प्रभाव पड़ता है? विश्लेषण कीजिए।



आईसेक्ट विश्वविद्यालय समूह

एस. एल. एम. प्रतिक्रिया प्रपत्र (फीडबैक फॉर्म)

कार्यक्रम : _____
पाठ्यक्रम : _____
ब्लॉक : _____
इकाई : _____

प्रिय छात्र,

इस खंड की इकाइयों का अध्ययन करते समय, आपको पाठ के कुछ हिस्सों को समझने में कठिनाई हो सकती है। हम पाठ्यक्रम को बेहतर बनाने के लिए आपकी कठिनाइयों और सुझावों को जानना चाहते हैं। इसलिए, हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप इस ब्लॉक से संबंधित निम्नलिखित प्रश्नावली को भरकर हमें भेजें। यदि आपको दिया गया स्थान अपर्याप्त लगता है, तो कृपया एक अलग शीट का उपयोग करें।

कृपया मेल करें aisectcontent@aisect.org / ऑनलाइन फॉर्म भरने के लिए QR को स्कैन करें :

प्रश्नावली

- नाम : _____
- नामांकन क्र :

--	--	--	--	--	--	--	--	--	--	--	--
- इकाईयों का अध्ययन करने के लिये आपको कितने घंटों की आवश्यकता थी? :

--
- कृपया इस ब्लॉक को पढ़ने के आधार पर निम्नलिखित मदों पर अपनी प्रतिक्रिया दें:

अवयव	उत्कृष्ट	बहुत अच्छा	अच्छा	खराब	विशिष्ट उदाहरण दें (यदि खराब हो)
प्रस्तुति गुणवत्ता					
भाषा और शैली					
रेखाकन					
प्रयुक्त (आरेख, तालिकाएं, आदि)					
संकल्पनात्मक स्पष्टता					
अपनी प्रगति जाँचें प्रश्न					
सुझाए गए पठन – OER					

5. अन्य सुझाव :

खंड - 4	अभिव्यक्ति के विविध आयाम	141-190
इकाई - 7	वक्तव्य, दृष्टिकोण और संवाद - राष्ट्र निर्माण की धारा	143
इकाई - 8	संप्रेषण और साहित्य - विचारों की यात्रा	165



अभिव्यक्ति केवल बोलने या लिखने की कला नहीं है, यह व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के विचारों, मान्यताओं और संवेदनाओं का प्रतिबिंब भी है। इस खंड में विद्यार्थियों को वक्तव्य, दृष्टिकोण और संवाद के माध्यम से प्रभावशाली अभिव्यक्ति कौशल विकसित करने पर बल दिया गया है। संवाद प्रक्रिया, विचारों की अभिव्यक्ति, और राष्ट्र निर्माण में साहित्य तथा भाषा की भूमिका का गहन अध्ययन कराया जाएगा। अभिव्यक्ति के विभिन्न शैलियों जैसे संवाद, वाद-विवाद, निबंध, भाषण, और लेखन आदि के उदाहरणों के माध्यम से विद्यार्थियों को भाषा की व्यावहारिक उपयोगिता समझाई जाएगी। इस खंड का उद्देश्य विद्यार्थियों में तार्किक, विश्लेषणात्मक तथा सृजनात्मक अभिव्यक्ति की क्षमता को बढ़ाना है ताकि वे समाज में सकारात्मक परिवर्तन का कारक बन सकें। संप्रेषण कौशल, ध्वनि, संदेश, माध्यम, और प्रतिक्रिया जैसे घटकों के विश्लेषण द्वारा संवाद को प्रभावी बनाने के सिद्धांतों को सरल भाषा और उदाहरणों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

इकाई - 7

वक्तव्य, दृष्टिकोण और संवाद - राष्ट्र निर्माण की धारा

इकाई की रूपरेखा

- 7.1 परिचय
- 7.2 उद्देश्य
- 7.3 अप्प दीपो भव (वक्तव्य - स्वामी श्रद्धानंद)
- 7.4 भारत का सामाजिक व्यक्तित्व (प्रस्तावना - जवाहरलाल नेहरू)
- 7.5 पत्र मैसूर के महाराजा को (पत्र लेखन - स्वामी विवेकानंद)
- 7.6 सारांश
- 7.7 शब्दावली
- 7.8 अपनी प्रगति जांचे - संभावित उत्तर
- 7.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER
- 7.10 संदर्भ
- 7.11 अभ्यास

7.1 परिचय

"वक्तव्य, दृष्टिकोण और संवाद - राष्ट्र निर्माण की धारा" खंड भारतीय राष्ट्र-निर्माण में महापुरुषों के विचारों, वक्तव्यों, संवादों और पत्रों के योगदान को उजागर करता है। इस खंड में व्यक्त विचार न केवल भारत की सांस्कृतिक चेतना को दिशा देते हैं, बल्कि देश की सामाजिक और वैचारिक नींव को भी दृढ़ करते हैं।

- ◆ "अप्प दीपो भव" में स्वामी श्रद्धानंद आत्मनिर्भरता, आत्मबल और आत्मप्रकाश की प्रेरणा देते हैं। यह वक्तव्य युवाओं को आत्मा की शक्ति को पहचानकर अपने पथ का दीपक स्वयं बनने की प्रेरणा देता है।
- ◆ "भारत का सामाजिक व्यक्तित्व" जवाहरलाल नेहरू द्वारा रचित एक प्रस्तावना है, जिसमें उन्होंने भारत की विविधता, सामाजिक संरचना, सभ्यता की निरंतरता और सांस्कृतिक मूल्यों की बात करते हुए भारत के सामाजिक व्यक्तित्व को रूपायित किया है।
- ◆ "पत्र मैसूर के महाराजा को" स्वामी विवेकानंद द्वारा लिखा गया एक ऐतिहासिक पत्र है, जिसमें उन्होंने भारतीय संस्कृति, वेदांत, और राष्ट्र के योग्यता संवर्धन

नोट

गौरवशाली अतीत की चर्चा करते हुए भारतीय स्वराज्य और सांस्कृतिक आत्मनिर्भरता की बात कही है।

इन तीनों रचनाओं में स्पष्ट रूप से भारत के नैतिक, वैचारिक और सांस्कृतिक आधार का प्रतिबिंब दिखाई देता है।

7.2 उद्देश्य

1. राष्ट्र निर्माण में महापुरुषों की विचारधारा को समझना।
2. वक्तव्य, प्रस्तावना और पत्र लेखन की साहित्यिक विधाओं की पहचान करना।
3. भारतीय संस्कृति और समाज के मूलभूत विचारों से परिचित होना।
4. युवाओं में स्वतंत्र चिंतन और आत्मनिर्भरता का विकास करना।
5. अभिव्यक्ति के शक्ति-रूपों को पहचानना और प्रभावशाली संवाद को समझना।

7.3 अप्प दीपो भव (वक्तव्य) – स्वामी श्रद्धानंद

अप्प दीपो भव:

(गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह

सन् 1914 ई. में स्वामी श्रद्धानंद का भाषण)

पुत्रों! आज मैं तुम्हें उन बंधनों से मुक्त करता हूँ जिनके अनुसार गुरुकुल में चलना तुम्हारे लिए आवश्यक था। पर यह न समझना कि अब तुम्हारे लिए कोई बंधन नहीं है। प्राचीन काल से हमारे ऋषियों ने कुछ बंधन बाँध रखे हैं, उन्हें मैं आज तुम्हें सुनाना चाहता हूँ। इन बंधनों के पालन करने में किसी का तुम पर दबाव नहीं, इसलिए ये बंधन और भी कड़े हैं। ये बंधन उन उपनिषद् वाक्यों में वर्णित हैं जिन्हें आज से हजारों वर्ष पहले इस पवित्र भूमि में प्रत्येक आचार्य अपने स्नातकों को विद्या समाप्ति के समय सुनाया करता था। उन्हीं पुराने आचार्यों का प्रतिनिधि होकर मैं तुम्हें वे वाक्य सुनाता हूँ।

पुत्रों! परमात्मा सत्य स्वरूप है। उसका प्यारा बनने के लिए अपने जीवन को सत्यस्वरूप बनाओ। तुम्हारे मन में, तुम्हारी वाणी में और तुम्हारी क्रिया में सत्य हो। धर्म-मर्यादा का उल्लंघन मत करो। इस मर्यादा का साक्षी अंतःकरण ही है, बाहर से कोई धर्म बतलाने वाला नहीं है। जो हृदय परमात्मा का आसन है, वही तुम्हें धर्म बतला देगा। अपने आत्मा की वाणी को सुनो और उसके अनुसार चलो। स्वाध्याय से कभी मुख न मोड़ो। वह तुम्हें प्रमाद से बचाएगा। जिस आचार्य ने तुम्हारी इतने दिनों तक रक्षा की, उसके प्रति तुम्हारा जो कर्तव्य है, उसे अपने हृदय से पूछो। यह कुल तुम्हारा आचार्य है। मैं नहीं जानता कि तुम इसे क्या दक्षिणा देना चाहते हो। मैं तुमसे केवल एक ही दक्षिणा माँगता हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारे से ऐसा कोई काम न हो जिससे तुम्हें अपनी आत्मा और परमात्मा के सामने

लज्जित होना पड़े। तुममें से अब कई गृहस्थ जीवन में प्रवेश करेंगे। उनसे मैं कहता हूँ कि पाँचों यज्ञों के करने में कभी प्रमाद न करना। माता-पिता, आचार्य और अतिथि, ये तुम्हारे देवता हैं इनकी सदा शुश्रूषा करना धर्म समझो। पुराने ऋषि बड़े उदार और निराभिमान थे। वे कभी पूर्ण या दोष रहित होने का दावा नहीं करते थे। उन्हीं का प्रतिनिधि होकर मैं तुम्हें कहता हूँ कि हमारे अच्छे गुणों का अनुकरण करो और दोषों को छोड़ दो। इस संसार की अँधियारी में किसी को अपना ज्योति स्तम्भ बनाओ। पढ़ा-पढ़ाया कुछ अंश तक पथ प्रदर्शक होता है। पर सच्चे पथ प्रदर्शक वे ही महापुरुष होते हैं जो अपना नाम संसार में छोड़ जाते हैं। वे जीवन समुद्र में ज्योति स्तंभ का काम देते हैं। ऐसे आत्मत्यागी-सत्यवादी और पक्षपात रहित महापुरुषों के चाहे वे जीवित हों या ऐतिहासिक, पीछे चलो। लेना तो सभी संसार जानता है, तुम इस योग्य हुए हो कि अपनी बुद्धि और विद्या में से कुछ दे सको। जो तुम्हारे पास है, उसे उदारता से फैलाओ। हाथ खुला रखो, मुट्ठी को बंद न होने दो। जो सरोवर भरता है वह फैलता है, यह स्वाभाविक नियम है। जिस भूमि की मिट्टी से तुम्हारी देह बनी है। जिसकी गंगा का तुमने निर्मल जल पिया है, और जिसके गौरव के सामने संसार का कोई देश ठहर नहीं सकता, उस पवित्र भारत-भूमि में रहते हुए तुम उसके यश को उज्ज्वल करोगे, यह मुझे पूरी आशा है। इसके साथ ही जिस सरस्वती की कोख से तुमने दूसरा जन्म लिया है, उसे मत भूलना। किसी भी काम को करते हुए सावित्री माता की उपासना से विमुख न होना। यह मैंने संक्षेप में उन वाक्यों का सारांश सुना दिया है, जो कि सहस्रों वर्षों से इस पवित्र भूमि में गूँजते रहे हैं। इन्हें गुरु-मंत्र समझो और अपना पथ-दर्शक बनाओ। इसके अतिरिक्त मेरा भी तुम्हारे साथ कई वर्षों का संबंध रहा है। मैं तुमसे गुरु-दक्षिणा नहीं माँगता। गुरु-दक्षिणा देना तुम्हारा धर्म है, माँगना मेरा धर्म नहीं। मैं तुमसे यह भी नहीं पूछता कि तुम्हारे राजनैतिक, सामाजिक या मानसिक विचार क्या-क्या हैं? मैं केवल तुमसे यह पूछता हूँ कि क्या तुम्हारे सब काम सत्य पर आश्रित हैं या नहीं। स्मरण रखो, यह संसार सत्य पर आश्रित है। सत्य के बिना राजनीति धिक्कारने योग्य है, सत्य के बिना समाज के नियम पददलित करने योग्य हैं। यदि सत्य तुम्हारे जीवन का अवलंबन है तो मुझे न कोई चिंता है और न कुछ माँगना है।

व्याख्या-

स्वामी श्रद्धानंद अपने भाषण की शुरुआत करते हैं उन विद्यार्थियों को संबोधित करके जो गुरुकुल की शिक्षा पूरी कर चुके हैं। वे कहते हैं कि अब तुम गुरुकुल के नियमों से मुक्त हो गए हो, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि तुम पूरी तरह बंधनों से आज़ाद हो गए हो। अब तुम्हें भीतर से, आत्मा की प्रेरणा से स्वयं अपने जीवन के नियम तय करने हैं। यही सच्चा अनुशासन है।

सत्य की महत्ता- स्वामी जी कहते हैं कि परमात्मा स्वयं सत्य है, और यदि तुम ईश्वर के प्रिय बनना चाहते हो तो अपने विचारों, वाणी और कर्मों में भी सत्य को उतारो।

"तुम्हारे मन में, वाणी में और क्रिया में सत्य हो।"

योग्यता संवर्धन

नोट

धर्म की मर्यादा का उल्लंघन मत करो - लेकिन धर्म को कोई बाहर से नहीं बताता, तुम्हारा अंतःकरण ही उसका सबसे बड़ा साक्षी और मार्गदर्शक है।

स्वाध्याय का महत्व- स्वामी जी छात्रों को चेतावनी देते हैं कि शिक्षा समाप्त होने के बाद भी स्वाध्याय (आत्म-अध्ययन) को कभी न छोड़ो। यह तुम्हें भ्रम, प्रमाद और पतन से बचाएगा।

गुरु के प्रति कर्तव्य- उन्होंने गुरुकुल, आचार्य और शिक्षा की महत्ता बताते हुए कहा कि गुरु-दक्षिणा मांगना गुरु का धर्म नहीं है, परंतु यह शिष्य का धर्म है कि वह ऐसा जीवन जिए जिससे गुरु और ईश्वर के सामने कभी लज्जित न हो।

गृहस्थ जीवन के लिए संदेश- जिन छात्रों का विवाह होगा, उन्हें याद दिलाया गया कि वे पाँच महायज्ञों (पितृ, देव, ऋषि, अतिथि और प्राणी यज्ञ) का पालन करें। माता-पिता, आचार्य और अतिथि को देवता समझें और उनकी सेवा करें।

प्रेरणा स्तंभ बनो- स्वामी जी ने कहा कि पढ़ी-लिखी बातें सीमित मार्गदर्शन दे सकती हैं, लेकिन महापुरुषों का जीवन ही सच्चा दीपस्तंभ होता है। उन्हीं की तरह आत्म-त्यागी, सत्यनिष्ठ, निष्पक्ष बनो।

"अप्प दीपो भवः" – स्वयं अपना दीपक बनो।

ज्ञान को फैलाओ- उन्होंने कहा कि केवल लेना ही नहीं, देना भी सीखो। जो विद्या मिली है, उसे समाज में फैलाओ, जैसे जल से भरा हुआ सरोवर फैलता है। उदार बनो, कृपण नहीं।

भारत माता और संस्कृति का आदर- स्वामी जी ने देशभक्ति की भावना को भी उजागर किया — जिस भारत भूमि, गंगा और संस्कृति ने तुम्हें यह जीवन दिया है, उसका मान बढ़ाना ही तुम्हारा कर्तव्य है। सरस्वती माता (विद्या) को भी कभी मत भूलना।

अंतिम संदेश- स्वामी जी कहते हैं कि उन्हें शिष्यों के सामाजिक या राजनीतिक विचारों से कोई मतलब नहीं, उन्हें केवल यह जानना है कि —

"क्या तुम्हारा जीवन सत्य पर आधारित है?"

क्योंकि बिना सत्य के राजनीति, समाज और ज्ञान — सब व्यर्थ हैं।

स्वामी श्रद्धानंद का यह भाषण एक संस्कारी, चरित्रवान, आत्मनिर्भर और राष्ट्रभक्त जीवन की संपूर्ण रूपरेखा प्रस्तुत करता है। यह भाषण आज भी उतना ही प्रासंगिक और प्रेरणादायक है जितना उस समय था।

7.4 भारत का सामाजिक व्यक्तित्व (प्रस्तावना) – जवाहरलाल नेहरू

नोट

मूल पाठ - भारत का सामाजिक व्यक्तित्व (प्रस्तावना)

सन्दर्भ - 'संस्कृति के चार अध्याय', लेखक, रामधारी सिंह 'दिनकर', पृष्ठ संख्या 11-16 से उद्धृत

मेरे मित्र और साथी दिनकर ने अपनी पुस्तक के लिए जो विषय चुना है, वह बहुत ही मोहक और दिलचस्प है। यह ऐसा विषय है, जिससे, अक्सर, मेरा अपना मन भी ओत-प्रोत रहा है और मैंने जो कुछ लिखा है, उस पर इस विषय की छाप, आप-से-आप, पड़ गयी है। अक्सर मैं अपने आप से सवाल करता हूँ, भारत है क्या ? उसका तत्त्व या सार क्या है? वे शक्तियाँ कौन-सी हैं, जिनसे भारत का निर्माण हुआ है तथा अतीत और वर्तमान विश्व को प्रभावित करनेवाली प्रमुख प्रवृत्तियों के साथ उनका क्या सम्बन्ध है?

यह विषय अत्यन्त विशाल है, और उसके दायरे में भारत से बाहर के तमाम मानवीय व्यापार आ जाते हैं। और मेरा ख्याल है कि किसी भी व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह इस सम्पूर्ण विषय के साथ अकेला ही न्याय कर सके। फिर भी, इसके कुछ खास पहलुओं को लेकर उन्हें समझने की कोशिश की जा सकती है। कम-से-कम, यह तो सम्भव है ही कि हम अपने भारत को समझने का प्रयास करें, यद्यपि, सारे संसार को अपने सामने न रखने पर भारत-विषयक जो ज्ञान हम प्राप्त करेंगे, वह अधूरा होगा। संस्कृति है क्या? शब्दकोश उलटने पर इसकी अनेक परिभाषाएँ मिलती हैं।

एक बड़े लेखक का कहना है कि "संसार भर में जो भी सर्वोत्तम बातें जानी या कही गयी हैं, उनसे अपने आप को परिचित करना संस्कृति है।" एक दूसरी परिभाषा में यह कहा गया है कि "संस्कृति शारीरिक या मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण, दृढीकरण या विकास अथवा उससे उत्पन्न अवस्था है।" यह "मन, आचार अथवा रुचियों की परिष्कृति या शुद्धि" है। यह "सभ्यता का भीतर से प्रकाशित हो उठना है।" इस अर्थ में, संस्कृति कुछ ऐसी चीज का नाम हो जाता है, जो बुनियादी और अन्तर्राष्ट्रीय है। फिर, संस्कृति के कुछ राष्ट्रीय पहलू भी होते हैं। और इसमें कोई सन्देह नहीं कि अनेक राष्ट्रों ने अपना कुछ विशिष्ट व्यक्तित्व तथा अपने भीतर कुछ खास ढंग के मौलिक गुण विकसित कर लिये हैं। इस नक़्शे में भारत का स्थान कहाँ पर है? कुछ लोगों ने हिन्दू-संस्कृति, मुस्लिम-संस्कृति और ईसाई संस्कृति की चर्चा की है। ये नाम मेरी समझ में नहीं आते, यद्यपि यह सच है कि जातियों और राष्ट्रों की संस्कृतियों पर बड़-बड़े धार्मिक आन्दोलनों का असर पड़ा है।

भारत की ओर देखने पर मुझे लगता है, जैसा कि दिनकर ने भी जोर देकर दिखलाया है, कि भारतीय जनता की संस्कृति का रूप सामासिक है और उसका विकास धीरे-धीरे हुआ है। एक ओर तो इस संस्कृति का मूल आर्यों से पूर्व,

योग्यता संवर्धन

नोट

मोहनजोदरो आदि की सभ्यता तथा द्रविड़ों की महान् सभ्यता तक पहुँचता है। दूसरी ओर, इस संस्कृति पर आर्यों को बहुत ही गहरी छाप है, जो भारत में मध्य एशिया से आये थे। पीछे चलकर, यह संस्कृति उत्तर-पश्चिम से आने वाले तथा फिर समुद्र को राह से पश्चिम से आने वाले लोगों से बार-बार प्रभावित हुई। इस प्रकार, हमारी राष्ट्रीय संस्कृति ने, धीरे-धीरे, बढ़कर अपना आकार ग्रहण किया। इस संस्कृति में समन्वयन तथा नये उपकरणों को पचा कर आत्मसात् करने की अद्भुत योग्यता थी। जब तक इसका यह गुण शेष रहा, यह संस्कृति जीवित और गतिशील रही। लेकिन, बाद को आकर इसकी गतिशीलता जाती रही, जिससे यह संस्कृति जड़ हो गयी और उसके सारे पहलू कमजोर पड़ गये।

भारत के समग्र इतिहास में हम दो परस्पर-विरोधी और प्रतिद्वन्द्वी शक्तियों को काम करते देखते हैं। एक तो वह शक्ति है जो बाहरी उपकरणों को पचाकर समन्वय और सामंजस्य पैदा करने की कोशिश करती है, और दूसरी वह जो विभाजन को प्रोत्साहन देती है; जो एक बात को दूसरी से अलग करने की प्रवृत्ति को बढ़ाती है। इसी समस्या का, एक भिन्न प्रसंग में, हम आज भी मुकाबला कर रहे हैं। आज भी कितनी ही बलिष्ठ शक्तियाँ हैं, जो केवल राजनैतिक ही नहीं, सांस्कृतिक एकता के लिए भी प्रयास कर रही हैं। लेकिन, ऐसी ताकतें भी हैं, जो जोवन में विच्छेद डालती हैं, जो मनुष्य-मनुष्य के बीच भेद-भाव को बढ़ावा देती हैं। अतएव, आज हमारे सामने जो प्रश्न है, वह केवल सैद्धान्तिक नहीं है, उसका सम्बन्ध हमारे जीवन की सारी प्रक्रिया से है और उसके समुचित निदान और समाधान पर ही हमारा भविष्य निर्भर करता है।

साधारणतः ऐसी समस्याओं को सुलझाने में नेतृत्व देने का काम मनीषी करते हैं। किन्तु, वे हमारे काम नहीं आये। उनमें से कुछ तो ऐसे हैं, जो इस समस्या के स्वरूप को ही नहीं समझते। बाकी लोग हार मान बैठे हैं। वे विफलता-बोध से पीड़ित तथा आत्मा के संकट से ग्रस्त हैं और वे जानते ही नहीं कि जिन्दगी को किस दिशा की ओर मोड़ना ठीक होगा। बहुत-से मनीषी मार्क्सवाद और उसकी शाखाओं की ओर आकृष्ट हुए और इसमें कोई सन्देह नहीं कि मार्क्सवाद ने ऐतिहासिक विकास का विश्लेषण उपस्थित करके समस्याओं पर सोचने और उन्हें समझने के काम में हमारी सहायता की। लेकिन, आखिर को, वह भी संकीर्ण मतवाद बन गया और जीवन की आर्थिक पद्धति के रूप में उसका चाहे जो भी महत्त्व हो, हमारी बुनियादी शंकाओं का समाधान निकालने में वह भी नाकामयाब है। यह मानना तो ठीक है कि आर्थिक उन्नति जीवन और प्रगति का बुनियादी आधार है, लेकिन जिन्दगी वहीं तक खत्म नहीं होती। वह आर्थिक विकास से कहीं ऊँची चीज है।

इतिहास के अन्दर हम दो सिद्धान्तों को काम करते देखते हैं। एक तो सातत्य का सिद्धान्त है और दूसरा परिवर्तन का। ये दोनों सिद्धान्त परस्पर-विरोधी-से लगते हैं, परन्तु, ये विरोधी हैं नहीं। सातत्य के भीतर भी परिवर्तन का अंश है। इसी

प्रकार परिवर्तन भी अपने भीतर सातत्य का कुछ अंश लिये रहता है। असल में, हमारा ध्यान उन्हीं परिवर्तनों पर जाता है, जो हिंसक कान्तियों या भूकम्प के रूप में अचानक फट पड़ते हैं। फिर भी, प्रत्येक भूगर्भ-शास्त्री यह जानता है कि धरती की सतह में जो बड़े-बड़े परिवर्तन होते हैं, उनकी चाल बहुत धीमी होती है और भूकम्प से होने वाले परिवर्तन उनकी तुलना में अत्यन्त तुच्छ समझे जाते हैं। इसी तरह, क्रान्तियाँ भी धीरे-धीरे होनेवाले परिवर्तन और सूक्ष्म रूपान्तरण की बहुत लम्बी प्रक्रिया का बाहरी प्रमाण मात्र होती हैं। इस दृष्टि से देखने पर, स्वयं परिवर्तन एक ऐसी प्रक्रिया है, जो परम्परा के आवरण में लगातार चलती रहती है। बाहर से अचल दीखने वाली परम्परा भी, यदि जड़ता और मृत्यु का पूरा शिकार नहीं बन गयी है, तो धीरे-धीरे वह भी परिवर्तित हो जाती है।

इतिहास में कभी-कभी ऐसा भी समय आता है जब परिवर्तन की प्रक्रिया और उसकी तेजी कुछ अधिक प्रत्यक्ष हो जाती है। लेकिन, साधारणतः, बाहर से उसकी गति दिखायी नहीं देती। परिवर्तन का बाहरी रूप, प्रायः, निस्पन्द ही दीखता है। जातियाँ जब अगति की अवस्था में रहती हैं, तब उनकी शक्ति दिनोंदिन छीजती जाती है, उनकी कमजोरियाँ बढ़ती जाती हैं। परिणाम यह होता है कि उनकी रचनात्मक कलाओं और प्रवृत्तियों का क्षय हो जाता है। तथा, अक्सर, वे राजनैतिक दृष्टि से गुलाम भी हो जाती हैं। सम्भावना यह है कि भारत में संस्कृति के सबसे प्रबल उपकरण आर्यों और आर्यों से पहले के भारतवासियों, खास कर, द्रविड़ों के मिलन से उत्पन्न हुए। इस मिलन, मिश्रण या समन्वय से एक बहुत बड़ी संस्कृति उत्पन्न हुई, जिसका प्रतिनिधित्व हमारी प्राचीन भाषा संस्कृत करती है। संस्कृत और प्राचीन पहलवी, ये दोनों भाषाएँ एक ही माँ से मध्य एशिया में जनमी थीं, किन्तु, भारत में आकर संस्कृत ही यहाँ की राष्ट्रभाषा हो गयी। यहाँ संस्कृत के विकास में उत्तर और दक्षिण, दोनों ने योगदान दिया। सच तो यह है कि आगे चलकर संस्कृत के उत्थान में दक्षिणवालों का अंशदान अत्यन्त प्रमुख रहा।

संस्कृत हमारी जनता के विचार और धर्म का ही प्रतीक नहीं बनी, वरन्, भारत की सांस्कृतिक एकता भी उसी भाषा में साकार हुई। बुद्ध के समय से लेकर अब तक संस्कृत यहाँ की जनता की बोली जाने वाली भाषा कभी नहीं रही है, फिर भी, सारे भारतवर्ष पर वह अपना प्रचुर प्रभाव डालती ही आयी है। कुछ दूसरे प्रभाव भी भारत पहुँचे और उनसे भी विचारों और अभिव्यक्तियों को नयी विशाएँ प्राप्त हुई। काफी लम्बे इतिहास के अन्दर, भूगोल ने भारत को जो रूप दिया, उससे वह एक ऐसा देश बन गया, जिसके दरवाजे बाहर की ओर से बन्द थे। समुद्र और महाशैल हिमालय से घिरा होने के कारण, बाहर से किसी का इस देश में आना आसान नहीं था।

कई सहस्राब्दियों के भीतर, बाहर से लोगों के बड़े-बड़े झुण्ड भारत में आये, किन्तु, आर्यों के आगमन के बाद से कभी भी ऐसा नहीं हुआ, जब बाहरी लोग बहुत बड़ी संख्या में भारत आये हों। ठीक इसके विपरीत, एशिया और यूरोप के आर-पार मनुष्यों के अपार आगमन और निष्क्रमण होते रहे, एक जाति दूसरी

नोट

जाति को खदेड़ कर वहाँ खुद बसती रही और, इस प्रकार, जनसंख्या की बुनावट में बहुत बड़ा परिवर्तन होता रहा। भारत में, आर्यों के आगमन के बाद, बाहरी लोगों के जो आगमन हुए, उनके दायरे बहुत ही सीमित थे। उनका कुछ-न-कुछ प्रभाव तो पड़ा, किन्तु उससे यहाँ की बुनियादी जनसंख्या के स्वरूप में कोई बड़ा परिवर्तन नहीं आया। लेकिन, फिर भी, याद रखना चाहिये कि ऐसे कुछ परिवर्तन भारत में भी हुए हैं।

सीथियन और हूण लोग तथा उनके बाद भारत आनेवाली कुछ अन्य जातियों के लोग यहाँ आकर राजपूतों की शाखाओं में शामिल हो गये और यह दावा करने लगे कि हम भी प्राचीन भारतवासियों की सन्तान हैं। बहुत दिनों तक बाहरी दुनिया से अलग रहने के कारण, भारत का स्वभाव भी और देशों से भिन्न हो गया। हम ऐसी जाति बन गये, जो अपने आप में घिरी रहती है। हमारे भीतर कुछ ऐसे रिवाजों का चलन हो गया, जिन्हें बाहर के लोग न तो जानते हैं, न समझ ही पाते हैं। जाति-प्रथा के असंख्य रूप भारत के इसी विचित्र स्वभाव के उदाहरण हैं। किसी भी दूसरे देश के लोग यह नहीं जानते कि छुआछूत क्या चीज है तथा दूसरों के साथ खाने-पीने या विवाह करने में, जाति को लेकर, किसी को क्या उज्र होना चाहिये।

इन सब बातों को लेकर हमारी दृष्टि संकुचित हो गयी। आज भी भारतवासियों को दूसरे लोगों से खुल कर मिलने में कठिनाई महसूस होती है। यही नहीं, जब भारतवासी भारत से बाहर जाते हैं, तब वहाँ भी एक जाति के लोग दूसरी जाति के लोगों से अलग रहना चाहते हैं। हममें से बहुत लोग इन सारी बातों को स्वयंसिद्ध मानते हैं और हम यह समझ ही नहीं पाते कि इन बातों से दूसरे देशवालों को कितना आश्चर्य होता है, उनकी भावना को कैसी ठेस पहुँचती है। भारत में दोनों बातें एक साथ बढ़ीं। एक ओर तो विचारों और सिद्धान्तों में हमने अधिक-से-अधिक उदार और सहिष्णु होने का दावा किया। दूसरी ओर, हमारे सामाजिक आचार अत्यन्त संकीर्ण होते गये। यह फटा हुआ व्यक्तित्व, सिद्धान्त और आचरण का यह विरोध, आज तक हमारे साथ है और आज भी हम उसके विरुद्ध संघर्ष कर रहे हैं। कितनी विचित्र बात है कि अपनी दृष्टि की संकीर्णता, आदतों और रिवाजों की कमजोरियों को हम यह कह कर नजर-अन्दाज कर देना चाहते हैं कि हमारे पूर्वज बड़े लोग थे और उनके बड़े-बड़े विचार हमें विरासत में मिले हैं। लेकिन, पूर्वजों से मिले हुए ज्ञान एवं हमारे आचरण में भारी विरोध है और जब तक हम इस विरोध की स्थिति को दूर नहीं करते, हमारा व्यक्तित्व फटा का फटा रह जायगा।

जिन दिनों जीवन अपेक्षाकृत अधिक गतिहीन था, उन दिनों सिद्धान्त और आचरण का यह विरोध उतना उग्र नहीं दिखायी देता था। लेकिन, ज्यों-ज्यों राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तनों की रफ्तार तेज होती गयी, इस विरोध की उग्रता भी अधिक-से-अधिक प्रत्यक्ष होती आयी है। आज तो हम आणविक युग के दरवाजे पर खड़े हैं। इस युग की परिस्थितियाँ इतनी प्रबल हैं कि हमें अपने इस आन्तरिक विरोध

का शमन करना ही पड़ेगा। और इस काम में हम कहीं असफल हो गये तो यह असफलता सारे राष्ट्र की पराजय होगी और हम उन अच्छाइयों को भी खो बैठेंगे, जिन पर हम आज तक अभिमान करते आये हैं। जैसे हम बड़ी-बड़ी राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं का मुकाबला कर रहे हैं, वैसे ही, हमें भारत के इस आध्यात्मिक संकट का भी सामना करना चाहिये। भारत में औद्योगिक क्रान्ति बड़ी तेजी से आ रही है और हम नाना रूपों में बदलते जा रहे हैं। राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तनों का यह अनिवार्य परिणाम है कि उनसे सामाजिक परिवर्तन उत्पन्न होते हैं; अन्यथा समन्वय न तो हमारे वैयक्तिक जीवन में रह सकता है, न राष्ट्रीय जीवन में। ऐसा नहीं हो सकता कि राजनैतिक परिवर्तन और औद्योगिक प्रगति तो हो, किन्तु, हम यह मान कर बैठे रह जायें कि सामाजिक क्षेत्र में हमें कोई परिवर्तन लाने की आवश्यकता नहीं है।

राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तनों के अनुसार समाज को परिवर्तित नहीं करने से हम पर जो बोझ पड़ेगा, उसे हम बर्दाश्त नहीं कर पायेंगे, उसके नीचे हम टूट जायेंगे। ईसा के जन्म के बाद पहली सहस्राब्दी और उससे पहले के भारत की जो तस्वीर हमारे सामने आती है, वह उस तस्वीर से भिन्न है, जो बाद को मिलती है। उन दिनों के भारतवासी बड़े मस्त, बड़े जीवन्त, बड़े साहसी और जीवन के प्रति अद्भुत उत्साह से युक्त थे तथा अपना सन्देश वे विदेशों में दूर-दूर तक ले जाते थे। विचारों के क्षेत्र में तो उन्होंने ऊँची-से-ऊँची चोटियों पर अपने कदम रखे और आकाश को चीर डाला। उन्होंने अत्यन्त गौरवमयी भाषा की रचना की और कला के खेल में उन्होंने अत्यन्त उच्चकोटि की कारयित्री प्रतिभा का परिचय दिया। उन दिनों का भारतीय जीवन घेरों में बन्द नहीं था, न तत्कालीन समाज में ही जड़ता या गतिहीनता की कोई बात थी।

उस समय एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक, समग्र भारतवर्ष में सांस्कृतिक उत्साह भी लहरें ले रहा था। इसी समय, दक्षिण भारतवर्ष के लोग दक्षिण-पूर्व एशिया की ओर गये और वहाँ उन्होंने अपना उपनिवेश स्थापित किया। दक्षिण से ही बौद्ध मत का सन्देश लेकर बोधि-धर्म चीन पहुँचा। इस साहसिक जीवन की अभिव्यक्ति में उत्तर और दक्षिण, दोनों एक थे और वे परस्पर एक दूसरे का पोषण भी करते थे। इसके बाद, पिछली शताब्दियों का समय आता है, जब पतन की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। भाषा में कृत्रिमता और स्थापत्य में सजावट की भरमार इसी पतनशीलता के प्रमाण हैं।

यहाँ आकर हमारे विचार पुराने विचारों की आवृत्ति बन जाते हैं और कारयित्री शक्ति दिनोंदिन क्षीण होने लगती है। शरीर और मन दोनों की साहसिकता से हम भय खाने लगते हैं तथा जाति-प्रथा का और भी विकास होता है एवं समाज के दरवाजे चारों ओर से बन्द हो जाते हैं। पहले की तरह बातें तो हम अब भी ऊँची-ऊँची करते हैं, लेकिन, हमारा आचरण हमारे विश्वास से भिन्न हो जाता है। हमारे आचरण की तुलना में हमारे विचार और उद्गार इतने ऊँचे हैं कि उन्हें देख

नोट

कर आश्चर्य होता है। बातें तो हम शान्ति और अहिंसा की करते हैं, मगर, काम हमारे कुछ और होते हैं। सिद्धान्त तो हम सहिष्णुता का बधारेते हैं, लेकिन भाव हमारा यह होता है कि सब लोग वैसे ही सोचें, जैसे हम सोचते हैं, और जब भी कोई हम से भिन्न प्रकार से सोचता है, तब हम उसे बर्दाश्त नहीं कर सकते। घोषणा तो हमारी यह है कि स्थितप्रज्ञ बनना अर्थात् कर्मों के प्रति अनासक्त रहना हमारा आदर्श है, लेकिन काम हमारे बहुत नीचे के धरातल पर चलते हैं और बढ़ती हुई अनुशासनहीनता हमें वैयक्तिक और सामाजिक, दोनों ही क्षेत्रों में नीचे ले जाती है। जब पश्चिम के लोग समुद्र के पार से यहाँ आये, तब भारत के दरवाजे एक खास दिशा की ओर खुल गये। आधुनिक औद्योगिक सभ्यता बिना किसी शोर-गुल के, धीरे-धीरे, इस देश में प्रविष्ट हो गयी।

नये भावों और नये विचारों ने हम पर हमला किया और हमारे बुद्धिजीवी अँगरेज-बुद्धिजीवियों की तरह सोचने का अभ्यास करने लगे। यह मानसिक आन्दोलन, बाहर की ओर वातायान खोलने का यह भाव, अपने ढंग पर अच्छा रहा, क्योंकि इससे हम आधुनिक जगत् को थोड़ा-बहुत समझने लगे। मगर, इससे एक दोष भी निकला कि हमारे ये बुद्धिजीवी जनता से विच्छिन्न हो गये, क्योंकि जनता विचारों की इस नयी लहर से अप्रभावित थी। परम्परा से भारत में चिन्तन की जो पद्धति चली आ रही थी, वह टूट गयी। फिर भी, कुछ लोग उससे इस ढंग से चिपके रहे, जिसमें न तो प्रगति थी, न रचना की नयी उद्भावना और जो पूर्ण रूप से नयी परिस्थितियों से असम्बद्ध थी। पाश्चात्य विचारों में भारत का जो विश्वास जगा था, अब तो वह भी हिल रहा है। नतीजा यह है कि हमारे पास न तो पुराने आदर्श हैं, न नवीन और हम बिना यह जाने हुए बहते जा रहे हैं कि हम किधर को या कहाँ जा रहे हैं।

नयी पीढ़ी के पास न तो कोई मानदण्ड है, न कोई दूसरी ऐसी चीज, जिससे वह अपने चिन्तन या कर्म को नियन्त्रित कर सके। यह खतरे की स्थिति है। अगर इसका अवरोध और सुधार नहीं हुआ तो इससे भयानक परिणाम निकल सकते हैं। हम आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्रों में संक्रान्ति की अवस्था से गुजर रहे हैं। सम्भव है, यह उसी स्थिति का अनिवार्य परिणाम हो। लेकिन, आणविक युग में किसी देश को अपना सुधार करने के लिए ज्यादा मौके नहीं दिये जायेंगे। और इस युग में मौका चूकने का अर्थ सर्वनाश भी हो सकता है। यह सम्भव है कि संसार में जो बड़ी-बड़ी ताकतें काम कर रही हैं, उन्हें हम पूरी तरह न समझ सकें, लेकिन, इतना तो हमें समझना ही चाहिये कि भारत क्या है और कैसे इस राष्ट्र ने अपने सामाजिक व्यक्तित्व का विकास किया है; उसके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलू कौन-से हैं और उसकी सुदृढ़ एकता कहाँ छिपी हुई है।

भारत में बसने वाली कोई भी जाति यह दावा नहीं कर सकती कि भारत के समस्त मन और विचारों पर उसी का एकाधिकार है। भारत आज जो कुछ है, उसकी रचना में भारतीय जनता के प्रत्येक भाग का योगदान है। यदि हम इस

बुनियादी बात को नहीं समझ पाते तो फिर हम भारत को भी समझने में असमर्थ रहेंगे। और यदि भारत को हम नहीं समझ सके तो हमारे भाव, विचार और काम, सब-के-सब अधूरे रह जाएँगे और हम देश की ऐसी कोई सेवा नहीं कर सकेंगे, जो ठोस और प्रभावपूर्ण हो। मेरा विचार है कि दिनकर की पुस्तक इन बातों के समझने में, एक हद तक, सहायक होगी। इसलिए, मैं इसकी सराहना करता हूँ और आशा करता हूँ कि इसे पढ़कर अनेक लोग लाभान्वित होंगे।

जवाहरलाल नेहरू

३० सितम्बर, १९५५

यह प्रस्तावना एक गहन चिंतन है कि भारत का सामाजिक और सांस्कृतिक व्यक्तित्व कैसे विकसित हुआ है। लेखक ने यह प्रश्न उठाया है कि भारत क्या है, उसका मूल तत्त्व क्या है, और किन शक्तियों ने उसे गढ़ा है।

मुख्य बिंदु-

संस्कृति की परिभाषा और उसका वैश्विक और राष्ट्रीय पक्ष- संस्कृति केवल ज्ञान या कलाओं का संग्रह नहीं, बल्कि एक जीवन पद्धति है जो मनुष्य के विचार, आचरण, और रुचियों को प्रभावित करती है। भारत की संस्कृति का स्वरूप सामासिक (संमिश्र) है, जो विभिन्न सभ्यताओं और जातियों के आपसी मेल से विकसित हुआ है।

भारतीय संस्कृति का विकास और समन्वयशीलता- भारतीय संस्कृति में समन्वय और आत्मसात करने की अद्भुत शक्ति रही है। आर्यों, द्रविड़ों, और बाद में आनेवाली जातियों (जैसे हूण, शक) से भारतीय समाज और संस्कृति ने बहुत कुछ ग्रहण किया और उसे आत्मसात किया।

समस्या की जड़ - विभाजनकारी प्रवृत्तियाँ और सामाजिक संकीर्णता- इतिहास में दो विपरीत शक्तियाँ रही हैं - एक जो एकता, समन्वय को बढ़ावा देती है और दूसरी जो विभाजन और संकीर्णता को। जातिवाद, छुआछूत, और सामाजिक भेदभाव ने संस्कृति की गतिशीलता को जड़ता में बदल दिया है।

विरोधाभास - विचारों में उदारता, व्यवहार में संकीर्णता- भारतीय समाज में उच्च आदर्शों (जैसे सहिष्णुता, शांति, आध्यात्मिकता) की बातें होती हैं, परंतु आचरण में संकीर्णता, असहिष्णुता और भेदभाव का बोलबाला है। यह व्यक्तित्व का "फटा हुआ" रूप है, जो आज भी संघर्ष कर रहा है।

राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन का दबाव- भारत में औद्योगिक क्रांति और आधुनिकता के कारण जो राजनैतिक और आर्थिक बदलाव आए हैं,

नोट

उनके अनुसार सामाजिक ढांचे को भी बदलना जरूरी है। अन्यथा समाज उस बोझ को नहीं झेल पाएगा और टूट जाएगा।

प्राचीन भारत की उन्नति और साहसिकता- लेखक ने प्राचीन भारत की जीवंतता, कलात्मकता और साहस का चित्र प्रस्तुत किया है, जब भारतीय जीवन गतिशील और खुले विचारों वाला था। लेकिन बाद में वह जड़ता और पतन की ओर बढ़ता गया।

पश्चिमी प्रभाव और बुद्धिजीवियों की स्थिति- अंग्रेजों के आगमन के बाद पश्चिमी विचारों ने भारतीय बुद्धिजीवियों को प्रभावित किया, लेकिन जनता उस विचारधारा से दूर रह गई। इससे विचारों और समाज के बीच एक खाई बन गई।

वर्तमान संकट – दिशाहीनता और मूल्यहीनता- आज की पीढ़ी के पास कोई स्पष्ट दिशा, मूल्य, या विचारधारा नहीं है। यह स्थिति भारत के लिए खतरे की घंटी है, खासकर जब दुनिया आणविक युग में प्रवेश कर चुकी है।

समाधान – आत्मबोध और आंतरिक संघर्ष का शमन- लेखक का मानना है कि हमें भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक व्यक्तित्व को गहराई से समझना होगा और उसमें समन्वय स्थापित करना होगा। यही हमारी प्रगति और अस्तित्व की कुंजी है।

भारत एक समन्वयशील संस्कृति का देश रहा है, जिसमें विविधता में एकता की भावना रही है। लेकिन यदि आज हम इस आंतरिक द्वंद्व और संकीर्ण दृष्टिकोण को नहीं छोड़ते, तो आधुनिक युग में हमारी संस्कृति और अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है। इस चुनौती का समाधान केवल विचारों से नहीं, बल्कि व्यवहार और सामाजिक ढांचे में बदलाव से ही संभव है।

7.5 पत्र मैसूर के महाराजा को (पत्र लेखन) – स्वामी विवेकानंद

मूल पाठ

स्वामी विवेकानंद के पत्र – मैसूर के महाराज को लिखित (23 जून, 1894)

शिकागो,

२३ जून, १८९४

महाराज,

श्री नारायण आपका और आपके कुटुम्ब का मंगल करें। आपकी उदार सहायता से ही मेरा इस देश में आना सम्भव हो सका। यहाँ आने के बाद से यहाँ के लोग मुझे खूब जान गये हैं और इस देश के अतिथिपरायण अधिवासियों ने मेरे सब अभाव दूर कर दिये हैं। यह एक अद्भुत देश है और यह जाति भी कई बातों में एक अद्भुत जाति है। कोई और जाति अपने दैनन्दिन जीवन में इतने कलपुर्जों का व्यवहार नहीं करती, जितने कि यहाँ के लोग। यहाँ सब कुछ ही मशीन है। फिर देखिए, ये लोग सारे संसार की जनसंख्या के

पाँच प्रतिशत मात्र हैं। फिर भी संसार के कुल सम्पद के पूरे षष्ठांश के ये मालिक हैं। इनके धन सम्पद तथा विलास की सामग्रियों का कोई ठिकाना नहीं है। फिर भी यहाँ सभी चीजें बहुत महँगी हैं। मजदूरों की मजदूरी यहाँ दुनिया में सब जगहों से ज्यादा है, पर मजदूरों और पूँजीपतियों के बीच झगड़ा सदा ही चलता रहता है।

अमेरिका की महिलाओं को जितने अधिकार प्राप्त हैं, उतने दुनिया भर में और कहीं की महिलाओं को नहीं। धीरे-धीरे वे सब कुछ अपने अधिकार में करती जा रही हैं, और आश्चर्य की बात तो यह है कि शिक्षित पुरुषों की अपेक्षा यहाँ शिक्षित स्त्रियों की संख्या कहीं अधिक है। हाँ, उच्चतर प्रतिभाओं में अधिकांश पुरुष ही हैं। पाश्चात्यवासी हमारे जाति-भेद की चाहे जितनी कड़ी समालोचना करें, पर उनके भी बीच एक ऐसा जाति भेद है, जो हमारे यहाँ से भी बुरा है – और वह है, अर्थगत जाति-भेद। अमेरिका निवासियों के अनुसार सर्वशक्तिमान डालर यहाँ सब कुछ कर सकता है।

संसार के अन्य किसी देश में इतने कानून नहीं हैं, जितने कि यहाँ। पर यहाँ उनकी जितनी कम परवाह की जाती है, उतनी अन्य किसी भी देश में नहीं। सब ओर से देखने पर हमारे गरीब हिन्दू लोग किसी भी पाश्चात्य देशवासी से लाखों गुने अधिक नैतिक हैं। धर्म के विषय में यहाँ के लोग या तो कपटी होते हैं या मतान्ध। विचारशील लोग अपने कुसंस्कारपूर्ण धर्मों से ऊब गये हैं और नये प्रकाश के लिए भारत की ओर देख रहे हैं। महाराज, आप स्वयं इस बात को बिना प्रत्यक्ष किये नहीं समझ पायेंगे कि आधुनिक विज्ञान के प्रचण्ड आक्रमणों के सम्मुख अप्रतिहत रहकर उसका प्रतिरोध करने वाले पवित्र वेदराशियों के उदार विचारसमूहों के किञ्चित्मात्र अंश को ये लोग किस आग्रह के साथ ग्रहण करते हैं। शून्य से सृष्टि का होना, आत्मा का एक सृष्ट पदार्थ होना, स्वर्ग नामक स्थान में सिंहासन पर बैठे हुए एक अत्याचारी ईश्वर तथा अनन्त नरकाग्नि का होना - ये सब जो इन लोगों के मत हैं, उनसे सभी शिक्षित लोगों का जी ऊब गया है और सृष्टि और आत्मा के अनादित्य तथा परमात्मा की हमारी अपनी आत्मा में अवस्थिति सम्बन्धी वेदों के उदात्त भावों को वे शीघ्र ही किसी न किसी रूप में ग्रहण कर रहे हैं। पचास वर्ष के भीतर ही संसार के सभी शिक्षित लोग आत्मा और सृष्टि, दोनों के अनादित्य पर विश्वास करने लगेंगे और ईश्वर को हमारा ही उच्चतम और सम्पूर्ण रूप मानने लगेंगे, जैसा कि हमारे पवित्र वेदों की शिक्षा है। अभी से ही उनके विद्वान् पादरियों ने बाइबिल की उस प्रकार की व्याख्या करनी आरम्भ कर दी है। मेरा निष्कर्ष यह है कि उन्हें और भी धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता है और हमें और भी अधिक ऐहिक एवं भौतिक शिक्षा की।

भारतवर्ष के सभी अनर्थों की जड़ है – गरीबों की दुर्दशा। पाश्चात्य देशों के गरीब तो निरे दानव हैं, उनकी तुलना में हमारे यहाँ के गरीब देवता हैं। इसीलिए हमारे गरीबों की उन्नति करना सहज है। अपने निम्न वर्ग के लोगों के प्रति हमारा एकमात्र कर्तव्य है – उनको शिक्षा देना, उनमें उनकी खोई हुई जातीय विशिष्टता का विकास करना। हमारे जनसाधारण और देशी राजाओं के सम्मुख यही एक बहुत बड़ा काम पड़ा हुआ है। अब तक इस दिशा में कुछ भी काम नहीं हुआ। पुरोहितों की शक्ति और विदेशी विजेतागण सदियों से उन्हें कुचलते रहे हैं, जिसके फलस्वरूप भारत के गरीब बेचारे भूल गये हैं कि

नोट

वे भी मनुष्य हैं। उनमें तरह-तरह के विचार पैदा करने होंगे। उनके चारों ओर दुनिया में कहाँ क्या हो रहा है, इस सम्बन्ध में उनकी आँखें खोल देनी होंगी; इसके बाद फिर वे अपना उद्धार अपने आप कर लेंगे। प्रत्येक जाति, प्रत्येक पुरुष और प्रत्येक स्त्री को अपना उद्धार अपने आप ही करना पड़ेगा। उनमें विचार उत्पन्न कर दो – उन्हें उसी एक सहायता की जरूरत है, इसके फलस्वरूप बाकी सब कुछ आप ही हो जायेगा। हमें केवल रासायनिक पदार्थों को इकट्ठा भर कर देना है, रवा बंध जाना तो प्राकृतिक नियमों से ही साधित होगा। हमारा कर्तव्य है, उनके दिमागों में विचार भर देना – बाकी वे स्वयं कर लेंगे। भारत में बस यही करना है। बहुत समय से यह विचार मेरे मन में काम कर रहा है। भारत में इसे मैं कार्य रूप में परिणत न कर सका, और यही कारण था कि मैं इस देश में आया। गरीबों को शिक्षा देने में मुख्य बाधा यह है – मान लीजिए महाराज, आपने हर एक गाँव में एक निःशुल्क पाठशाला खोल दी, तो भी इससे कुछ काम न होगा, क्योंकि भारत में गरीबी ऐसी है कि गरीब लड़के पाठशाला में आने के बजाय खेतों में अपने माता-पिता को मदद देने या किसी दूसरे उपाय से रोटी कमाने जायेंगे। इसलिए अगर पहाड़ मुहम्मद के पास न आये, तो मुहम्मद को ही पहाड़ के पास जाना पड़ेगा। अगर गरीब लड़का शिक्षा ग्रहण करने के लिए न आ सके, तो शिक्षा को ही उसके पास जाना पड़ेगा।

हमारे देश में हजारों एकनिष्ठ और त्यागी साधु हैं, जो गाँव-गाँव धर्म की शिक्षा देते फिरते हैं। यदि उनमें से कुछ लोगों को सांसारिक विषयों के शिक्षकों के रूप में भी संगठित किया जा सके तो गाँव-गाँव, दरवाजे-दरवाजे पर जाकर वे केवल धर्मशिक्षा ही नहीं देंगे, बल्कि ऐहिक शिक्षा भी दिया करेंगे। कल्पना कीजिए कि इनमें से दो व्यक्ति शाम को साथ में एक मैजिक लैन्टर्न, एक ग्लोब और कुछ नक्शे आदि लेकर किसी गाँव में जाते हैं। वे अपढ़ लोगों को गणित, ज्योतिष और भूगोल की बहुत कुछ शिक्षा दे सकते हैं। वे गरीब पुस्तकों से जीवन भर में जितनी जानकारी न पा सकेंगे, उससे सौगुनी अधिक वे उन्हें बातचीत के माध्यम से विभिन्न देशों के बारे में कहानियाँ सुनाकर दे सकते हैं। इसके लिए एक संगठन की आवश्यकता है, जो पुनः धन पर निर्भर करता है। इस योजना को कार्यरूप में परिणत करने के लिए भारत में मनुष्य तो बहुत हैं, पर हाय! वे निर्धन हैं। एक चक्र को चलाना बड़ा कठिन काम है, पर अगर एक बार वह गतिशील हुआ कि वह क्रमशः अधिकाधिक वेग से चलने लगता है। अपने देश में सहायता पाने का प्रयत्न करने के बाद जब मैंने धनिकों से कुछ भी सहानुभूति न पायी, तब मैं, महाराज, आपकी सहायता से इस देश में आ गया। अमेरिका-वासियों को इस बात की कुछ भी परवाह नहीं कि भारत के गरीब जियें या मरें। और भला वे परवाह भी क्यों करने लगे, जब कि हमारे अपने देशवासी सिवाय अपने स्वार्थ की बातों के और किसी की चिन्ता नहीं करते?

महामना राजन्, यह जीवन क्षणस्थायी है, संसार के भोग-विलास की सामग्रियाँ भी क्षणभंगुर हैं। वे ही यथार्थ में जीवित हैं, जो दूसरों के लिए जीवन धारण करते हैं बाकी लोगों का जीना तो मरने ही के बराबर है। महाराज, आप जैसे एक उन्नत, महामना राजपुत्र भारत को फिर से अपने पैरों पर खड़ा कर देने के लिए बहुत कुछ कर सकते हैं। और इस तरह भावी वंशजों के लिए एक ऐसा नाम छोड़ जा सकते हैं, जिसकी वे पूजा करें।

प्रभु आपके महान् हृदय में भारत के उन लाखों नर-नारियों के लिए गहरी संवेदना पैदा कर दें, जो अज्ञता में गड़े हुए दुःख झेल रहे हैं – यही मेरी प्रार्थना है।

भवदीय,
विवेकानन्द

व्याख्या-

यह पत्र स्वामी विवेकानन्द ने 23 जून 1894 को शिकागो से मैसूर के महाराज को लिखा था। इसमें वे अमेरिका की स्थिति, भारत की सामाजिक समस्याओं और अपनी शिक्षा संबंधी योजनाओं पर गहरी चिंता और आशा दोनों प्रकट करते हैं।
मुख्य बिंदु -

1. अमेरिका का अनुभव-

अमेरिका एक आश्चर्यजनक देश है जहाँ मशीनों का अत्यधिक प्रयोग होता है। ये लोग दुनिया की कुल जनसंख्या का केवल 5% हैं, फिर भी पूरी दुनिया की संपत्ति का छठा हिस्सा इनके पास है।

मजदूरों की मजदूरी यहाँ सबसे अधिक है, फिर भी श्रमिकों और पूंजीपतियों में संघर्ष चलता रहता है।

यहाँ महिलाओं को बहुत अधिकार प्राप्त हैं और शिक्षित स्त्रियों की संख्या पुरुषों से अधिक है।

2. पश्चिमी समाज की समस्याएँ -

पाश्चात्य समाज में धन के आधार पर एक गहरा सामाजिक भेदभाव है - "डॉलर ही सर्वशक्तिमान है।"

धर्म के क्षेत्र में लोग या तो कपटी हैं या कट्टर।

शिक्षित लोग अपने पुराने धर्मों से ऊब चुके हैं और भारत के उदात्त विचारों की ओर आकर्षित हो रहे हैं।

3. भारतीय विचारों की प्रासंगिकता-

वेदों के विचार - आत्मा और सृष्टि के अनादित्व और परमात्मा की आत्मा में अवस्थिति - पश्चिमी समाज को आकर्षित कर रहे हैं।

भविष्यवाणी - आने वाले 50 वर्षों में संसार के शिक्षित लोग इन वेदवाक्यों को स्वीकार करने लगेंगे।

4. भारत की मूल समस्या - गरीबी और अशिक्षा-

भारत की सबसे बड़ी समस्या है गरीबों की दुर्दशा और अशिक्षा।

भारत के गरीब नैतिकता में पश्चिम के गरीबों से कहीं श्रेष्ठ हैं, इसलिए उन्हें ऊपर उठाना आसान है।

नोट

5. समाधान – शिक्षा को घर-घर पहुँचाना-

यदि गरीब बालक स्कूल नहीं आ सकता, तो शिक्षा को उसके पास ले जाना होगा।

साधुओं को संगठित करके उन्हें धर्म के साथ-साथ सामान्य विषयों की शिक्षा भी देनी चाहिए।

गाँवों में घूम-घूमकर वे लोगों को गणित, भूगोल, ज्योतिष आदि सिखा सकते हैं।

6. व्यावहारिक योजना और कठिनाइयाँ-

इसके लिए धन और संगठन की आवश्यकता है।

भारत में त्यागी लोग बहुत हैं, पर धन नहीं है।

इसी कारण वे अमेरिका आए - क्योंकि भारत के धनी वर्गों में सहयोग की भावना नहीं पाई।

7. भावनात्मक अपील-

दूसरों के लिए जीने वाला ही सच्चा जीवन जीता है।

महाराज जैसे उदार, उन्नत व्यक्ति भारत को पुनः जागृत कर सकते हैं।

यही अवसर है कि आप एक ऐसा नाम छोड़ जाएँ जिसे भावी पीढ़ियाँ आदरपूर्वक स्मरण करें।

यह पत्र केवल एक राजा को लिखा गया निजी पत्र नहीं, बल्कि भारत के पुनर्जागरण का घोषणापत्र है। इसमें स्वामी विवेकानन्द की दूरदर्शिता, सामाजिक चेतना और व्यावहारिक दृष्टिकोण स्पष्ट दिखाई देता है। वे केवल आलोचना नहीं करते, समाधान भी प्रस्तुत करते हैं - और उसकी प्रेरणा आत्मबल और सेवा-भावना से आती है

गतिविधि 7.1

स्वामी विवेकानन्द के पत्र के माध्यम से उनकी सामाजिक दृष्टि और विचारधारा को स्पष्ट करते हुए, उस पत्र के संदेश को आज के संदर्भ में व्याख्यायित करें।

.....

.....

.....

.....

.....

नोट

☑ अपनी प्रगति जांचे 7.1

1. "अप्प दीपो भव" का क्या आशय है और यह किसने कहा था?

.....

2. स्वामी श्रद्धानंद ने आत्मनिर्भरता के लिए किस बात पर ज़ोर दिया?

.....

3. वक्तव्य में किस प्रकार का राष्ट्रनिर्माण दृष्टिगोचर होता है?

.....

4. नेहरूजी ने भारत के सामाजिक व्यक्तित्व को किस प्रकार परिभाषित किया है?

.....

5. भारत की सांस्कृतिक विविधता में किस प्रकार की एकता की भावना है?

.....

6. इस प्रस्तावना से भारत के बारे में लेखक का कौन-सा दृष्टिकोण स्पष्ट होता है?

.....

7.6 सारांश

इस खंड में तीन महान विचारकों – **स्वामी श्रद्धानंद**, **जवाहरलाल नेहरू** और **स्वामी विवेकानंद** – के विचारों और लेखनी के माध्यम से भारत के **राष्ट्र निर्माण**, **सांस्कृतिक चेतना**, और **आत्मनिर्भर सोच** को उजागर किया गया है।

'अप्प दीपो भव' में स्वामी श्रद्धानंद आत्मबल और आत्मप्रकाश का संदेश देते हैं। वे कहते हैं कि व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनकर स्वयं अपने मार्गदर्शक दीपक बनना चाहिए। यह वक्तव्य आत्मविकास, निडरता और जिम्मेदारी की भावना को जगाता है।

'भारत का सामाजिक व्यक्तित्व' में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भारत की सामाजिक विविधता, ऐतिहासिक विरासत और सांस्कृतिक एकता को रेखांकित किया है। यह प्रस्तावना भारतीय समाज की आत्मा को समझने का प्रयास है, जो विविधता में एकता के सिद्धांत पर आधारित है।

योग्यता संवर्धन

नोट

'पत्र मैसूर के महाराजा को' में स्वामी विवेकानंद ने भारतीय संस्कृति, वेदांत दर्शन और आत्मगौरव की भावना को उजागर किया है। यह पत्र भारत के सांस्कृतिक आत्मविश्वास और आध्यात्मिक चेतना का प्रतीक है।

तीनों रचनाएँ भारतीय चेतना, आत्मनिर्भरता, और सामाजिक जागरूकता की प्रेरणादायक अभिव्यक्तियाँ हैं, जो राष्ट्र निर्माण की दिशा में प्रभावशाली योगदान करती हैं।

7.7 शब्दावली

क्रम	शब्द	अर्थ
1	वक्तव्य	सार्वजनिक रूप से कहा गया वक्त/भाषण
2	आत्मदीपो भव	स्वयं अपने प्रकाशस्तंभ बनो
3	वैचारिक धारा	विचारों की प्रवृत्ति या दृष्टिकोण
4	राष्ट्र निर्माण	देश की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक रचना
5	प्रेरणास्पद	जो प्रेरणा देने वाला हो
6	सांस्कृतिक चेतना	संस्कृति के प्रति जागरूकता और समझ
7	प्रस्तावना	किसी पुस्तक या विषय का परिचयात्मक भाग
8	आत्मनिर्भरता	स्वयं पर निर्भर रहने की स्थिति
9	संवाद	विचारों का आदान-प्रदान
10	सामाजिक संरचना	समाज की संगठनात्मक बनावट

7.8 अपनी प्रगति जांचे - संभावित उत्तर

1. "अप्प दीपो भव" का अर्थ है - "अपने दीपक स्वयं बनो"; यह भगवान बुद्ध का उपदेश है, जिसे स्वामी श्रद्धानंद ने आत्मनिर्भरता के संदर्भ में दोहराया।
2. उन्होंने शिक्षा, स्वावलंबन और आत्मबल को आत्मनिर्भरता की कुंजी माना तथा विदेशी शासन से मुक्ति का मार्ग बताया।
3. इसमें सामाजिक जागरूकता, आत्मबल पर आधारित नेतृत्व और भारतीयता के गौरव से युक्त राष्ट्रनिर्माण की भावना प्रकट होती है।
4. नेहरूजी ने भारत को एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से समृद्ध सामाजिक इकाई बताया, जो अनेकता में एकता का प्रतीक है।
5. भारत में जाति, भाषा, धर्म की विविधता होते हुए भी सहिष्णुता और समावेशी दृष्टिकोण से एकता की भावना बनी रही है।
6. इस प्रस्तावना से भारत के प्रति लेखक का गर्व, आशा, और सुधारवादी दृष्टिकोण स्पष्ट होता है।

7.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) - 1	http://books.aisectionline.com/User/UnitUrls?unitId=13	

7.10 संदर्भ

- हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास – डॉ. रामविलास शर्मा
- स्वामी श्रद्धानंद - जीवन और चिंतन – डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक'
- भारत एक खोज / डिस्कवरी ऑफ इंडिया – पं. जवाहरलाल नेहरू
- स्वामी विवेकानंद रचनावली (खंड 5) - प्रकाशक - रामकृष्ण मिशन, बेलूर मठ
- भारतीय भाषण साहित्य का विकास – डॉ. महेश आनंद

7.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ) -

- ‘अप्प दीपो भव’ का मूल अर्थ क्या है?
 - दूसरों का दीपक बनो
 - अपने प्रकाश स्तंभ स्वयं बनो
 - दीप जलाओ
 - अंधकार मिटाओ
- स्वामी श्रद्धानंद का यह वक्तव्य किस समय दिया गया था?
 - शिक्षा सम्मेलन में
 - विदाई समारोह में
 - आंदोलन के दौरान
 - जेल में
- ‘भारत का सामाजिक व्यक्तित्व’ में नेहरू जी किस बात पर ज़ोर देते हैं?
 - राजनीति पर
 - धार्मिक कट्टरता पर
 - विविधता में एकता पर
 - युद्ध नीति पर

नोट

4. स्वामी विवेकानंद ने पत्र किसे लिखा था?

- | | |
|----------------------------|------------------------|
| A) ब्रिटिश सरकार को | C) मैसूर के महाराजा को |
| B) भारत के प्रधानमंत्री को | D) रामकृष्ण मिशन को |

5. स्वामी विवेकानंद ने अपने पत्र में किस विषय पर विशेष ध्यान आकर्षित किया है?

- | | |
|-----------------------------|------------|
| A) सैन्य शक्ति | C) व्यापार |
| B) शिक्षा और धर्म का प्रचार | D) राजनीति |

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

- 1. B) अपने प्रकाश स्तंभ स्वयं बनो** - 'अप्प दीपो भव' बौद्ध दर्शन पर आधारित वह प्रेरणादायक सूत्र है, जिसका आशय है कि व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनना चाहिए और अपने विचार, विवेक व कर्म के माध्यम से अपना मार्ग स्वयं प्रशस्त करना चाहिए। यह संदेश विशेष रूप से युवाओं को आत्मबल व आत्मनिर्भरता की प्रेरणा देता है।
- 2. A) शिक्षा सम्मेलन में** - यह वक्तव्य स्वामी श्रद्धानंद ने एक शिक्षा सम्मेलन में विद्यार्थियों को संबोधित करते हुए दिया था। उनका उद्देश्य युवाओं को आत्मविश्वासी, कर्तव्यनिष्ठ और समाजोपयोगी बनने की प्रेरणा देना था।
- 3. C) विविधता में एकता पर** - नेहरू जी ने 'भारत का सामाजिक व्यक्तित्व' में भारत की सांस्कृतिक विविधता के भीतर समरसता को भारतीयता की मूल आत्मा बताया है। वे मानते थे कि अनेकता में एकता ही भारतीय समाज की पहचान है।
- 4. C) मैसूर के महाराजा को** - स्वामी विवेकानंद ने यह पत्र मैसूर के महाराजा को लिखा था, जिसमें उन्होंने शिक्षा, धर्म और समाज सेवा के प्रसार के लिए सहयोग का अनुरोध किया था। यह पत्र भारतीय नवजागरण का भी प्रतीक माना जाता है।
- 5. B) शिक्षा और धर्म का प्रचार** - विवेकानंद ने अपने पत्र में शिक्षा व आध्यात्मिक उत्थान को समाज के पुनर्निर्माण का आधार बताया। उन्होंने धार्मिक ज्ञान, सेवा और सांस्कृतिक चेतना के माध्यम से राष्ट्र निर्माण की बात कही।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. 'अप्प दीपो भव' का संदेश किस प्रकार आत्मनिर्भरता से जुड़ा हुआ है?
2. स्वामी श्रद्धानंद ने छात्रों को किस प्रकार प्रेरित किया और किस दिशा में कार्य करने की बात कही?
3. नेहरू जी ने भारतीय समाज को किस प्रकार की रचना माना और क्यों?
4. विवेकानंद ने अपने पत्र में महाराजा को किन कार्यों में सहयोग देने की बात कही?
5. 'भारत का सामाजिक व्यक्तित्व' पाठ में भारतीय संस्कृति की मूल आत्मा क्या बताई गई है?

Part - 2**C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)**

1. स्वामी श्रद्धानंद के 'अप्प दीपो भव' वक्तव्य का क्या भावार्थ है? यह विचार युवाओं में आत्मबल और आत्मनिर्भरता की भावना किस प्रकार उत्पन्न करता है?
2. 'भारत का सामाजिक व्यक्तित्व' पाठ में नेहरू जी ने भारतीय संस्कृति की किन-किन विशेषताओं पर बल दिया है? विविधता, सहिष्णुता और सामाजिक समरसता पर उनके विचार स्पष्ट कीजिए।

Part - 3**D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)**

1. स्वामी विवेकानंद द्वारा महाराजा को लिखे गए पत्र का उद्देश्य क्या था? उन्होंने शिक्षा, अध्यात्म और समाज सेवा को लेकर क्या संदेश दिया और कैसे प्रेरित करने का प्रयास किया?
2. 'अप्प दीपो भव', 'भारत का सामाजिक व्यक्तित्व' और विवेकानंद का पत्र-इन तीनों पाठों के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि भारतीय समाज में आत्मनिर्भरता, विविधता और अध्यात्म की भूमिका क्या है?
3. श्रद्धानंद, नेहरू और विवेकानंद - इन तीनों महान व्यक्तित्वों के विचारों में क्या समानताएँ उभरती हैं? भारतीय समाज, संस्कृति और युवाओं के विकास के संदर्भ में उनका तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत कीजिए।

इकाई – 8

संप्रेषण और साहित्य - विचारों की यात्रा

नोट

इकाई की रूपरेखा

- 8.1 परिचय
- 8.2 उद्देश्य
- 8.3 बनी रहेंगी किताबें (आलेख) डॉ. सुनीता रानी घोष
- 8.4 पत्र - लेखन - महत्व और उसके विविध रूप
- 8.5 सड़क पर दौड़ते ईहा मृग (निबंध) डॉ. श्यामसुन्दर दुबे
- 8.6 सारांश
- 8.7 शब्दावली
- 8.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर
- 8.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER
- 8.10 संदर्भ
- 8.11 अभ्यास
- 8.12 फीडबैक फॉर्म

8.1 परिचय

"संप्रेषण और साहित्य - विचारों की यात्रा" एक अत्यंत महत्वपूर्ण और विचारशील विमर्श है, जिसमें संप्रेषण के विभिन्न रूपों और साहित्यिक विधाओं के माध्यम से विचारों के आदान-प्रदान पर गहराई से चर्चा की गई है। इस विमर्श के अंतर्गत तीन प्रमुख कृतियाँ शामिल हैं -

"बनी रहेंगी किताबें" (आलेख) - डॉ. सुनीता रानी घोष

डॉ. सुनीता रानी घोष का आलेख 'बनी रहेंगी किताबें' पुस्तक के महत्व, उसके संरक्षण और समय के साथ उसके बदलते स्वरूप पर विचार प्रस्तुत करता है। यह आलेख साहित्य और ज्ञान के संरक्षण में पुस्तकों की भूमिका पर विशेष प्रकाश डालता है।

"पत्र-लेखन- महत्व और उसके विविध रूप"

यह लेख पत्र-लेखन के महत्व और इसके विभिन्न रूपों की व्याख्या करता है। पत्र-लेखन न केवल संप्रेषण का एक माध्यम है, बल्कि यह व्यक्तिगत विचारों और भावनाओं के आदान-प्रदान का एक सशक्त साधन भी रहा है, जिसे आधुनिक युग में सोशल मीडिया ने कुछ हद तक बदल दिया है।

योग्यता संवर्धन

नोट

"सड़क पर दौड़ते ईहा मृग" (निबंध) - डॉ. श्यामसुंदर दुबे

डॉ. श्यामसुंदर दुबे का निबंध 'सड़क पर दौड़ते ईहा मृग' समाज और जीवन की आपाधापी में खोते हुए विचारों और जीवन की जटिलताओं पर आधारित है। यह निबंध समाज के विसंगतियों, दौड़ते हुए जीवन और उसकी वास्तविकता पर आधारित है।

8.2 उद्देश्य

1. विचारों के संप्रेषण को समझना।
2. साहित्यिक विधाओं का महत्व समझना।
3. संपर्क और संवाद के माध्यम के रूप में पुस्तकों का महत्व समझना।
4. समाज के विभिन्न पहलुओं को उजागर करना।
5. पत्र-लेखन की भूमिका और उसके प्रभाव को समझना।

8.3 बनी रहेंगी किताबें (आलेख) डॉ. सुनीता रानी घोष

मूल पाठ

बनी रहेंगी किताबें डॉ.सुनीता (आलेख)

सामान्यतः किसी भी वस्तु के भाग्य की भविष्यवाणी करना जोखिम भरा काम है क्योंकि भविष्य के गर्त में असीमित संभावनायें छिपी होती हैं। कभी यह हमारी मनवांछित दिशा की ओर बढ़ता है तो कभी अपरिचित एवं अज्ञात सह की ओर भी उन्मुख हो सकता है। लेकिन भविष्यवाणी का एक ठोस आधार वर्तमान में मानवजाति को उपलब्ध ज्ञान का असीमित भण्डार है। इसीलिए विवेकशील मनुष्य उस प्राप्य ज्ञान के आधार पर दृढ़तापूर्वक किसी वस्तु के भविष्य पर विचार प्रस्तुत कर सकते हैं। जहाँ तक किताब के भविष्य का प्रश्न है तो यह प्रथम अवसर नहीं है जब किताब के भविष्य पर चर्चा हो रही है। जब पहली बार रेडियो का प्रसारण हुआ तो लोगों ने कहा कि पुस्तक का समय अब समाप्त हो चुका। टेलीविजन के आगमन पर भी यह उद्घोषणा-सी कर दी गयी थी कि अब समाचार पत्र तथा किताबें कोई नहीं पढ़ेंगे। केबिल टी.वी. की शुरुआत के अवसर पर भी ऐसा ही कुछ हुआ और कम्प्यूटर तथा इंटरनेट के प्रसार के सूचना क्रान्ति के इस युग ने तो सचमुच पुस्तक प्रेमियों को चिन्ता में डाल दिया है। इस संदर्भ में मुझे महाकवि त्रिलोचन की एक कविता "चम्पा काले काले अक्षर नहीं चीन्हती" याद आती है। इस कविता में त्रिलोचन चम्पा नामक निरक्षर ग्रामीण बालिका को पढ़ने के बहुत से लाभ बताकर पढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। अपनी बात को अधिक प्रभावी बनाने के लिए वे गांधी बाबा के पूर्णतः साक्षर राष्ट्र के स्वप्न का भी उल्लेख करते हैं-

"उस दिन चम्पा आयी
मैंने कहा कि चम्पा तुम भी पढ़ लो
हारे-गाढ़े काम सरेगा
गांधी बाबा की इच्छा है
सब जन पढ़ना-लिखना सीखें"

परन्तु वह अंत तक यही कहती है कि मैं तो नहीं पढ़ेंगी। कविता में के प्रति चम्पा की यह विद्रोही उदासीनता तो कविता के उद्देश्य को करती ही है परन्तु कविता का मुख्य प्रभाव हमें तब गहरे सोच में डाल देता है, जब चम्पा कवि से यह कहती है-

"चम्पा बोली
तुम कितने झूठे हो देखा
हाय राम तुम पढ़-लिखकर इतने झूठे हो"

चम्पा का यह कथन हमारे पढ़े-लिखे सभ्य समाज पर और तथाकथित बुद्धिजीवी वर्ग पर तीक्ष्ण व्यंग्य है और हमारी त्रासदी भी। इस तथाकथित बुद्धिजीवी वर्ग ने किताबों के प्रति खौफनाक वातावरण बना दिया है। इनका मानना है कि हम क्यों पढ़ें जब पढ़ने को आज कुछ अच्छा रहा ही नहीं- अखबारों में लूटपाट, बलात्कार, हत्या या दुर्घटना की खबरें, पत्र-पत्रिकाओं में वहीं कुछ ब्राण्ड, पुस्तकों के प्रकाशन से लेकर पुरस्कार तक गुटबंदी और जोड़-घटाओ, बाल साहित्य का नितांत अभाव और साथ ही बच्चों में पढ़ने के प्रति अरुचि-इस तरह के तमाम विषयों पर बुद्धिजीवी वर्ग में आये दिन चर्चा होती रहती है। साथ ही इस वर्ग ने किताबों के नियमित पाठकों को यह कहकर चिंता में डाल दिया है कि कम्प्यूटर और इंटरनेट ने किताब के अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगा दिया है और भविष्य में मुद्रित किताबें समाप्त हो जाएंगी।

यह सब पढ़-सुनकर 'चिराग तले अँधेरा' कहावत याद आ जाती है। वस्तुतः आज मन और मस्तिष्क के मनोरंजन और जानकारी के साधन अवश्य अनगिनत हो किन्तु मनुष्य की मनोवृत्ति आज भी पढ़ने की श्रेष्ठता को नकारती नहीं है। सर्वमान्य है कि प्रिंट मीडिया जनसंचार का सर्वाधिक स्थायी और सफल माध्यम है। गुटनबर्ग ने जब छापाखाना ईजाद किया था तो सोचा भी न होगा कि वे विश्व को इतना अनूठा तोहफा दे रहे हैं। कम्प्यूटर और इंटरनेट के युग में भी आज समाचार पढ़ने के लिए लोग समाचार पत्रों का जितना बहुआयामी प्रयोग करते हैं उतना अन्य किसी साधन का नहीं। टेलीविजन, कम्प्यूटर, इंटरनेट और वीडियो गेम्स में उलझे हमारे प्यारे बच्चे चंपक और चंदामामा से बेशक दूर जा रहे हों, किन्तु 'हैरी पॉटर' उन्हें बेहद लुभा रही है। इस किताब की रिकार्ड तोड़ विश्वस्तरीय सफलता और इसकी लेखिका जे. के. रोलिंग की बढ़ती प्रसिद्धि इस बात का प्रमाण है कि बाल साहित्य आज भी बच्चों को आकर्षित करता है और पढ़ने में उनकी रुचि अभी भी समाप्त नहीं हुई है।

नोट

किताबें मानव जाति के इतिहास में अपनी शक्ति को प्रमाणित कर चुकी हैं और अपनी बहुमुखी उपयोगिता के कारण समय के हर आघात के का प्रमाणित सामना कर और अधिक निखार के साथ सर्वाधिक प्रभावी माध्यम सिद्ध हुई है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संवाद स्थापित करने में तथा अपने समकालीन दौर को समझने में किताबें हमारी विशेष सहायक होती हैं। अपने प्रारम्भिक काल से लेकर आज तक किताबें सांस्कृतिक अग्रदूत की भूमिका अद्भुत कौशलता के साथ निभाती रही है। किताबें सम्पूर्ण विश्व के श्रेष्ठतम विचारों को शिक्षा, विज्ञान, इतिहास, साहित्य तथा व्यक्तिगत अनुभवों के रूप में हमें पहुँचाती है। किताबें यदि राष्ट्र के प्रति प्रेम जगाती हैं तो कभी-कभी सत्ता के प्रति आक्रमक एवं राष्ट्रद्रोह की भावना को भी उद्दीप्त करती हैं। सत्ता तक पहुँचाती है तो सत्ता को पलटने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इसीलिए समय-समय पर विभिन्न सरकारों द्वारा अपने विरुद्ध लिखनेवाले लेखकों की किताबों क प्रतिबन्धित भी किया गया है।

अंग्रेजी शासन द्वारा 'सोजे वतन' की जब्ती तथा उस पर लगाये गये प्रतिबन्ध ने हिन्दी साहित्य को कथा सम्राट मुंशी प्रेमचन् रूपी अनमोल रत्न प्रदान किया। इसी प्रकार सोवियत संघ आज टुकड़ों में बंट चुका है। किन्तु जिन पुस्तकों के आधार पर उसका गठन हुआ था वे आज भी सुरक्षित एवं मूल्यवान हैं। यही कारण है शंकाएँ उपजीं, विवाद छिड़े किन्तु हजारों वर्षों में भी किताबों के महत्व को नकारा नहीं जा सका है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो भी यह अनुभूत सत्य है कि देखी हुई घटना या परिदृश्य का प्रभाव मस्तिष्क पर उतना स्थायी नहीं होता जितना किसी पढ़े हुए मार्मिक विषय का। यदि किसी लेख, कहानी या कविता की संवेदना ने मुझे छुआ तो वह आज तक मेरी स्मृति में है। शायद यही वजह है। कि बच्चों की विद्यालयी शिक्षा का आरम्भ किताबों से किया जाता है, उनमें लिखे हुए शब्द के प्रति सम्मान का भाव जगाया जाता है।

अत्यधिक तकनीकी प्रगति के बाद भी शिक्षण प्रणाली में किताबों का स्थान कम्प्यूटर नहीं ले पाया है। किताबों के प्रभाव एवं शक्ति का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि भिन्न-भिन्न सरकारें सत्ता में आते ही पाठ्यक्रम में बदलाव करने के लिये एड़ी-चोटी का जोर लगा देती हैं। यों अगर देखा जाए तो टेलीविजन धारावाहिक या फिल्मों का आधार भी किताबें ही होती है। उपयुक्त पटकथा के बिना न सफल टी.वी. धारावाहिक बन सकते हैं. न उत्तम डॉक्यूमेंट्री और न ही एक अच्छी फिल्म। पूरा प्रयास किया जाता है कि शरतचंद्र के उपन्यास 'देवदास' या रेणु की कहानी 'तीसरी कसम' की मूल संवेदना को अक्षरशः उतारा जाए। यदि निर्देशक उस भावना तक पहुँचने में सफल होता है तो फिल्म हिट है अन्यथा दर्शक मूल कृति से तुलना कर उसे नकार देते हैं। कहते हैं किताबों से अच्छा कोई मित्र नहीं होता। किताबों से हम वार्तालाप कर सकते हैं, परामर्श ले सकते हैं, अपने मार्ग का निर्धारण कर सकते हैं तथा अपने चित्त एवं चरित्र का परिष्कार कर सकते हैं। पुस्तकों की संगति सर्वश्रेष्ठ मानी गयी है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इसलिए पुस्तकालय को 'सन्तमिलन का उत्तम मार्ग' बताया है। आप घर पर खाली बैठे हैं, ट्रेन में पात्रा कर रहे हैं, या कहीं अनजाने लोगों की महफिल में पहुँच गये हैं- यदि आपके पास एक अच्छी किताब है तो फिर न कोई

अकेलापन है और न कोई अजनबीपन। आज की आपाधापी भरी व्यस्त जिंदगी में जब किसी के पास अपनी समस्याओं को सुलझाने का समय नहीं है तो किसी दूसरे के लिए कोई कहाँ से समय निकालेगा? ऐसे में आप नौकरीपेशा एकाकी व्यक्ति हों या सेवानिवृत्त वृद्ध, किताबें ही आपका सबसे बड़ा संबल बन सकती हैं। मेरे दो-चार बहुत अच्छे और सच्चे मित्र हैं, परन्तु फिर भी उन पर पहुँचना मेरे लिए इतना सहज और सरल नहीं जितना अपनी अल्मारी में रखी किसी किताब तक पहुँचना। वैसे पढ़ने के सबके अलग-अलग उद्देश्य हैं, कोई साक्षर बनने के लिए पढ़ता है तो कोई साधारण हिसाब-किताब के लिये, कुछ लोग उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए पढ़ते हैं तो कुछ जीविकोपार्जन के लिए। परंतु जिनके पढ़ने को आदर्श माना गया है वह है स्वान्तः सुखाय पढ़ना।

इस अन्तःप्रेरणा से पढ़ने में जो आनंद है वह किसी और मनोरंजन में कहाँ? किताबों की अपनी एक अलग फैंटेसी की दुनिया है और इसमें खोनेवाला व्यक्ति 'मनुआ बेपरवाह' बन जाता है। उसे फिर व्यावहारिक दुनिया की खबर नहीं रहती, खाने, पीने और सोने का होश नहीं रहता। किताबों की दुनिया भी सपनों की दुनिया की तरह अपने पाश में बाँध लेती है। जब तक हम उस दुनिया में रहते हैं अपनी समस्याएँ, पीड़ा, बैचेनी सब भूल जाते हैं। इस प्रकार जहाँ एक ओर यथार्थ के धरातल पर किताबें बहुविध ज्ञान का माध्यम हैं वहीं दूसरी ओर यथार्थ की भयावहता से पलायन कर कहीं दूर सुरक्षित कोने में ले जाने में भी ये किताबें ही हमारा सहारा बनती हैं। जीवन की आपाधापी व कोलाहल से दूर किताबें हमें प्रसाद के नाविक की भाँति कल्पना के सुन्दर, शांत व सुखद लोक में ले जाने की सामर्थ्य रखती हैं।

किताबें हमारे वैक्तिक जीवन का पथ प्रशस्त करती है साथ ही सामाजिक जीवन के विकास की भी प्रेरक होती है। लगभग हर महान व्यक्ति के जीवन में किसी-न-किसी पुस्तक का हाथ रहा है। विद्युत बल्ब के अविष्कारक एडीसन स्कूल की सामान्य शिक्षा से वंचित रहे, किन्तु उन्हें स्वाध्याय की आदत थी। उनके अनुसार, वे सोचना वहीं से प्रारम्भ करते थे जहाँ कोई किताब समाप्त होती थी। इतिहास साक्षी है कि रूसो, मार्क्स, लेनिन अथवा गांधी सभी न के जीवन दर्शन के निर्माण में महान पुस्तकों का योगदान था, वहीं स्वयं इनके द्वारा रचित पुस्तकों ने अनेक क्रान्तियों को उत्प्रेरित भी किया। किताबें मानव चरित्र को किस सीमा तक प्रभावित करती हैं, इस संदर्भ में महात्मा गांधी अपनी आत्मकथा में लिखते हैं - "कुछ खास-खास किताबों का असर मेरे जीवन पर बहुत गहरा पड़ा है, लेकिन जिस पुस्तक ने मेरे जीवन में सर्वाधिक क्रांतिकारी परिवर्तन कर दिया है, वह रस्किन की 'अनटू दिस लास्ट' पुस्तक है।... पुस्तक को मैंने एक बार पढ़ना शुरू किया तो खत्म किये बिना न छोड़ सका। उसने मेरे हृदय पर अधिकार कर लिया.....

इस पुस्तक के विचारों के अनुसार जीवन बनाने की धुन लग रही थी। मेरे जीवन में यदि किसी पुस्तक ने तत्काल महत्वपूर्ण रचनात्मक परिवर्तन कर डाला है तो वह यही पुस्तक है। बाद को मैंने इसका गुजराती भाषा में अनुवाद किया और वह सर्वोदय के नाम से प्रकाशित हुआ। मेरा यह विश्वास है कि जो चीज मेरे अन्तर में बसी हुई थी उसका स्पष्ट प्रतिबिम्ब मैंने रस्किन के इस ग्रन्थ में देखा और इस कारण उसने मुझे पर अपना साम्राज्य

नोट

जमा लिया एवं अपने विचारों के अनुसार मुझसे आचरण करवाया।" और तो और दुनिया को विंडोज का उपहार देने वाले माइक्रोसॉफ्ट के मालिक बिल गेट्स स्वयं पुस्तक प्रेमी हैं। बिल गेट्स ने एक टीम बनायी है जो सदैव किताबें पढ़ती रहती है और उनके पढ़ने के लिए अच्छी किताबें छाँटती है। फिर अनुशासन और लगन की प्रवृत्ति के विकास का भला पढ़ने से बेहतर और कौन-सा तरीका है? अगर महान् नहीं तो एक बेहतर इंसान बनने का प्रयास तो सभी को करना चाहिए। इसलिए किताबें पढ़ने पर आज भी अभिभावक जोर देते हैं। वर्तमान में किताबों से जुड़ा एक और पहलू है जो किताबों के भविष्य के प्रति आशंकित करता है। कुछ समीक्षकों का मानना है कि शब्द की शक्ति में निरंतर कमी आ रही है।

आज विश्व साहित्य में ऐसी किताबें लुप्तप्रायः हो चुकी हैं जो 'भगवद्गीता', 'अनटु दिस लास्ट', गोर्की की 'मदर' के समान मानव जीवनशैली को प्रभावित करने की सामर्थ्य रखती हो। यह स्थिति पुस्तक प्रेमियों में हताशा को जन्म दे रही है। यह माना जा रहा है कि आज हर व्यक्ति किताब छपवाना चाहता है। यह आवश्यक नहीं है कि वे सभी समाज के उत्थान से जुड़ी हों या किसी भी अर्थ में महत्वपूर्ण हों। आज प्रकाशित पुस्तकों के विशाल समुद्र में से कुछ बहुमूल्य मोती रूपी पुस्तकें छाँटना असंभव नहीं तो दुष्कर अवश्य है। यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक पुस्तकें मानव सभ्यता की प्रगति में योगदान देकर मील का पत्थर साबित होंगी। इसका कारण यह माना जा रहा है कि ज्ञान की विविधता में तो वृद्धि हुई है किन्तु उसके स्थायित्व में कमी आयी है। मीडिया एवं तकनीक के विस्तार के साथ-साथ किताबों की प्रकाशन संख्या तो बढ़ी है किन्तु किसी भी किताब की बहुत अधिक प्रतियाँ बाजार में बिक नहीं पातीं। बेस्ट सेलर की कमी है। ऐसा शायद इसीलिए हो रहा है कि मीडिया शीघ्र ही उस विषय से सम्बन्धित कुछ अन्य पुस्तकों के प्रति हमारा ध्यान आकर्षित कर देता है। इसका पुस्तक के मूल्य अथवा महत्त्व से कोई सम्बन्ध नहीं है वरन् यह बाजारवाद का कौशल है।

बाजार की व्यावसायिक प्रवृत्ति इसके लिए उत्तरदायी है। रही बात आज पुस्तकों द्वारा जनमानस को उद्वेलित करने अथवा जन-जन की आत्मा के परिष्कार के सामर्थ्य की तो इस विषय में मुझे यही कहना है कि यह समय ही तय करेगा कि आजकल लिखी जाने वाली कौन-सी पुस्तकें आगामी पीढ़ियों को प्रभावित करेंगी, क्योंकि कालजयी रचनायें अतीत में भी अपने रचनाकाल में उपेक्षित होती रही हैं। जिस समय होमर एवं वर्जिल लिख रहे थे उस समय भी हजारों लोग लिख रहे होंगे। महान साहित्यकार चेखव, प्रेमचन्द, विक्टर ह्यूगो, निराला आदि के साहित्य को जो महत्त्व आज दिया जा रहा है, क्या वह उनके जीवन काल में दिया गया था? इन सभी को स्वयं को स्थापित करने के लिए आजीवन संघर्ष करना पड़ा था और प्रतिकूल परिस्थितियों ने इनकी साहित्यिक प्रतिभा को और अधिक विकसित एवं परिपक्व किया था।

आज इन सभी कालजयी रचनाकारों की ख्याति देश-काल की सीमाओं को लाँघकर चतुर्दिक् फैली हुई है और इनकी अद्वितीय कृतियाँ विश्व-वाङ्मय में एक प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर चुकी हैं। इसीलिए यह समय ही तय करेगा कि आज लिखने वालों में से कौन

भविष्य के निराला, तुलसी या प्रेमचंद होंगे। हमारे कुछ बुद्धिजीवी यही राग अलापते रहते हैं कि ई-बुक आ गयी है, अब कौन छपी किताबें और अखबार पढ़ेगा? मुद्रित किताबें और ई-बुक दोनों ही एक-दूसरे की पूरक हो सकती हैं और दोनों ही पठन प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करती हैं। सन्दर्भ ग्रन्थों के लिये इलेक्ट्रॉनिक किताबें उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। शब्दकोश, विश्वकोश, एटलस जैसे सन्दर्भ ग्रन्थ जिन्हें कभी-कभी देखने की आवश्यकता होती है - इस तरह के परिवर्तन के लिये उपयुक्त हैं। इलेक्ट्रॉनिक रूप में इनका प्रकाशन सरल तथा शीघ्र हो सकता है। साथ ही उनमें समयानुकूल परिवर्तन आसानी से हो सकते हैं। इससे किताबों की स्याही, कागज, प्रेस तथा पर्यावरण की समस्याओं का निराकरण कुछ सीमा तक हो सकेगा। फिर भी मुद्रित किताब कभी भी खाली समय में अपनी सुविधानुसार पढ़ी जा सकती हैं।

हम बिस्तर पर लेटकर, खाना खाते समय, रेल में यात्रा करते हुये या बस स्टैण्ड पर बस की प्रतीक्षा करते हुए भी मुद्रित पुस्तक पढ़ सकते हैं। यहाँ तक कि कुछ लोग तो सड़क पर चलते हुए किताब के पन्ने पलटते हुए देखे जा सकते हैं। मुद्रित किताब, विशेष रूप से पेपरबैक किताबें सस्ती, हल्की तथा सुविधाजनक होती हैं। किताब पढ़ने के लिये सूर्य की रोशनी, आँखें तथा हाथ ही पर्याप्त हैं। रात्रि में बिजली के अभाव में हम मोमबत्ती में भी किताब का अध्ययन कर सकते हैं। इसे चालित करने के लिये किसी बैटरी या तकनीक तथा उसके तकनीक के प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती। यहाँ तक कि ई-बुक के सुविधाजनक होने के बावजूद भी इसे प्रचलित करने के लिये बैटरी की आवश्यकता होती है। यदि किताबें केवल डिजिटल या ऑनलाइन प्रकाशन तक ही सीमित हो जायेंगी तो भारत में ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुत बड़ी समस्या उत्पन्न हो जायेगी।

दुनिया भर के लोग जिनकी पहुँच कम्प्यूटर या इन्टरनेट तक नहीं है, जिनके लिये कम्प्यूटर खरीदना या इन्टरनेट का व्यय वहन करना संभव नहीं अथवा जो उसे चालित करने की योग्यता नहीं रखते अथवा जो किसी भी कारण से तकनीकी प्रगति के साथ तालमेल बिठाने में असमर्थ हैं, वे अनेक पुस्तकों का लाभ उठाने से वंचित रह जायेंगे। फिर अब्राहम लिंकन और प्रेमचन्द जैसे विश्व के करोड़ों प्रतिभाशाली मनुष्यों के पढ़ने और लिखने की प्रक्रिया तथा प्रतिभा तो अविकसित और कुंठित ही रह जायेगी जो आज भी मिट्टी के तेल के दीये या 'स्ट्रीट लाइट' की रोशनी में अपने भविष्य को सँवारने का प्रयास कर रहे हैं। तकनीक अपने प्रयोग में अधिक ऊर्जा तथा मानवीय शक्ति का क्षरण करती है।

तकनीकी दृष्टि से अधिक विकसित देशों में भी वाशिंगटन पोस्ट, वॉल स्ट्रीट जर्नल, ट्रेड जर्नल तथा न्यूयार्क टाइम्स आदि पत्रों में इस तरह के अनेक आलेख प्रकाशित हुए जहाँ आम जनता की यह राय थी कि वे अध्ययन का वास्तविक आनन्द कम्प्यूटर स्क्रीन पर नहीं कर सकते हैं। 2004 में 2.3 अरब पुस्तकें प्रकाशित हुईं जिनमें से 0.1 प्रतिशत ही ई-बुक थीं। सार्वजनिक तथा शैक्षणिक पुस्तकालय मुद्रित पुस्तकों के संग्रह पर ही निर्भर करेंगे। यदि डिजिटल तकनीक होगी तो वह किताबों के पूरक रूप में होगी उनकी स्थानापन्न नहीं। डिजिटल कैटलॉगिंग कम्प्यूटर तकनीक सार्वजनिक तथा शैक्षणिक

नोट

पुस्तकालयों में बहुत सी कठिनाइयों के निराकरण में सहायक हो सकती हैं। प्रिंट और पी.सी. एक साथ फलेंगे-फूलेंगे। यह कोई अनहोनी बात नहीं होगी। हवाई जहाज के आविष्कार के उपरान्त भी रेल तथा बसें यातायात के प्रमुख साधन हैं। कई यात्रायें तो हवाई जहाज से सम्भव भी नहीं हैं। क्या आगरा से मथुरा तक की यात्रा हवाई जहाज से की जा सकती है? साथ ही मुद्रित किताब अधिक स्थायी होती है। यदि उसमें परिवर्तन करना है तो वह उस किताब का दूसरा संस्करण छपने पर सम्भव है। इसीलिए किताब में प्रकाशित ज्ञान सामग्री अधिक स्थायी होती है।

पुस्तक मानव जाति के इतिहास में एक मानवशास्त्रीय विकास है। यदि हम आज के तकनीकी विकास को पहिये के आविष्कार के साथ जोड़ते हैं तो एक बात स्पष्ट हो जाती है कि मानव की योग्यता असीम है और इस योग्यता का सबसे बड़ा प्रमाण किताबें ही हैं। किताबें अनुभव के संसार में विचरण करने का एक प्रमुख माध्यम हैं जहाँ पन्ना पलटने की गति के साथ ही हम अधिकाधिक जानकारी तथा योग्यता हासिल करते जाते हैं। हाँ, किताबें पढ़ने के विकास के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि हम श्रेष्ठ साहित्य ही पढ़ें जो शाश्वत हो, कुछ घण्टे या कुछ दिन जीवित रहनेवाली पठन सामग्री से दूर रहना ही बेहतर है, क्योंकि पुस्तकें सँवारने के साथ-साथ बिगाड़ने का काम भी करती हैं। अतः पठन सामग्री के चयन में भी विशेष सावधान रहने की आवश्यकता है। वैसे भी जिस समाज में अच्छे पाठक होते हैं, वहाँ अच्छी किताबों की सर्जना भी होती है, और अच्छी श्रेष्ठ किताबें कालजयी होती हैं। उनमें जो कुछ संकलित हो जाता है वह स्थायी हो जाता है। रेडियो या टी.वी. से प्रसारित शब्द प्रसारण मात्र के बाद विलुप्त हो जाता है।

समाचार पत्र दूसरे दिन अनुपयोगी हो जाते हैं, किन्तु पुस्तकें कालातीत होती हैं। सूचना क्रान्ति से जुड़ी तकनीक, प्रौद्योगिकी या अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था से जुड़े परिवर्तन मानव के भाग्य की विधात्री पुस्तक के अस्तित्व को संकट में डालकर भला उसके भविष्य पर प्रश्नचिह्न कैसे लगा सकते हैं? सूचना क्रान्ति की विकसित तकनीक, मुद्रण की सुविधायें तथा प्रकाशन तन्त्र के कौशलपूर्ण उपयोग को देखकर यह विश्वास हो जाता है कि किताबों का भविष्य बेहतर ही होगा, बदतर नहीं। इतिहास साक्षी है कि महान् विचार किसी एक देश की सम्पत्ति कभी नहीं रहे, वरन् उनसे सम्पूर्ण विश्व लाभान्वित हुआ है।

जब तक शब्द रहेंगे, मानव की आस्था जीवित रहेगी और स्वयं मानव का अस्तित्व रहेगा, तब तक किताबें भी रहेंगी और किताबें ही भविष्य में भी वर्तमान की भाँति विश्व की सर्वोच्च सत्ता के सिंहासन पर आसीन रहेंगी। आगामी पीढ़ी किसी किताब के माध्यम से ही यह ज्ञान पायेगी कि कभी इक्कीसवीं शताब्दी की शुरूआत में किताब के भविष्य से जुड़ी आशंका एवं चिंता ने विश्व के बुद्धिजीवियों को विचार-विमर्श के लिए बाध्य किया था।

“बनी रहेंगी किताबें” एक छोटा-सा वाक्यांश होते हुए भी, अपने भीतर अनेक स्तरों पर गहरे अर्थ समेटे हुए है। यह केवल एक वाक्य नहीं, बल्कि **एक सांस्कृतिक घोषणापत्र** की तरह है—जिसमें ज्ञान, स्मृति, इतिहास, और संवेदना के सतत प्रवाह की बात की गई है।

1. किताबें- सभ्यता की स्मृति और संस्कृति की वाहक-

किताबें केवल कागज़ पर छपी हुई बातें नहीं होतीं; वे समय की स्मृति, मानव अनुभवों की अभिव्यक्ति, और संस्कृति की धरोहर होती हैं। "बनी रहेंगी किताबें" कहकर लेखक यह संकेत देता है कि किताबें न केवल बनी रहेंगी, बल्कि वे मनुष्य की चेतना का अनिवार्य हिस्सा बनी रहेंगी।

यह शीर्षक जैसे कहता है कि तकनीक भले तेज़ हो जाए, सूचना के तरीके बदल जाएं, लेकिन किताबें उस गहराई और आत्मीयता को बनाए रखेंगी जिसे कोई भी स्क्रीन नहीं दे सकती।

2. समकालीन संदर्भ में महत्त्व-

आज का युग सूचना क्रांति का है। ई-बुक्स, ऑडियो बुक्स, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), सोशल मीडिया-इन सबने ज्ञान की प्राप्ति को आसान तो बना दिया है, लेकिन गहराई और टिकाऊपन कहीं खोता जा रहा है।

इस संदर्भ में यह शीर्षक एक संघर्षशील स्वर है-एक नरम लेकिन दृढ़ प्रतिरोध। यह आधुनिकता से मुँह नहीं मोड़ता, लेकिन यह चेताता है कि किताबें केवल सूचना नहीं, अनुभव और आत्मिक संवाद का माध्यम हैं, जिन्हें समाप्त नहीं किया जा सकता।

3. भावनात्मक और सांस्कृतिक निहितार्थ-

यह वाक्य अपने भीतर एक भावुक अपील भी छिपाए हुए है। जैसे कोई पाठक या लेखक यह प्रार्थना कर रहा हो -

"जो कुछ भी बदल जाए, किताबें बनी रहें।"

यह भावनात्मक जुड़ाव केवल एक वस्तु से नहीं है, यह उस संवाद, विचार और संवेदना से है जो किताबों के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संप्रेषित होता है।

4. शैली और संकेत-

क्रिया "बनी रहेंगी" में एक संकल्प झलकता है-यह केवल भविष्य की कल्पना नहीं, एक दृढ़ विश्वास है।

यह शीर्षक जैसे एक वादा करता है कि किताबें नष्ट नहीं होंगी; वे समय की आँच से तपकर और मजबूत होकर बाहर निकलेंगी।

इसमें एक कवित्वपूर्ण लय भी है- शब्दों की गूंज पाठक के मन में देर तक बनी रहती है।

5. समीक्षात्मक दृष्टिकोण-

"बनी रहेंगी किताबें" केवल किताबों के अस्तित्व की बात नहीं कर रहा, यह एक सभ्यतागत चिंतन है। यह वाक्यांश उस मानवीय जिज्ञासा और रचनात्मकता की अमरता की ओर इशारा करता है, जो किताबों के माध्यम से व्यक्त होती रही है।

नोट

जहाँ कुछ लोग मानते हैं कि स्क्रीन और एल्गोरिद्म किताबों की जगह ले लेंगे, वहीं यह शीर्षक निश्चय के साथ कहता है -

"नहीं। किताबें बनी रहेंगी-क्योंकि मनुष्य केवल सूचना नहीं, अनुभव और संवेदना भी चाहता है।"

8.4 पत्र-लेखन - महत्व और उसके विविध रूप

पत्र-लेखन एक प्राचीन और प्रभावशाली संचार विधि है, जो मानवीय भावनाओं, विचारों और अनुभवों को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम है। यह न केवल व्यक्तियों को जोड़ने का कार्य करता है, बल्कि समाज और संस्थाओं के बीच संबंधों को भी प्रगाढ़ बनाता है। पत्रों के माध्यम से न केवल भावनाओं को व्यक्त किया जाता है, बल्कि यह सांस्कृतिक और ऐतिहासिक दस्तावेज के रूप में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

आज के डिजिटल युग में, जब संदेशों का आदान-प्रदान त्वरित और तकनीकी हो गया है, तब भी हस्तलिखित पत्रों की गरिमा और उनके भावनात्मक मूल्य को कोई नहीं नकार सकता। पत्र-लेखन की यह विधा न केवल संवाद का साधन है, बल्कि यह साहित्यिक और सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने का माध्यम भी है।

इस प्रकार, पत्र-लेखन का महत्व और इसकी विविधता हमें यह समझने में मदद करती है कि यह सिर्फ शब्दों का आदान-प्रदान नहीं, बल्कि भावनाओं और संबंधों का सेतु है।

पत्र के प्रकार

पत्र-लेखन को उसके उद्देश्य, शैली और उपयोग के आधार पर विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है। मुख्य रूप से पत्र **दो प्रकार** के होते हैं -

औपचारिक पत्र (Formal Letters)

अनौपचारिक पत्र (Informal Letters)

इनके अलावा, विशेष उद्देश्यों के लिए लिखे जाने वाले पत्र भी शामिल होते हैं।

1. औपचारिक पत्र (Formal Letters)

ये पत्र किसी संस्थान, अधिकारी, या व्यावसायिक संदर्भ में लिखे जाते हैं। इनमें भाषा तटस्थ और विषय-वस्तु पर केंद्रित होती है।

उप-प्रकार

आवेदन पत्र - किसी नौकरी, छुट्टी या अन्य अनुमति के लिए।

शिकायत पत्र - किसी समस्या के समाधान हेतु शिकायत।

प्रस्ताव पत्र - किसी योजना या विचार को प्रस्तुत करने के लिए।

संपादक के नाम पत्र - किसी सामाजिक या सार्वजनिक मुद्दे पर ध्यान आकर्षित करने के लिए।

व्यावसायिक पत्र - व्यापारिक लेन-देन, आदेश, या अनुबंध के लिए।

सरकारी पत्र - किसी सरकारी विभाग या अधिकारी को संबोधित।

2. अनौपचारिक पत्र (Informal Letters)

ये व्यक्तिगत संबंधों के संदर्भ में लिखे जाते हैं, जैसे मित्रों, परिवार के सदस्यों या परिचितों को। इन पत्रों की भाषा आत्मीय और भावनात्मक होती है।

उप-प्रकार

मित्रों को पत्र - व्यक्तिगत अनुभव, विचार या संदेश साझा करने के लिए।

रिश्तेदारों को पत्र - शुभकामनाएँ, हाल-चाल, या निमंत्रण के लिए।

शुभकामना पत्र - जन्मदिन, त्यौहार, या विशेष अवसर पर।

संवेदना पत्र - दुःख या संवेदना प्रकट करने के लिए।

आमंत्रण पत्र - किसी कार्यक्रम या समारोह में भाग लेने के लिए।

3. विशेष पत्र

कुछ पत्र विशिष्ट उद्देश्यों के लिए लिखे जाते हैं।

उप-प्रकार

प्रेम पत्र - प्रेम और भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए।

धन्यवाद पत्र - कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए।

प्रोत्साहन पत्र - किसी को प्रेरित करने के लिए।

शोक पत्र - शोक संवेदना प्रकट करने के लिए।

सिफारिश पत्र - किसी व्यक्ति के समर्थन में।

4. पत्रकारीय पत्र

यह पत्र समाचार पत्रों या पत्रिकाओं के संपादकों को सामाजिक, राजनीतिक, या आर्थिक मुद्दों पर ध्यान आकर्षित करने के उद्देश्य से लिखे जाते हैं।

5. इलेक्ट्रॉनिक पत्र (Email Letters)

डिजिटल युग में ईमेल एक प्रमुख पत्र-लेखन विधा बन गया है।

उप-प्रकार

व्यावसायिक ईमेल - ऑफिस या व्यापार के लिए।

अनौपचारिक ईमेल - दोस्तों और परिवार के लिए।

आधिकारिक ईमेल - किसी औपचारिक निवेदन या सूचना के लिए।

पत्र-लेखन के विभिन्न प्रकार उनके उद्देश्य और शैली के आधार पर भिन्न होते हैं। औपचारिक पत्र तटस्थ और व्यावसायिक होते हैं, जबकि अनौपचारिक पत्र

योग्यता संवर्धन

नोट

भावनात्मक और आत्मीयता से भरे होते हैं। पत्र-लेखन की यह विविधता इसे संवाद का एक समृद्ध और प्रभावशाली माध्यम बनाती है।

औपचारिक पत्रों के उदाहरण

औपचारिक पत्रों की भाषा और शैली शिष्ट और तटस्थ होनी चाहिए। विषय को संक्षेप में और स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करें ताकि पत्र का उद्देश्य प्रभावी ढंग से संप्रेषित हो सके।

1. आवेदन पत्र

विषय- नौकरी के लिए आवेदन

सेवा में,

प्रबंधक,

[कंपनी का नाम],

[पता]

महोदय/महोदया,

सविनय निवेदन है कि मैं आपकी कंपनी में [पद नाम] के लिए आवेदन करना चाहता/चाहती हूँ। मुझे आपके संस्थान में कार्य करने का अवसर प्राप्त हो, यह मेरे लिए गर्व की बात होगी।

मैंने [शैक्षणिक योग्यता] में [संस्थान] से शिक्षा प्राप्त की है और [अनुभव या कौशल] में विशेषज्ञता रखता/रखती हूँ। कृपया मेरे आवेदन पर विचार करें और साक्षात्कार के लिए अवसर प्रदान करें।

सधन्यवाद,

भवदीय,

[आपका नाम]

[संपर्क विवरण]

2. शिकायत पत्र

विषय- जल आपूर्ति की समस्या के समाधान के लिए निवेदन

सेवा में,

नगर निगम अधिकारी,

[शहर का नाम],

[पता]

महोदय,

मैं आपका ध्यान [इलाके का नाम] में जल आपूर्ति की समस्या की ओर दिलाना

चाहता/चाहती हूँ। पिछले [समय अवधि] से यहाँ पानी की आपूर्ति अनियमित हो गई है, जिससे निवासियों को अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है।

कृपया इस समस्या का शीघ्र समाधान करें और नियमित जल आपूर्ति सुनिश्चित करें।

धन्यवाद,

भवदीय,

[आपका नाम]

[पता]

[संपर्क विवरण]

3. संपादक को पत्र

विषय- सार्वजनिक पार्कों की सफाई की ओर ध्यान आकर्षित करना

सेवा में,

संपादक,

[समाचार पत्र का नाम],

[शहर का नाम]

महोदय/महोदया,

मैं आपके समाचार पत्र के माध्यम से संबंधित अधिकारियों का ध्यान सार्वजनिक पार्कों की सफाई की बिगड़ती स्थिति की ओर आकर्षित करना चाहता/चाहती हूँ।

पार्कों की सफाई न होने के कारण बच्चे और बुजुर्ग वहाँ जाने से कतराते हैं। कृपया इस मुद्दे को प्रमुखता से प्रकाशित करें ताकि संबंधित अधिकारी उचित कदम उठा सकें।

सादर,

[आपका नाम]

[पता]

[संपर्क विवरण]

4. व्यावसायिक पत्र

विषय- उत्पाद की गुणवत्ता में कमी की शिकायत

सेवा में,

ग्राहक सेवा प्रबंधक,

[कंपनी का नाम],

[पता]

नोट

महोदय/महोदया,

मैंने आपकी कंपनी से [उत्पाद का नाम] खरीदा था, जिसकी गुणवत्ता अपेक्षा के अनुरूप नहीं है। [समस्या का विवरण दें, जैसे "उत्पाद टूट गया," "कार्य नहीं कर रहा," आदि]।

कृपया इसे बदलने या सुधारने की व्यवस्था करें। मेरी रसीद संख्या [रसीद नंबर] है।

धन्यवाद,

भवदीय,

[राजन राज]

[जोगेश्वरी नागरी, भोपाल, म.प्र.]

5. सरकारी विभाग को पत्र

विषय- सड़क मरम्मत के लिए निवेदन

सेवा में,

कार्यकारी अभियंता,

लोक निर्माण विभाग,

[भोपाल, म.प्र.]

महोदय/महोदया,

मैं आपका ध्यान [इलाके का नाम] की सड़कों की खराब स्थिति की ओर दिलाना चाहता/चाहती हूँ। इन सड़कों पर चलना खतरनाक हो गया है और दुर्घटनाओं का खतरा बढ़ गया है।

आपसे अनुरोध है कि जल्द से जल्द सड़क मरम्मत का कार्य करवाएँ।

सादर,

[आनंद कुमार/कुसुम कुमारी]

[2-ए, जीवन संगम कॉलोनी, भोपाल, म.प्र.]

[मो.....]

अनौपचारिक पत्रों के उदाहरण

अनौपचारिक पत्रों में आत्मीयता और अपनापन झलकता है। भाषा भावनात्मक और सरल होती है। इन पत्रों के माध्यम से रिश्तों को और प्रगाढ़ बनाया जा सकता है।

1. मित्र को पत्र

विषय- छुट्टियों की योजना के बारे में

प्रिय मित्र अजय,
सप्रेम नमस्ते।

आशा है कि तुम और तुम्हारा परिवार कुशलपूर्वक होंगे। मैं यह पत्र तुम्हें यह बताने के लिए लिख रहा हूँ कि इस गर्मी की छुट्टियों में मैं तुम्हारे शहर आने की योजना बना रहा हूँ।

तुम्हारे साथ समय बिताने और वहाँ के पर्यटक स्थलों को देखने का बहुत मन है। कृपया अपनी सुविधा के अनुसार कार्यक्रम तय कर लो। तुम्हारे जवाब का इंतजार रहेगा।

तुम्हारा मित्र,
रवि

2. माता-पिता को पत्र

विषय- परीक्षा के बाद घर आने की सूचना

प्रिय माता-पिता,

सादर चरण स्पर्श।

मैं यहाँ कुशलपूर्वक हूँ और आशा करता हूँ कि आप सभी भी स्वस्थ होंगे। मेरी परीक्षा समाप्त हो गई है और मैं अगले सप्ताह घर आने की योजना बना रहा हूँ।

आपसे मिलकर बहुत अच्छा लगेगा। कृपया मेरे आने तक अपना ध्यान रखें।
आपका बेटा,
राजेश

8.5 सड़क पर दौड़ते ईहा मृग(निबंध) डॉ. श्यामसुन्दर दुबे

आज का युग भौतिकता, उपभोक्तावाद और प्रतिस्पर्धा का युग है। हर व्यक्ति जीवन की "सड़क" पर दौड़ रहा है, लेकिन यह दौड़ किस दिशा में है, इसका जवाब शायद किसी के पास नहीं है। इस निबंध में लेखक ने व्यंग्यात्मक शैली में यह प्रश्न उठाया है कि क्या यह जीवन केवल वस्तुओं और सुख-सुविधाओं की प्राप्ति तक सीमित रह गया है, या फिर इसमें आत्मिक संतोष और वास्तविक खुशी के लिए भी कोई स्थान है?

यह रचना पाठकों को न केवल सोचने पर मजबूर करती है, बल्कि यह भी प्रेरित करती है कि वे अपनी जीवनशैली और मूल्यों पर पुनर्विचार करें। डॉ. दुबे का यह निबंध आधुनिक जीवन की विडंबनाओं का गहन चित्रण करते हुए हमें आत्मनिरीक्षण का एक अवसर प्रदान करता है।

मूल पाठ

सड़क पर दौड़ते ईहामृग

- डॉ. श्यामसुन्दर दुबे

नोट

आज बाजार बंद था। सड़क को आज मैंने जी-भर देखा। फैली-फैली लम्बी-लम्बी सड़क अपने एकांत में गदबदाई-सी थी। पंक्तिबद्ध खड़े अशोक वृक्षों के नीचे मगनमन इस सड़क पर उतरती छाया-प्रकाश की परछाइयों का कौतूहल दिन चढ़ते ही सूरज की उठान के साथ हज़ारहा डिज़ायनों में तब्दील होने लगा था। झरे पत्तों और फूलों की अल्पनाएँ रचाने में मशगूल यह सड़क अपने आसपास से एकदम बेखबर-सी थी। जो इक्के-दुक्के लोग इसे नाप रहे थे, वे भले ही जाने-पहचाने नहीं थे, किन्तु वे सड़क की इस सूनी भव्यता में आज बहुत आत्मीय से लग रहे थे। बोलने-बताने को आतुर वे सड़क के मौन को तोड़ना चाहते थे, किन्तु आज सड़क उनसे बोलने-बताने को तैयार नहीं थी। वह उन्हें अपनी अँकवार में भरकर भेंटना चाहती है। सड़क आज बहुत उत्कंठित है।

बंद के बीच आज वह कई दिनों से भूली-बिसरी अपनी प्रिय कविता को याद कर रही है। जिस कविता को यह याद करना चाहती है, वह कविता उस समय की है, जब इसके आजू-बाजू दुकानों का कोई वजूद नहीं था, जब इसके आसपास की ऋतुओं का निखालिस आवेग गुज़रता था और इस आवेग के साथ यह सड़क हो लेती थी-कभी गुलमोहर की लाली में हँसती-खिलखिलाती हुई, कभी हरसिंगार के छोटे-छोटे फूलों से चौक पूरती हुई, कभी नीम की पकी निंबोलियों की पियरी ओढ़े सकुचाती-शरमाती हुई और कभी धारासार वर्षा में आपाद-मस्तक भीगती निचुड़ती हुई। समय बीतने के साथ ही इसकी कविता इसके हाथ से छूटती गई। भीड़-भाड़ की धकापेल में यह अकेली पड़ती गई। इसके दोनों ओर नक्शे खिंचे। फिर इन नक्शों में दीवारें उठीं।

दीवारों में शो-केस घुसे और इनके बीच बैठ गया बाजार। बाज़ार ने सड़क को क्या-क्या नज़ारे नहीं दिखाए! जो सड़क पर हैं, वे सड़क पर नहीं हैं। सड़क आकाश-पाताल एक कर रही है, पर सड़क दिखती नहीं है। लोग खोड़ सड़क पर दौड़ रहे हैं। रफ्तार ही रफ्तार है। ईहामृग चौकड़ी भर रहे हैं। सब-कुछ पाने की चाह में छलाँग लगाते मंसूबों में पूरी दुनिया सिमट आई है। बाजार की दुनिया में जो है, वह निरंतर 'औरे कछू' हो रहा है। इस 'औरे का को पाने के लिए लोग हैं कि तोप तमंचा से आगे बढ़कर जीवाणु हथियाग तक आ गए हैं। मिसाइल्स की कड़कड़ाहट उस आकाश के वक्ष को विदीर्ण कर रही है, जिसे मेघों की करकाएँ भी कंपित नहीं कर पाईं। उस हवा को सायनाइड गैस में बदल रही हैं, जिसको ज्वालामुखी का उत्ताप भी ताप नहीं दे पाया। आणविक अँगीठियाँ उस धरती के परखच्चे उड़ा रही हैं जो अपन असीम धैर्य के कारण धरा कहलाती है।

जो जल जीवन का पर्याय है, उसम्म घोला जा रहा है फैक्टरियों का अपशिष्ट। नदियाँ बिलबिला रही हैं। मैल-मत्ता और दुर्गन्ध को धोने-पछोरनेवाली नदियाँ स्वयं डूब गई हैं, दलदल के दुस्सहनीग नरक में! आग जो अन्न को पकाती है, शीत को भेदती है और प्रकाश-ऊजा का जो स्रोत है, वह बिछ गई है सुरंग बनकर खेतों में, जहाँ अन्न की जगह मौत उगती है। विस्फोटक प्रकाश चीरता है झाड़ों-झुरमुटों, पंछी-पखेरुओं ढोर-डाँगरों के प्राणों को! हरा-भरा जीवन का उद्यान झुलस जाता है। यह सब इसलिए कि बेतहाशा प्यास बढ़ रही है- रूप की रंग की रस की ग और ध्वनि की प्यास! इस प्यास को बुझानेवाले सारे पदार्थ आहुति में घृत का कार्य कर रहे हैं।

तेल के कुओं से खींचा जा रहा है, पेट्रोल ! जिसकी अंजुरी में जितना आ रहा है, उतना ही कम पड़ रहा है। जिनके पास ताकत है, जो प्रजातांत्रिक मूल्यों की कोतवाली कर रहे हैं, जिनके सामने विश्व की पंचायत सहमी हुई है वे अपनी महाअंजुरी में समूची पृथ्वी का पेट्रोल भरकर समुद्रपायी अगस्त्य को मुद्रा में गटागट पी जाना चाहते हैं। पेट्रोल पर अधिकार हुआ तो संसार को मनचाहा नाच नचाया जा सकता है। संसार की मंडियों पर अपना एकाधिकार स्थापित किया जा सकता है। फिर, पृथ्वी पर भोग-तृष्णा से पीड़ित समस्त ईहामृगों को रेगिस्तानों 'मरीचिकाओं' की झिलमिल परछाइयों में जलाभास को देता है। भोग नहीं भोगे जाते, अपनी आयु ही भोगी जाती है "भोगा न - भुक्ता वयमेव भुक्ता, तृष्णा न जीर्णाः वयमेव जीर्णाः।" शरीर बूढ़ा होता जाता है, और तृष्णा जीवन।

शरीर की सीमाएँ हैं। इसको रबड़ जैसा खींचा तो जा सकता है, किन्तु खींचने पर सीझता जाएगा। वियाग्रा की गोलियाँ कामज्वर के ताप की उत्थितावेशी पार्थिवता को उत्पन्न कर सकती हैं, लेकिन यह विषयज्वर मस्तिष्क की शिराएँ फाड़कर चिर बेहोशी में भी पटक सकता है। स्वाद-तृष्णाजन्य जमुहाई पर जब मुँह खुलता है, तब जीभ पर अंकित सरस्वती अपनी पूजापाटी लेकर महाभिनिष्क्रमण कर जाती है। जाते-जाते वह होंठों पर अपनी रवानगी की सील सिक्का भी लगा जाती है। सरस्वती इस घोर भोगवादी युग में प्यास से पपड़ाए धरातल पर कैसे रह सकती है? सरस्वती तो तब थी जब जन्म लेते ही बच्चे की जीभ पर चंदन चर्चित स्वर्ण-सींक से 'ओह हीं श्रीं' अंकित कर दिया जाता था।

मंत्र-विद्ध जीभ केवल सरस्वती के रस-प्रवाह का अजस्र निर्झर बन जाती थी। अपनी सम्पूर्ण लोलुपताओं को त्यागकर रचती रहती थी बैखरी के प्रतिकल्पी संसार, और कभी नहीं सूखती थी। स्वादेच्छाओं की तपिश में सरस्वती का गुजारा नहीं। वासना से भीगी जीभ पर से इधर सरस्वती उतरी और उधर धरती से सरस्वती नदी गायब हुई। अब उसे तलाशते रहो संगम के किसी कुंड में। कुंड में समाई सरस्वती को सब नहीं पा सकते। इसे वे ही पा सकते हैं, जिनकी जीभ पर अभी भी सरस्वती-मंत्र प्रतिष्ठित है। जीभ, मांसका एक असुंदर लोथड़ा है। यह सरस्वती के संसर्ग से सुंदर बनती है। अन्यथा, दो अंगुल की इसकी लम्बाई-चौड़ाई में संसार को चबाकर अपार स्वाद लेने की महाक्षमता है।

मैं गाँव का आदमी हूँ। कभी-कभार महानगरों के माया-महलों की यात्रा कर लेता हूँ। मैं इन यात्राओं में अपनी लटी-दूबरी देहाती दुनिया की पोटली काँख में दबाए रहता हूँ। इस अजूबे को प्रदर्शित करने के लिए मेरे मित्रगण मुझे आलीशान होटल में ले जाते हैं। मेरा 'लोक' उनका मनोरंजन करता है। इस रमणीक द्वीप के अतिथियों की मोनोटोनस लाइफ में इससे बदलाव-भरी नई स्फूर्ति आती। वे मुझसे 'लोक' पर बतियाते हैं, मुझसे लोकगीत सुनते हैं, और बेशर्मी से दूँस-दूँसकर खाते हैं। वे मानते हैं कि लोकगीत देशी ठर्रा है, इसके स्वाद से पेट का हाज़मा ठीक हो जाता है। व्यंजनों का बाजार.... आकंठ हँसकर खापरदों के भीतर चलते आदमी का अता-पता नहीं चलता कब, कैसे, कहाँ भस्मी भूत हुआ? एक महाविकराल मुख की पैनी दंष्ट्रा में खून-ही-खून लगा है। वह तलाश रही है, नए-नए आखेट स्थल। गाँवों में उसकी मटरगश्ती चल रही है। मसूर, सोयाबीन, कपास की फसल में बढ़ोतरी हुई तो गाँव-के-गाँव उस मुख में समा रहे हैं।

नोट

'लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्ताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ध्वलद्भिः' - वह समस्त लोकों को चाट रहा है-लील रहा है। गाँव में वह घुसा सो गाँव चौपट-चर्पट हुए। गाँव की चर्पट पंजरिका उसके लोकगीतों में गूँजने लगी। मेरी तरफ एक लोकगीत खूब प्रचलित है। "सैयाँ लै दे कर धनिया। मंगाई है करधनिया। मैं तोसों बिरजी।" घरवाली को चाहिए अस्सी तोले की करधनी ! वह मानवती है, बिरजी है। कोपभवन में सिंगार-पटार फेंककर ऐंठी बैठी है। सैयाँ ने उसकी ऐंठ एक ही वाक्य में तोड़ दी "मसूर को बिकने दो। मैं तुझे करधनी के साथ हार भी पहना दूँगा।" मसूर और सोयाबीन से लहलहाते खेत केवल पटवारी की खसरा खतौनी में खेतिहर किसान के नाम हैं। इनके दाने तो बाजार में गिरवी रखे हैं।

मुझे एक संवाद याद आ रहा है। पहलौटी विदाई में एक किसान अपनी पुत्रवधू को मायके से ससुराल विदा करके ले-आ रहा था। रास्ते में जो खेत पड़ते थे वे उस किसान के थे। वह बहू को गर्वपूर्ण लहजे में बता रहा था, "बेटी देखो, यह अपना खेत है।" फिर, और आगे बढ़कर उसने कहा, "देखो बेटी! वह जो मसूर के फूलों से गन्धा रहा है, वह भी अपना ही खेत है।" बहू भी मायके से गुण सीखकर आई थी। दाई से पेट तो छिपा नहीं रहता। जो किसानी उसके मायके में, सो किसानी ससुराल में! उसने श्वसुर की हेकड़ी तोड़ते हुए पूछ लिया, "इन खेतों में से आपका असली खेत कौन-सा है?" श्वसुर, बहू के प्रतिप्रश्न से अचकचा गया- "क्या मतलब ? ये सब खेत मेरे असली खेत हैं!" बहू बोली- "मैं यह जानना चाहती हूँ कि शहर के साहूकार के यहाँ जो खेत गिरवी न रखा हो, वह कौन-सा खेत है ?" किसान की बोलती बंद हो गई। खेत तो सभी गिरवी रखे थे। प्रेमचंद के गोदान का होरी, बाजार की इस किसान खोरू नीयत का जीता जागता व्यक्ति-बिम्ब है। किसान का यह व्यक्ति-बिम्ब सूदखोरी के चौखटे में अब भी ज्यों-का-त्यों फिट है।

ऋणग्रस्तता के केवल कारक बदले हैं। अब किसान ऋण लेने के गलाता चीजें वापरता है। ट्रैक्टर, मोटरसायकिल, फ्रिज, टी.वी. की किश्तें चुकातासड़क जो गाँव तक पहुँचती थी- विकास के लिए, उसने गाँव में बाजार बैठा दिया है। टी.वी. आकाश मार्ग से पंच-इन्द्रियों की भूख बढ़ाने के विज्ञापनों का पंचतंत्र रच रहा है। वह जो गाँव का आदमी छठे छै मासे बाजार की सड़क पर आता था नमक, तेल, गुड़ और कपड़ा लत्ता खरीदने, अब वह भी ईहामृग बना डिपार्टमेंटल स्टोर्स में घुस रहा है। जो उसे टी.वी. दिखाता है उसको भर रहा है क्रयपात्र ट्रॉलियों में। वह रोज इस सड़क पर होता है, जो अव्यक्त भीड़ बनी गहमागहमी पालती है। आज बाजार बंद है तो सड़क सुखी दिख रही है। काश! सड़क पर बाजार न होता ! यह समूचा संसार ही बाजार है, तो बाजार से सड़क कैसे बचेगी ? " यह दुनिया बाजार है, मोदी है भगवान। जाकी जैसी हैसियत, तोल देत सामान।" बाजार का रूपक संतों के काम भी आया है अपने चौहट्ट हाट में उन्होंने बाजार की सड़कों का नक्शा खींचा है। बाजार बंद और सड़क सूनी है। सड़क का सूनापन भीड़ की स्मृतियों का स्वैरालाप है।

व्याख्या -

डॉ. श्यामसुंदर दुबे की यह रचना अपने आप में समकालीन समाज और उसमें व्याप्त आर्थिक, सांस्कृतिक, और पर्यावरणीय विडंबनाओं का चिंतनशील दस्तावेज़

है। लेखक सड़क को एक जीवंत प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करता है, जो समाज की प्रगति और उसके पतन दोनों का प्रतिबिंब है।

मुख्य विषय और प्रतीकात्मकता-

लेखक ने सड़क को केवल भौतिक संरचना न मानकर उसे एक सजीव इकाई के रूप में चित्रित किया है। यह सड़क कभी जीवन के सरल, स्वाभाविक, और प्राकृतिक प्रवाह का हिस्सा थी, लेकिन बाजारवाद के प्रवेश के साथ इसका मौन और सौंदर्य समाप्त हो गया। सड़क और बाजार के बीच का द्वंद्व आधुनिक समाज के उपभोक्तावादी दृष्टिकोण को उजागर करता है, जहाँ प्रत्येक वस्तु और मूल्य 'खरीदने और बेचने' के सिद्धांत पर आधारित हो गए हैं।

ईहामृग का प्रतीक उपयोग, जो मरीचिका के पीछे भागने वाले हिरण को दर्शाता है, मनुष्य की अतृप्त इच्छाओं और भोगवादी प्रवृत्तियों को रेखांकित करता है। यह आधुनिक मनुष्य की असमाप्त लालसा, पदार्थवादी दृष्टिकोण, और संसाधनों के अंधाधुंध दोहन की ओर संकेत करता है।

भाषा और शैली-

लेखक की भाषा चित्रात्मक और दार्शनिक है। वे प्रकृति, पर्यावरण, और मानवीय व्यवहार के जटिल संबंधों को सहजता से उजागर करते हैं। उनकी शैली प्रवाहपूर्ण और प्रतीकात्मक है, जो पाठक को सोचने पर मजबूर करती है।

उदाहरण के लिए, सड़क का "प्रिय कविता को याद करना" एक मार्मिक दृश्य है, जो इस बात का प्रतीक है कि कैसे आधुनिकता ने परंपराओं और प्रकृति से मनुष्य का संबंध तोड़ दिया है। इसी प्रकार, "सरस्वती" का जिक्र हमें यह सोचने पर मजबूर करता है कि भौतिकवाद ने ज्ञान और संस्कृति को किस प्रकार हाशिये पर धकेल दिया है।

समकालीन मुद्दे-

रचना में बाजारवाद, पर्यावरणीय क्षरण, और उपभोक्तावाद जैसे मुद्दों को प्रभावी ढंग से उठाया गया है। लेखक यह दर्शाते हैं कि कैसे मनुष्य की अतृप्त लालसा ने नदियों, जंगलों, और धरती को विनाश के कगार पर पहुँचा दिया है। "सड़क" का मौन और "नदियों का बिलबिलाना" पर्यावरणीय विनाश की मार्मिक अभिव्यक्ति है।

ग्रामीण और शहरी जीवन का अंतर-

ग्रामीण और शहरी जीवन के बीच का अंतर भी इस रचना में गहराई से उभरकर आता है। एक ओर, ग्रामीण जीवन सरलता और स्वाभाविकता का प्रतीक है; वहीं दूसरी ओर, शहरीकरण और बाजारवाद ने इसे भी अपनी चपेट में ले लिया है। किसान और उसके गिरवी रखे खेतों का प्रसंग ग्रामीण भारत की वास्तविकता को प्रभावशाली रूप से उजागर करता है।

नोट

गतिविधि 8.1

पत्र-लेखन के महत्व को समझते हुए, क्या आप पत्र लेखन को अपने जीवन में बनाए रखना चाहते हैं? इसके लिए आपके क्या सुझाव हो सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

☒ अपनी प्रगति जांचें 8.1

- लेखिका के अनुसार डिजिटल युग में भी किताबों का क्या महत्व है?
.....
.....
- किताबें हमारे व्यक्तित्व को किस प्रकार प्रभावित करती हैं?
.....
.....
- ‘बनी रहेंगी किताबें’ आलेख में लेखिका ने किस भाव से पुस्तक प्रेम को प्रस्तुत किया है?
.....
.....
- पत्र लेखन का सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन में क्या स्थान है?
.....
.....
- पत्र के कौन-कौन से प्रमुख प्रकार होते हैं?
.....
.....
- ईमेल जैसे डिजिटल माध्यम के आने के बाद भी पत्र लेखन क्यों प्रासंगिक है?
.....
.....
- ‘ईहा मृग’ शीर्षक का प्रतीकात्मक अर्थ क्या है?
.....
.....
- इस निबंध में लेखक ने किस सामाजिक समस्या को उजागर किया है?
.....
.....
- ‘सड़क पर दौड़ते ईहा मृग’ पाठ से लेखक हमें क्या संदेश देना चाहते हैं?
.....
.....

8.6 सारांश

"संप्रेषण और साहित्य - विचारों की यात्रा" के अंतर्गत तीन महत्वपूर्ण कृतियाँ शामिल हैं, जिनमें संप्रेषण के विभिन्न रूपों और साहित्यिक विधाओं के माध्यम से विचारों के आदान-प्रदान की प्रक्रिया को समझाया गया है।

"बनी रहेंगी किताबें" (आलेख) - डॉ. सुनीता रानी घोष इस आलेख में डॉ. सुनीता रानी घोष ने पुस्तकों के महत्व और उनके अस्तित्व को समय के साथ स्थायित्व की ओर उन्मुख किया है। उनका मानना है कि, चाहे तकनीकी विकास हो या डिजिटल माध्यमों का उदय, किताबों का ज्ञान और उनका सांस्कृतिक महत्व कभी खत्म नहीं होगा। यह आलेख पुस्तकों के महत्व को संरक्षित रखने की आवश्यकता को उजागर करता है।

"पत्र-लेखन- महत्व और उसके विविध रूप" इस लेख में पत्र-लेखन की कला और उसके विभिन्न रूपों की व्याख्या की गई है। पत्र-लेखन, जो पहले संप्रेषण का सबसे प्रमुख साधन था, अब सोशल मीडिया के प्रभाव से बदल चुका है। यह लेख पत्र-लेखन के सामाजिक और व्यक्तिगत महत्व को पुनः स्थापित करने का प्रयास करता है, जिससे हम न केवल विचारों का आदान-प्रदान करते हैं, बल्कि संवेदनाएँ और भावनाएँ भी साझा करते हैं।

"सड़क पर दौड़ते ईहा मृग" (निबंध) - डॉ. श्यामसुंदर दुबे डॉ. श्यामसुंदर दुबे का यह निबंध समाज की आपाधापी, इंसानी संघर्ष और जीवन की जटिलताओं पर आधारित है। निबंध में जीवन की वास्तविकताओं को और समाज की बदलती गति को चित्रित किया गया है। वे दिखाते हैं कि किस तरह समाज में हर कोई किसी न किसी कारण से दौड़ता हुआ सा महसूस करता है और यह संघर्ष उसकी आत्मा में एक गहरी छाप छोड़ता है।

इन कृतियों के माध्यम से संप्रेषण, साहित्य, और समाज के बदलते दृष्टिकोण को उजागर किया गया है। प्रत्येक कृति अलग-अलग दृष्टिकोणों से संप्रेषण और विचारों के आदान-प्रदान के महत्व पर प्रकाश डालती है।

8.7 शब्दावली

क्रम	शब्द	अर्थ
1.	संप्रेषण	किसी विचार, संदेश या जानकारी का दूसरों तक पहुंचाना।
2.	स्थायित्व	स्थिरता या टिकाऊपन।
3.	संवेदनाएँ	भावनाएँ या भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ।
4.	आदान-प्रदान	किसी वस्तु या विचार का एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के बीच आदान-प्रदान।

नोट

5.	आपाधापी	जल्दी-जल्दी, अव्यवस्थित या बिना किसी ठहराव के भाग दौड़।
6.	जटिलताएँ	कठिनाइयाँ, उलझनें या समस्याएँ।
7.	संवेदनात्मक	भावनात्मक, संवेदनाओं से संबंधित।
8.	चित्रित	वर्णन या चित्रण करना, किसी चीज को शब्दों के माध्यम से प्रस्तुत करना।
9.	दृष्टिकोण	किसी विषय या घटना को देखने का तरीका या नजरिया।
10.	आधुनिकता	वर्तमान समय के अनुरूप होना, नवीनतम प्रवृत्तियों का अनुसरण करना।

8.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर

- लेखिका के अनुसार डिजिटल युग में भी किताबें ज्ञान, संस्कार और सोच की गहराई के लिए आवश्यक हैं; ये हमारे बौद्धिक विकास की नींव हैं।
- किताबें विचारशीलता, कल्पनाशीलता और आत्मचिंतन को बढ़ावा देती हैं, जिससे व्यक्ति का मानसिक और नैतिक विकास होता है।
- लेखिका ने पुस्तक प्रेम को बहुत भावुकता और श्रद्धा के साथ प्रस्तुत किया है, मानो किताबें जीवन की अभिन्न साथी हों।
- पत्र लेखन विचारों की अभिव्यक्ति, भावनाओं के संप्रेषण और संवाद की प्राचीन किंतु प्रभावी विधा है। यह व्यक्ति को सामाजिक रूप से जोड़ता है।
- मुख्य रूप से पत्र दो प्रकार के होते हैं - औपचारिक (Formal) और अनौपचारिक (Informal)। इसके अलावा व्यक्तिगत, व्यावसायिक, आवेदन आदि रूप भी होते हैं।
- पत्र लेखन आज भी प्रासंगिक है क्योंकि यह व्यक्तित्व की गरिमा, भाषा की शुद्धता और अभिव्यक्ति की आत्मीयता बनाए रखता है।
- ‘ईहा मृग’ का प्रतीकात्मक अर्थ है - वह व्यक्ति जो तात्कालिक सुखों, दिखावे और मृगतृष्णा में उलझा हुआ है।
- लेखक ने उपभोक्तावाद, भौतिक दौड़, और आधुनिक जीवन की ऊपरी चमक-दमक की आलोचना की है।
- लेखक हमें यह संदेश देना चाहते हैं कि हमें सतही दिखावे से हटकर जीवन के वास्तविक मूल्यों और आत्मिक संतुलन की ओर लौटना चाहिए।

8.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) - 1	http://books.aisectonline.com/User/UnitUrls?unitId=14	

8.10 संदर्भ

1. डॉ. सुनीता रानी घोष- "बनी रहेंगी किताबें"
2. डॉ. श्यामसुंदर दुबे - "सड़क पर दौड़ते ईहा मृग"
3. पारसनाथ यादव - "पत्र-लेखन - महत्व और उसके विविध रूप"
4. शिवपूजन सहाय - "साहित्य और समाज"
5. रामचंद्र शुक्ल - "हिंदी साहित्य का इतिहास"
6. विजय बहल - "आधुनिक साहित्य में संप्रेषण की प्रक्रिया"

8.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ) -

1. 'बनी रहेंगी किताबें' आलेख का मुख्य उद्देश्य क्या है?
 - A) पुस्तकें सस्ती कैसे हों
 - B) डिजिटल माध्यम की आलोचना
 - C) पुस्तकों के महत्व को उजागर करना
 - D) पुस्तक मेले का विवरण देना
2. डॉ. सुनीता रानी घोष का मानना है कि पुस्तकों का स्थान कौन नहीं ले सकता?
 - A) शिक्षक
 - B) लाइब्रेरी
 - C) डिजिटल माध्यम
 - D) पाठ्यक्रम
3. पत्र लेखन का एक प्रमुख उद्देश्य क्या होता है?
 - A) मनोरंजन करना
 - B) संबंधों को बनाए रखना
 - C) विज्ञापन करना
 - D) कहानी लिखना
4. 'सड़क पर दौड़ते ईहा मृग' निबंध का मुख्य स्वर कैसा है?
 - A) गंभीर और क्रोधित
 - B) प्रेरणादायक
 - C) व्यंग्यात्मक और चिंतनपूर्ण
 - D) ऐतिहासिक

नोट

5. डॉ. श्यामसुंदर दुबे किस माध्यम से समाज की भागदौड़ पर टिप्पणी करते हैं?

- | | |
|---------------------|------------|
| A) रिपोर्टिंग | B) शोध लेख |
| C) निबंध और व्यंग्य | D) कविता |

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

1. **C) पुस्तकों के महत्व को उजागर करना** – इस आलेख में लेखक ने यह स्पष्ट किया है कि बदलती तकनीकी दुनिया में भी किताबों की स्थायी और गहन उपयोगिता बनी रहेगी। वे ज्ञान, अनुभव और विचार का अमिट भंडार होती हैं जो डिजिटल माध्यम की क्षणिकता से कहीं अधिक स्थायी हैं।
2. **C) डिजिटल माध्यम** – डॉ. घोष का मत है कि यद्यपि डिजिटल माध्यम सुविधाजनक हैं, फिर भी वे पुस्तकों की आत्मीयता, स्थायित्व और चिंतनशीलता का स्थान नहीं ले सकते। किताबें न केवल पढ़ने का माध्यम हैं, बल्कि वे भावनात्मक और वैचारिक संवाद का स्रोत भी हैं।
3. **B) संबंधों को बनाए रखना** – पत्र लेखन का प्रमुख उद्देश्य है व्यक्तियों के बीच संवाद स्थापित करना और संबंधों को जीवंत बनाए रखना। यह व्यक्तिगत, सामाजिक और औपचारिक संबंधों को बनाए रखने का प्राचीन और प्रभावशाली साधन है।
4. **C) व्यंग्यात्मक और चिंतनपूर्ण** – यह निबंध आधुनिक मानव के सतही जीवन और खोखली आकांक्षाओं पर तीखा व्यंग्य करता है, साथ ही पाठक को आत्ममंथन के लिए भी प्रेरित करता है।
5. **C) निबंध और व्यंग्य** – लेखक समाज की भागदौड़, लालसा और भ्रम को निबंधात्मक शैली तथा व्यंग्य के माध्यम से उजागर करते हैं, जिससे पाठक इन परिस्थितियों की विडंबना को गहराई से समझ सके।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. 'बनी रहेंगी किताबें' आलेख में लेखक ने पुस्तकों को किसका प्रतीक माना है और क्यों?
2. डिजिटल माध्यम के बावजूद आज भी पुस्तकों का क्या महत्त्व बना हुआ है?
3. पत्र लेखन में विचारों की अभिव्यक्ति किस रूप में होती है?
4. 'सड़क पर दौड़ते ईहा मृग' निबंध में लेखक ने आधुनिक जीवन की तुलना किस प्रतीक से की है और क्यों?
5. पत्रों के कौन-कौन से प्रमुख प्रकार होते हैं और उनका उपयोग कहाँ किया जाता है?

Part - 2**C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)**

1. 'बनी रहेंगी किताबें' आलेख में लेखक ने पुस्तकों के महत्त्व को उजागर करते हुए डिजिटल माध्यम से उसकी तुलना कैसे की है? इन दोनों के बीच क्या मूलभूत अंतर है?
2. पत्र लेखन के विभिन्न प्रकार क्या हैं, और औपचारिक एवं अनौपचारिक पत्रों में क्या प्रमुख भेद होते हैं? दोनों के प्रयोग का सामाजिक महत्त्व स्पष्ट कीजिए।

Part - 3**D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)**

1. 'सड़क पर दौड़ते ईहा मृग' निबंध में आधुनिक मानव जीवन की किस प्रवृत्ति की आलोचना की गई है? लेखक ने इस विषय को किस प्रतीक के माध्यम से प्रस्तुत किया है और पाठकों के लिए इसका क्या संदेश है?
2. डॉ. सुनीता रानी घोष, डॉ. श्यामसुंदर दुबे और पत्र लेखन — इन तीनों पाठों के माध्यम से यह स्पष्ट कीजिए कि ज्ञान, संचार और आधुनिक जीवन की गति किस प्रकार एक-दूसरे से संबंधित हैं? इनके आपसी संबंधों को उदाहरण सहित प्रस्तुत कीजिए।



आईसेक्ट विश्वविद्यालय समूह

एस. एल. एम. प्रतिक्रिया प्रपत्र (फीडबैक फॉर्म)

कार्यक्रम : _____
पाठ्यक्रम : _____
ब्लॉक : _____
इकाई : _____

प्रिय छात्र,

इस खंड की इकाइयों का अध्ययन करते समय, आपको पाठ के कुछ हिस्सों को समझने में कठिनाई हो सकती है। हम पाठ्यक्रम को बेहतर बनाने के लिए आपकी कठिनाइयों और सुझावों को जानना चाहते हैं। इसलिए, हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप इस ब्लॉक से संबंधित निम्नलिखित प्रश्नावली को भरकर हमें भेजें। यदि आपको दिया गया स्थान अपर्याप्त लगता है, तो कृपया एक अलग शीट का उपयोग करें।

कृपया मेल करें aisectcontent@aisect.org / ऑनलाइन फॉर्म भरने के लिए QR को स्कैन करें :

प्रश्नावली

- नाम : _____
- नामांकन क्र :

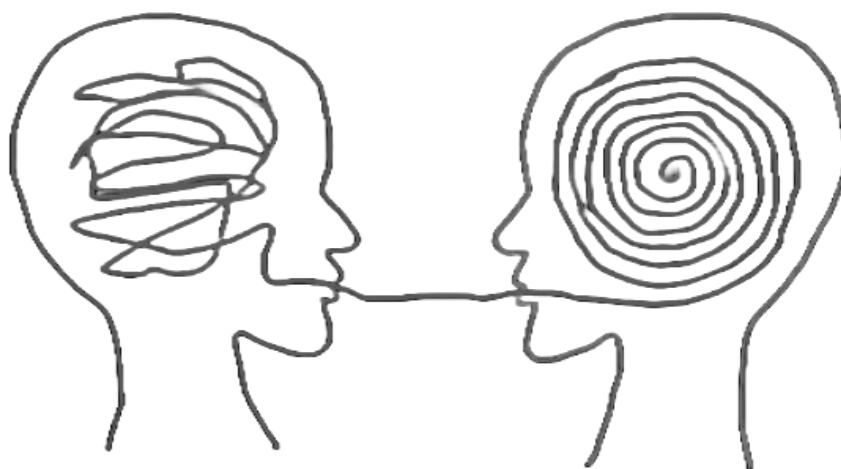
--	--	--	--	--	--	--	--	--	--	--	--
- इकाईयों का अध्ययन करने के लिये आपको कितने घंटों की आवश्यकता थी? :

--
- कृपया इस ब्लॉक को पढ़ने के आधार पर निम्नलिखित मदों पर अपनी प्रतिक्रिया दें:

अवयव	उत्कृष्ट	बहुत अच्छा	अच्छा	खराब	विशिष्ट उदाहरण दें (यदि खराब हो)
प्रस्तुति गुणवत्ता					
भाषा और शैली					
रेखाकन					
प्रयुक्त (आरेख, तालिकाएं, आदि)					
संकल्पनात्मक स्पष्टता					
अपनी प्रगति जाँचें प्रश्न					
सुझाए गए पठन – OER					

5. अन्य सुझाव :

खंड - 5	अनुभव, अभिव्यक्ति और संवाद	193-240
इकाई – 9	अनुभव, आत्मबोध और भाषा - साहित्यिक विमर्श की त्रयी	195
इकाई - 10	संवाद, लेखन और भावनाओं का संप्रेषण - एक समग्र दृष्टिकोण	219



अनुभव, अभिव्यक्ति और संवाद के इस खंड में विद्यार्थियों को यह समझाने का प्रयास किया गया है कि कैसे व्यक्ति अपने अनुभवों को भाषा के माध्यम से व्यक्त कर समाज और राष्ट्र निर्माण में भागीदारी निभा सकता है। आत्मबोध, आत्मनिरीक्षण और सामाजिक अनुभवों को साहित्यिक रचनाओं, संवादों और लेखन की विभिन्न शैलियों द्वारा प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करने की विधि सिखाई जाएगी। डायरी लेखन, संस्मरण, पत्राचार, रिपोर्टाज और संवाद जैसे साहित्यिक रूपों के माध्यम से विचारों को क्रमबद्ध, स्पष्ट और प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने का अभ्यास कराया जाएगा। विद्यार्थियों में संवेदनशीलता, सहानुभूति, आत्मविश्वास और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण को विकसित करना इस खंड का मुख्य उद्देश्य है। साथ ही संवाद में formal और informal शैली के अंतर, भावनाओं का संप्रेषण, एवं विचार संप्रेषण की प्रक्रिया को उदाहरणों सहित समझाया जाएगा।

इकाई - 9

अनुभव, आत्मबोध और भाषा - साहित्यिक विमर्श त्रयी

इकाई की रूपरेखा

- 9.1 परिचय
- 9.2 उद्देश्य
- 9.3 योग की शक्ति (डायरी) - डॉ. हरिवंश राय बच्चन
- 9.4 कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता (साक्षात्कार) - भाषाविद डॉ. हरिदेव
- 9.5 नीग्रो सैनिक से भेंट (यात्रा संस्मरण) - डॉ. देवेन्द्र सत्याथी
- 9.6 सारांश
- 9.7 शब्दावली
- 9.8 अपनी प्रगति जांचे - संभावित उत्तर
- 9.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER
- 9.10 संदर्भ
- 9.11 अभ्यास

9.1 परिचय

“अनुभव, आत्मबोध और भाषा- साहित्यिक विमर्श” एक साहित्यिक संकलन है जिसमें तीन विभिन्न प्रकार की कृतियाँ शामिल हैं, जिनमें डायरी, साक्षात्कार और यात्रा संस्मरण की विधाएँ उपयोग की गई हैं। इन कृतियों के माध्यम से लेखकों ने व्यक्तिगत अनुभवों, गहरे आत्मबोध और भाषा के माध्यम से जीवन की जटिलताओं और मानवता की सुंदरता को उजागर किया है।

इस संकलन में शामिल प्रमुख कृतियाँ हैं -

योग की शक्ति (डायरी) - यह रचना डॉ. हरिवंश राय बच्चन द्वारा लिखी गई है, जिसमें वे अपने योग के अनुभवों और आत्मशक्ति की यात्रा को दर्शाते हैं। उनके विचारों में योग के द्वारा आत्मबोध और मानसिक शांति की प्राप्ति की महत्वपूर्ण भूमिका है।

कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता (साक्षात्कार) - यह साक्षात्कार प्रसिद्ध भाषाविद डॉ. हरदेव बाहरी से लिया गया है, जिसमें वे भाषाशास्त्र और

नोट

शब्दकोश निर्माण के कठिन कार्यों के बारे में अपने अनुभव साझा करते हैं। यह साक्षात्कार भाषा के प्रति उनके गहरे समर्पण और उसके सही उपयोग की आवश्यकता को दर्शाता है।

नीग्रो सैनिक से भेंट (यात्रा संस्मरण) - यह यात्रा संस्मरण डॉ. देवेन्द्र सत्यार्थी द्वारा लिखा गया है, जिसमें वे एक नीग्रो सैनिक से हुए मिलन को व्यक्त करते हैं। इस संस्मरण में मानवीय करुणा, रंगभेद, और वैश्विक संघर्षों का सजीव चित्रण है।

9.2 उद्देश्य

1. आध्यात्मिक अनुभव की गहराई को समझना।
2. भाषा के सही उपयोग और शब्दकोश निर्माण की जटिलताओं के बारे में जानकारी प्रदान करना।
3. सामाजिक और सांस्कृतिक संवेदनशीलता उजागर करना।
4. आत्मबोध और व्यक्तिगत विकास की दिशा में मार्गदर्शन करना।
5. मानवता और वैश्विक दृष्टिकोण को बढ़ावा देना।

9.3 योग की शक्ति (डायरी) - डॉ. हरिवंश राय बच्चन

मुख्य पाठ -

शनिवार, 31 मई, 1952

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद का पत्र मिला। दूसरी बार राष्ट्रपति चुने जाने पर है। उन्हें बधाई का पत्र लिखा था।

दिन में यू.ला. में Aphorisms of yoga' पढ़ता रहा। इसके पूर्व मैंने संस्कृत या भाषा के किसी अनुवाद द्वारा भी योग-सूत्र नहीं पढ़ा था। फिर भी मुझे लगा कि जो कुछ इसमें पढ़ रहा हूँ यह सब मैं पहले सुन चुका हूँ। जहाँ भी योग की कोई चर्चा हो पतंजलि के योग सूत्र का आधार लिए बिना नहीं हो सकती। कानों में पड़ा सा लगा, योगश्चिवावृध- निरोधः जब पढ़ा Yoga is controlling the activities of the mind. चित के तीन गुण सत, रज, तम का जिक्र भी भारतीय साहित्य-दर्शन में बार-बार आता है। फिर चित्त की क्रियाओं का वर्णन है। यहाँ तक योग की दृष्टि मनोवैज्ञानिक चित्त की क्रियाओं के विश्लेषण पर समाप्त नहीं होती वह उन्हें अनुशासित, संयमित और वशीभूत करने की विधि भी खोजती है। उन्हें वश में करने के दो उपाय हैं अभ्यास और अनासक्ति (detachment) चित्तवृत्तियों पर अधिकार की भी कई श्रेणियों हैं- संप्रज्ञात समाधि (conscious) सुषुप्त समाधि (unconscious) और पूर्ण समाधि (above both)। चित्त का जो संबंध मस्तिष्क (brain) और मस्तिष्क का जो संबंध शरीर से है, उसे भी माना और जाना गया है। 'हठयोग' शरीर पर अधिकार करना सिखाता है और जब तक चित्त की सीमाएँ नहीं पहुँचती, वह अपना काम करता जाता है।

चित्त के सूक्ष्म क्षेत्र में राजयोग यह भार अपने ऊपर लेता है। राजयोग की समस्या यह है कि कैसे वह व्यक्ति के परिसीमित चित्त को उठाकर सर्वव्यापी के अनन्त चित्त में मिला दे। परिसीमन चित्त में अनन्त बनने की क्षमता है, यह पहले ही मान लिया गया है, वर्ना प्रयत्न का कोई अर्थ न होता। योग इसे मानकर चलता है कि कोई ऐसी वस्तु नहीं जिस पर चित्त हावी न हो जाए। चित्त को वश में करो तो सब कुछ तुम्हारे वश में हो सकता है। इस अवस्था को प्राप्त करने की आठ सीढ़ियों है - यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि। पहली पाँच सीढ़ियाँ बाद की तीन सीढ़ियों की तैयारियाँ हैं। यम, नियम आदि से क्या तात्पर्य है इसे विस्तार से बताया गया है। 'धारणा' है किसी वस्तु पर चित्त को स्थिर करना। 'ध्यान' है चित्त और वस्तु का एक हो जाना 'समाधि' है, जहाँ चित्त और वस्तु के एक होने की चेतना भी न रहे - केवल आत्म-चेतना रह जाए।

जब योगी का चित्त इतना सध जाता है कि उसे किसी भी वस्तु पर स्थिर करना सरल हो जाए, अर्थात् 'धारणा' की अवस्था से। तब उसमें शक्ति का आना आरम्भ हो जाता है और 'समाधि' की अवस्था तक पहुँचकर, जब वह अनंत चित्त से अपने को एक कर देता है, वह सर्वशक्तिमान हो जाता है। धारणा सिद्धि से वह भूत, भविष्य, वर्तमान को सामने फैले हुए नक्शे की तरह देखता है, हवा में उड़ सकता है, देखते-देखते गायब हो सकता है, अपने शरीर को छोड़ दूसरे शरीर में प्रविष्ट हो सकता है, दूर से दूर की वस्तु ला सकता है, जो साधारण दृष्टि से अदृश्य है उसको देख सकता है।

आग पर चलना तो उसके लिए मामूली बात है, कहने का तात्पर्य है, उसे आठों सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं, और कोई ऐसा काम नहीं जो वह चाहे तो न कर सके। उसे उस पर अपने चित्त को स्थिर भर करने की देर होती है। ऐसी शक्तियों को प्राप्त कर उनका प्रदर्शन करनेवाला योगी पूर्ण समाधि के पहले ही रुक जाता है। इतना ही नहीं, यदि वह उनसे धन-कीर्ति कमाने अथवा उनका दुरुपयोग करने लगता है तो उसका पतन भी हो जाता है और उसकी शक्तियाँ समाप्त हो जाती हैं। सच्चा योगी इन प्रलोभनों पर रुकता नहीं, क्योंकि पूर्ण समाधि में आने का जो सुख और आनन्द है उसकी तुलना में ये प्रदर्शनकारी शक्तियाँ कुछ भी नहीं हैं। सच्चे योगी को जब ये शक्तियाँ प्राप्त होने लगती हैं तब वह उन पर रुके बगैर उस अन्तिम अवस्था को प्राप्त करने के लिए आतुर हो उठता है, जिसके आगे कोई सुख एवं आनन्द नहीं है।

योगियों के ऐसी शक्तियों के किस्से मैंने लड़कपन से सुने हैं, अन्य धर्मों के नबी और फरिश्तों के ऐसे करिश्मों की कहानियाँ भी कम नहीं हैं। ईसा का मुर्दों को जिलाना, बीमारों को अच्छा करना, देखते-देखते गायब होना, इनसे पश्चिमी संसार भी परिचित है। शक्तियों को खोने का उदाहरण सैमसन की कथा है। बालों बहाना मात्र था। उन्हें पश्चिम में miracle या चमत्कार की संज्ञा दी गई है।

उन्हें संभव कर सकने वाले, भगवान का कोई विशेष वरदान अथवा स्वर्ग का कोई खास आशीर्वाद लेकर आए थे। अब वे नहीं आते। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के लोग पिछले चमत्कारों को भी मानने के लिए तैयार नहीं। जिसने ये सब बातें लिखी वह मस्तिष्क-विकार से पीड़ित था अथवा उसने झूठ लिखा।

नोट

ऐसी शक्तियों में सहसा विश्वास करने को मस्तिष्क तैयार नहीं होता। पर चित्त को एकाग्र और स्थिर करने से आज भी कुछ ऐसी बातें की जा सकती हैं, जो साधारण मनुष्य के लिए असम्भव हैं। ईट्स ने अपने जीवन-चरित में लिखा है कि एक बार लंदन में वे किसी सहभोज की मेज पर बैठे थे। एक आदमी उसी मेज पर बैठा हुआ कुछ बात कर रहा था। ईट्स ने एक परचे पर लिखा कि पाँच मिनट के बाद यह व्यक्ति आग लगने का जिक्र करेगा। उस परचे को उन्होंने पास में बैठे एक मित्र की प्लेट के नीचे खिसका दिया, आग का ध्यान करना शुरू किया और उसे उस व्यक्ति की वार्ता से मन में सम्बद्ध किया।

पाँच मिनट के बाद वह व्यक्ति सचमुच आग पर बात करने लगा। चित्त की इस शक्ति को मान लेना या इसका प्रयोग करना कठिन नहीं है। अगर किसी का चित्त पर वश हो तो वह कुछ इसी प्रकार का काम करके देख सकता है। क्या पतंजलि ने इसी शक्ति के अंतिम विकास अथवा चरम सीमा की कल्पना की है? यह तो निश्चित है कि पतंजलि ने चित्त की शक्तियों की सीमा नहीं मानी। क्या उनकी सीमा है? यदि नहीं है तो तर्क से जो परिणाम उन्होंने निकाले हैं वे गलत नहीं हैं। अगर सीमा है तो कहाँ, इसे अभी योरोप का मनोविज्ञान नहीं बता सका। उसके प्रयोगों ने सदा चित्त की अत्यधिक शक्तियों का सबूत दिया है।

दूसरी बात मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण भौतिक जगत् के साथ किसी अभौतिक शक्ति की दखलन्दाजी नहीं बर्दाश्त कर सकता। क्या ऐसा भी संभव नहीं कि योगी का यह सारा व्यापार केवल चित्त के जगत् में ही संभव हो? उदाहरणार्थ योगी के हवा में उड़ने को ले लें। योगी को बिना सचमुच उड़े हुए भी ऐसा अनुभव हो सका है कि वह हवा में उड़ रहा है। मैं कमरे में बैठे कल्पना कर सकता हूँ कि मैं कैम्ब्रिज के ऊपर उड़ रहा हूँ और ऊपर से, जैसे हवाई जहाज से चीजें दिखायी देती हैं, देख रहा हूँ। मेरी कल्पना अधिक सशक्त हो तो शायद इस प्रकार के अनुभव का मुझे आनन्द भी आने लगे, पर सारे समय मेरा शरीर कुर्सी पर ही आसीन रहेगा। योगी का अनुभव इसी श्रेणी का, या इससे अधिक गहरा हो सकता है। यह दूसरों को ऐसा दिखला भी सकता है। मिस्मेरिज़्म ने यह सिद्ध कर दिया है कि दूसरों के चित्त पर अंशतः अधिकार पाना संभव है। दूसरों की दृष्टि को इस प्रकार बेधा जा सकता है कि वे देखें कि योगी हवा में उड़ रहा है, जबकि सारे समय योगी जमीन पर ही बैठा हो। यदि केवल चित्तजगत् में इन शक्तियों का प्रदर्शन सीमित हो तो संभव है कि इन पर विश्वास करना मनोवैज्ञानिक के लिए भी कठिन न हो। 'दृष्टि बना योग' के लिए 'डिठबँधी' शब्द अब भी भारत में प्रचलित है।

पर सबसे बड़ी बात जो 'पातंजलि' में इन शक्तियों के बारे में कही गई है वह यह है कि वे 'करिश्मा' नहीं हैं, 'चमत्कार' नहीं हैं, उपतंबसम नहीं हैं। वे स्वाभाविक शक्तियाँ हैं। उनके पीछे जादू नहीं है, फरिश्ते और देवता नहीं हैं; भगवान जिस अर्थ में उन्हें समझा जाता है, वे नहीं हैं। उनके पीछे है मनुष्य का निर्विकार चित्त, शुद्ध चित्त और शुद्ध चित्त को किसी भी वस्तु-विषय पर स्थिर एकाग्र करने की शक्ति। उनको आप असंभव उपादान कह सकते हैं, पर यदि वे संभव हों तो परिणाम जो निकाला गया है, वही निकल सकता है। योग-शास्त्र जादू की पुस्तक नहीं, गणित की पुस्तक है, विज्ञान की पुस्तक है। ऐसी शक्ति का प्रदर्शन देखकर किसी को आश्चर्य क्यों हो? हाँ, आश्चर्य इस पर हो सकता

है कि मनुष्य अपने चित्त और उसे एकाग्र रखने की शक्ति पर कितना अधिकार पा गया है। शेष उसका तार्किक परिणाम है। जब तक मनोविज्ञान चित्त की सीमा निर्धारित नहीं करता, जब तक कोई चित्त की शुद्धता और एकाग्रता का दावा न कर लें, तब तक इन शक्तियों को संदेह की दृष्टि से देखना अन्याय होगा। एक क्षण के लिए यह मान भी लें कि यह असंभव है तो भी यह आदर्श अवस्था की कल्पना है; और इससे चित्त को शुद्धता और एकाग्रता की दिशा में बढ़ने की प्रेरणा मिलती है। आधुनिक जीवन की चहल-पहल के साथ इसे पाना असंभव है। जब जीवन अपेक्षया शान्त था, तब भी ऋषियों ने इस प्रकार की साधना के लिए हिमालय की कंदराओं को खोजा था। कोई भी इन शक्तियों में विश्वास कर सकता है, क्योंकि इसके लिए किसी को अपने विज्ञान-संस्कृत-मस्तिष्क पर दबाव डालकर समझौता करने की जरूरत नहीं।

'पतंजलि' पर पढ़ना उपन्यास पढ़ना नहीं। शाम को दिमाग बिल्कुल थक गया था। थोड़ी देर लेटा रहा, पर मस्तिष्क उसी की समस्या में उलझा रहा। किसी गंभीर अध्ययन के योग्य नहीं रह गया था। दत्त की एक पुस्तक पड़ी थी, The University Hand Book उसी को देखते-देखते झपकी आ गयी।

प्रसंग और संदर्भ

यह अंश 31 मई, 1952 का है—एक साधारण दिन, जब लेखक (संभवतः किसी साहित्यिक या दार्शनिक व्यक्तित्व की डायरी) ने पतंजलि के *Aphorisms of Yoga* (योगसूत्र) का अध्ययन किया। यह पढ़ाई कोई औपचारिक अकादमिक अध्ययन नहीं, बल्कि एक *आत्म-प्रेरित मनन* है। लेखक पहले इस ग्रंथ से परिचित नहीं था, पर जैसे-जैसे पढ़ता गया, उसे लगा कि वह पहले से इन विचारों को किसी रूप में सुन या समझ चुका है।

योग की अंतर्दृष्टि- मनोविज्ञान से आध्यात्मिकता तक

लेखक योगसूत्रों की तुलना मनोविज्ञान से करता है— चित्तवृत्तियों, उनकी प्रकृति, अभ्यास और अनासक्ति से लेकर समाधि तक की चर्चा करता है। यह स्पष्ट है कि योग केवल एक *मनोवैज्ञानिक अभ्यास नहीं*, बल्कि चित्त को एक ऐसी स्थिति में ले जाने का प्रयास है जहाँ वह **व्यक्तिगत सीमाओं को लांघकर सार्वभौमिक चेतना से एक हो जाता है।**

चित्तवृत्तियों के अनुशासन के दो उपाय - अभ्यास और अनासक्ति।

आठ अंग योग - यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि।

‘**ध्यान**’ और ‘**समाधि**’ की व्याख्या मन और आत्मा के गहनतम अनुभवों तक पहुँचती है।

योग की सिद्धियाँ- चमत्कार या चित्त की शक्ति?

यहाँ लेखक **योग की सिद्धियों** पर बहुत ही संतुलित दृष्टिकोण अपनाता है। वह कहानियों—जैसे हवा में उड़ना, भविष्य देखना, शरीर का रूपांतरण आदि—का वर्णन करता है, पर उन्हें अंध-श्रद्धा की दृष्टि से नहीं, **चित्त की संभावनाओं की वैज्ञानिक पड़ताल** के रूप में देखता है।

योग्यता संवर्धन

नोट

वह कहता है कि योगी की इन शक्तियों को *पश्चिम में "चमत्कार" (miracle)* कहा गया, परंतु पतंजलि ने इन्हें **स्वाभाविक मानवीय क्षमताओं** के रूप में देखा है।

मिस्मेरिज़्म, ईट्स का उदाहरण, और मानसिक एकाग्रता के प्रयोग इस बात के प्रमाण हैं कि **चित्त की शक्ति** को नकारा नहीं जा सकता।

तार्किकता और संशय की संतुलित अभिव्यक्ति

लेखक किसी अंधविश्वास में नहीं बहता—वह यह स्वीकार करता है कि योगी का उड़ना, अदृश्य होना आदि अनुभव *शारीरिक नहीं भी हो सकते, पर मानसिक रूप से सत्य हो सकते हैं*।

यह विश्लेषण अत्यंत आधुनिक मनोवैज्ञानिक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया गया है। लेखक यह भी स्वीकारता है कि भले ही ये बातें पूर्णतया संभव न हों, इनका आदर्श मात्र होना भी मनुष्य को आत्मशुद्धि और एकाग्रता की प्रेरणा देता है।

शैली और शिल्प की विशेषताएँ

आत्मकथात्मक शैली - जैसे कोई बुद्धिजीवी पाठक स्वयं से संवाद कर रहा हो।
भाषा का संतुलन - कहीं गंभीर दार्शनिक विश्लेषण, तो कहीं सरल, स्पष्ट विवरण।
दृष्टिकोण - तार्किक, उदात्त, संशयी लेकिन आस्थावान।

आध्यात्मिकता और आधुनिकता का सेतु

यह पाठ भारतीय योगशास्त्र और पश्चिमी मनोविज्ञान के बीच एक **सेतु** का कार्य करता है। लेखक न तो प्राचीन परंपरा को खारिज करता है, न ही अंध स्वीकार करता है। वह आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ योग के अध्यात्मिक आयामों का **तार्किक समन्वय** करता है।

यह अंश न केवल *पतंजलि के योगदर्शन* का सार देता है, बल्कि उसे **समकालीन वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी तौलता है**। यह आलेख एक ओर जहाँ योग की **असीम संभावनाओं** की बात करता है, वहीं दूसरी ओर **संशय और विवेक** का पथ नहीं छोड़ता। इसी कारण यह केवल धार्मिक या आध्यात्मिक चिंतन नहीं, बल्कि **आधुनिक बौद्धिक विमर्श** का भी उत्कृष्ट उदाहरण बन जाता है।

9.4 कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता (साक्षात्कार) - भाषाविद डॉ. हरिदेव

मुख्य पाठ -

भाषाविज्ञान पर बत्तीस ग्रंथ तथा सोलह कोशों के रचयिता डॉ. हरदेव बाहरी इस वर्ष पचासी वर्ष के हो गए हैं। अपनी इस लंबी जीवन-यात्रा में उन्होंने हिंदी भाषा की रीढ़ को मजबूत किया है। इस उम्र में भी कोश कार्य में सक्रिय डॉ. हरदेव

बाहरी से हिंदी के कोश और भाषाविज्ञान की स्थिति पर प्रोफेसर त्रिभुवननाथ शुक्ल की विस्तृत बातचीत..

प्रो. शुक्ल - भारत के विश्वविद्यालयों में भाषाविज्ञान के अध्ययन-अध्यापन की स्थिति आपको कैसी लगती है ?

डॉ. बाहरी - भाषाविज्ञान के संबंध में मेरा अनुभव बहुत संतोषजनक और उत्साहवर्धक नहीं है। उत्तर भारत के विश्वविद्यालयों में भाषाविज्ञान का स्थान अत्यंत गौण है। कुछ विश्वविद्यालयों में इसका एक ऐच्छिक प्रश्न-पत्र है, इस विषय को लेने वालों की संख्या नगण्य है, जैसे आगरा में। कुछ ही विश्वविद्यालय ऐसे हैं जहाँ भाषाविज्ञान एक स्वतंत्र विषय है। किंतु इस विषय को लेने वालों की संख्या वहाँ भी नगण्य ही है, जैसे सागर और रायपुर विश्वविद्यालयों में.....।

यूरोप और अमरीका में साहित्य के विद्यार्थी के लिए भाषाविज्ञान एक अनिवार्य विषय है, क्योंकि भाषाविज्ञान की कुछ शाखाएँ साहित्य की रचना-प्रक्रिया और रचना के कलेवर को समझने के लिए अत्यंत उपयोगी हैं जैसे समाज-भाषाविज्ञान, मनोविज्ञान, शैलीविज्ञान आदि। जब विदेश के विद्वान हमारे विश्वविद्यालयों में आते हैं तो वे हैरान होते हैं कि यहाँ के लोग भाषाविज्ञान जाने बिना भाषा और साहित्य पढ़ाते हैं। भाषाविज्ञान का संबंध समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, इतिहास, साहित्य, भौतिकी, दर्शन आदि अनेक विषयों से है। खेद है कि जिस देश में प्राचीनकाल में ढेरों भाषाविज्ञानी हुए हैं, उसी देश में भाषाविज्ञान इतना उपेक्षित है।

प्रो. शुक्ल - इस स्थिति को कैसे सुधारा जा सकता है ?

डॉ. बाहरी - कोई तीस वर्ष पूर्व हमने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी.ए. में भाषाविज्ञान एक स्वतंत्र विषय के रूप में प्रारंभ करवाया था। विचार यह था कि बी.ए. में भाषाविज्ञान होने से एक तो इस विषय की नींव दृढ़ होगी, दूसरे अन्य विश्वविद्यालय और कॉलेज बी.ए. में भाषाविज्ञान प्रारंभ करेंगे तो भाषाविज्ञान में एम.ए. पीएच-डी. लेकर हमारे विश्वविद्यालयों में अध्यापकों के रूप में नियुक्त होते रहेंगे, परंतु हमारा यह प्रयोग सफल नहीं हुआ।

प्रो.शुक्ल क्यों ?

डॉ. बाहरी - साहित्य के अध्यापकों को विषय की अनभिज्ञता के कारण भाषाविज्ञान से बैर भाव रहा है। मैं हिंदी विभाग का अध्यक्ष होकर कुरुक्षेत्र चला गया और डॉ. उदयनारायण तिवारी हिंदी के प्राध्यापक होकर जबलपुर चले गए। पीछे साहित्यिक बंधुओं ने बी.ए. में इस विषय को समाप्त कर दिया।

मेरे कहने का मतलब है कि कॉलेजों में भी भाषाविज्ञान एक विषय के रूप में प्रतिष्ठित हो तो अध्यापकों की माँग होने से इस विषय के परास्नातकों और डॉक्टरों

नोट

की रोजी-रोटी का सवाल हल होगा, तो आने वाले विद्यार्थी भी प्रोत्साहित होंगे। केंद्रीय गृह मंत्रालय के अनुवाद विभाग, केंद्रीय हिंदी संस्थान और अन्यत्र जहाँ भी भाषा का कार्य होता है वहाँ भाषाविज्ञान की आवश्यकता को समझा-समझाया जा सकता है। भारत सरकार और राज्य सरकारों के सैकड़ों कार्यालय हैं, जहाँ हिंदी अधिकारी नियुक्त हैं। उनमें कुछ तो बहुत अच्छा कार्य कर रहे हैं। परंतु बहुत से ऐसे हैं जो भाषाविज्ञान में दीक्षित न होने के कारण सरकारी काम को सुचारु रूप से नहीं चला पा रहे हैं। हिंदी अधिकारियों की भर्ती के लिए भाषाविज्ञान की डिग्री अनिवार्य होनी चाहिए। इस प्रकार भाषाविज्ञान के स्नातकों के लिए अनेक अवसर हो सकते हैं।

प्रो. शुक्ल - क्या भाषा-शिक्षण में भी भाषाविज्ञान उपयोगी है ?

डॉ. बाहरी- अवश्य विदेशों में विद्यार्थी के पहले आठ-दस वर्षों में भाषाविज्ञान की पढ़ाई इतनी हो जाती है कि बाद में वहाँ के छात्रों को भाषा का अध्ययन नहीं करना पड़ता। वे भाषा में बड़े शोधनिबंध, शोधप्रबंध और शोधग्रंथ लिखते हैं। भाषा पर उनका पूरा अधिकार होता है। हमारे देश में भाषा-शिक्षण की पद्धतियों पर कोई विशेष प्रयोग नहीं किए गए। मेरे अनुभव में तो यह आया है कि एम.ए. करने के बाद भी हममें से बहुत से लोगों का भाषा-ज्ञान अपूर्ण ही बना रहा है। हम अपनी पाठ्य-पुस्तकों में अनेक विषयों पर बल देते हैं, पर भाषा पर बल नहीं देते। पाठ्य-पुस्तक में एक जीवनी होनी चाहिए, एक एकाँकी होनी चाहिए, एक पाठ स्वास्थ्य पर होना चाहिए, एक पर्यावरण पर इत्यादि। हम भाषा को केवल माध्यम बनाते हैं और विद्यार्थियों को शिक्षा देते हैं - इतिहास, भूगोल या नागरिकता की। स्कूली पाठ्यक्रम को समूल सुधारने की आवश्यकता है। हाईस्कूल तक हमारी हिंदी की पाठ्य-पुस्तकें ऐसी होनी चाहिए जो भाषा का क्रमिक ज्ञान कराएँ ताकि हमारा विद्यार्थी उच्चारण, वर्तनी, शब्द-भंडार, व्याकरण आदि में पूर्णतया दक्ष हो जाए। अब तो हालत यह है कि न हमारा स्कूली अध्यापक भाषा की शुद्धता और मानकता की चिंता करता है और न ही उसके छात्र। उच्चारण को ही ले लीजिए।

हिंदी प्रदेशों में एक-सा उच्चारण नहीं है। इसलिए कि परिनिष्ठित उच्चारण का अभ्यास नहीं कराया जाता। मैं यहाँ अपने ही नगर में सुनता हूँ कि नए-पुराने हिंदी के स्नातक व और 'ब', 'श' और 'स', 'छ' और 'क्ष' में अंतर नहीं करते। वैरी का बैरी, शाला का साला, ऋषि विश्वामित्र को रिसि विस्वामित्र, रक्षा को रच्छा इत्यादि सैकड़ों प्रयोग सुनने में आते रहते हैं। विद्यार्थी का अपनी मातृ बोली का व्याघात आड़े आता है। वह बचपन से ही अपने माँ-बाप या पड़ोसियों, साथियों से ऐसे ही उच्चारण का अभ्यास करता आ रहा है, परंतु भाषा तो वह है जिसमें बोलीपन न हो। छोटी कक्षा में इस बोलीपन को बदलकर भाषापन लाना अध्यापक का कार्य है, परंतु अध्यापक भी इन्हीं संस्कारों में बड़ा हुआ है। जब उसका अपना बोलीपन नहीं गया तो वह अपने विद्यार्थियों की भाषा कैसे सुधार सकता है।

खेद की बात यह कि हमारे अंगरेजी के स्कूली पाठ्यक्रम में तो भाषा सिखायी जाती है लेकिन हिंदी पाठ्यक्रम में ऐसा नहीं है। अंग्रेजी साहित्य तो विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाता है लेकिन हम प्राथमिक कक्षाओं से ही सूर तुलसी और कबीर पढ़ाने की चिंता करने लगते हैं। मानक हिंदी भाषा के ज्ञान में इससे बाधा भी पड़ती है। कबीर में वह साँच बरोबर तप नहीं, तुलसी में जागि बलकि मुनि आग्या दीनी और सूर में कमल नैन ससि वदन मनोहर पढ़ता है और हम उसे सिखाना चाहते हैं सत्य, बराबर, याज्ञवल्क्य, आज्ञा, नयन, शशि ये विरोधी बातें छात्र को कैसे समझायी जाएँ ? घर में और छोटी कक्षाओं में जो भाषा-संस्कार विद्यार्थी के बन जाते हैं, वे आगे बढ़ती हुई प्रौढ़ता के कारण सुधारे नहीं जा सकते।

प्रो. शुक्ल - डॉ. साहब, मैं थोड़ा विषयांतर करूँ, आपने भाषाविज्ञान पर तो अनेक महत्वपूर्ण कार्य किए हैं किंतु अंततः कोशविज्ञान को आपने अपना मुख्य लक्ष्य बनाया, ऐसा क्यों ?

डॉ. बाहरी - कोशविज्ञान भी भाषाविज्ञान की एक शाखा ही है। यह एक उपयोगी शाखा है। इसलिए कि भाषा सीखने के लिए व्यक्ति का एक तो शब्द-भंडार संपन्न होना चाहिए और दूसरे उस शब्द भंडार का सुष्ठु प्रयोग करने के लिए व्याकरण का ज्ञान होना चाहिए। कामता प्रसाद गुरु के व्याकरण के उपरांत हिंदी का कोई मानक और वृहद व्याकरण प्रकाश में नहीं आया। मैंने व्याकरण की एक योजना बना रखी है, परंतु उसे संपन्न करने की फुरसत ही नहीं मिलती। कोश कार्य इतना विस्तृत और विविध है कि उसी में उलझा रहता हूँ।

कोश कार्य का आरंभ भी एक संयोग से हुआ। हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद ने एक योजना बनायी कि कन्साइज ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के आधार पर एक अंगरेजी-हिंदी कोश का निर्माण हो। डॉ. बाबूराम सक्सेना और डॉ. धीरेन्द्र वर्मा उन दिनों (1953) सम्मेलन से जुड़े हुए थे। उन्होंने इन दो भाषाओं में मेरी योग्यता देखी, या शायद मैंने शब्दार्थविज्ञान पर ही डी.लिट. कर लिया था, इसलिए उन्होंने मुझे तीन-चार सहायकों के साथ उस कोश का संपादन करने की अनुमति दी। मैंने दो साल के परिश्रम से उसका संपादन कर डाला। परंतु भारत सरकार से अनुदान लेने के चक्कर में सम्मेलन ने उसका संशोधन ऐसी पद्धति से कराना चाहा जो मुझे स्वीकार नहीं थी, इसलिए उस शब्दकोश से अपना पिंड छुड़ाया।

मेरे इस अर्जित अनुभव का लाभ ज्ञान मंडल, वाराणसी ने उठाना चाहा तो मैंने उनके लिए 'वृहद हिंदी-कोश', जो दो जिल्दों में प्राप्त है, तैयार कर दिया। इस कोश से मेरी ख्याति बढ़ी और मुझे सोवियत सरकार ने एक रूसी-हिंदी कोश के संपादन हेतु आमंत्रित किया। उत्साह बढ़ा। धीरे-धीरे मैंने कोश कार्य को अपनी चर्या का एक अंग बना लिया। भारत सरकार और जर्मन गणवादी जनतंत्र के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान का समझौता हुआ और जर्मन हिंदी तथा हिंदी-जर्मन कोश की योजना बनी, जिसमें मेरा नाम लिया गया। तीन-साढ़े तीन महीने के लिए

नोट

में जर्मनी में रहा। और कुछ समय केंद्रीय हिंदी संस्थान से भी जुड़ा रहा। कोशकार के रूप में मेरी प्रसिद्धि बढ़ती गयी और मैंने दो चार ही नहीं, इस समय तक कई कोश प्रकाशित करा डाले हैं। पाँच कोश यत्रस्थ है और इसी वर्ष प्रकाश में आ जायेंगे।

प्रो. शुक्ल - मेरे प्रश्न का उत्तर कुछ छूट सा गया है.....

डॉ. बाहरी - ऐसा है कि कोशकार्य बहुत कठिन है। बेल्जियम में एक कहावत है कि यदि किसी अपराधी को प्राणदण्ड से कुछ कम कठोर दंड देना हो तो उसे कोशकार्य में लगा देना चाहिए। कोश संपादन का क्षेत्र अछूता है। इसलिए मैंने इसी को चुना, कठिन कार्य करने का मेरा स्वभाव बन गया है।

प्रो. शुक्ल - हिंदी कोश साहित्य में अब भी क्या कमियां रह गयी हैं ?

डॉ. बाहरी - हिंदी में दर्जेवार कोशों की बहुत कमी है। अंग्रेजी में पहली कक्षा से ही बच्चे को एक कोश दिया जाता है। अंग्रेजी स्कूलों में छात्रों को अपने पास कोश रखना अनिवार्य है। ये कोश बड़े सुंदर, रंगीन, सचित्र एवं आकर्षक होते हैं। हिंदी में मेरी ही प्रेरणा से प्राथमिक कक्षाओं के लिए मेरा ही एक कोश राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् से प्रकाशित होने वाला है। ऐसे कोशों की अभी बहुत आवश्यकता है। हिंदी प्रदेश की सभी बोलियों के शब्दकोश होने चाहिए। मैंने भोजपुरी, अवधी और छत्तीसगढ़ी के शब्द-संग्रह प्रकाशित करवाए हैं। परंतु मैं मानता हूँ कि हमारी बोलियों में बहुत भारी शब्द-संपत्ति भरी पड़ी है, जिसका हमारी संस्कृति से घनिष्ठ संबंध है। इसे प्रकाश में लाना चाहिए। इससे हिंदी भाषा की सामर्थ्य का विकास होगा। कई वर्षों से उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान की एक योजना चल रही है, परंतु उत्तरप्रदेश की बोलियों के शब्द भंडार का संकलन नहीं हो पाया है। दूसरे हिंदी भाषी राज्यों को भी इस विषय में अपना योगदान देना चाहिए। हिंदी में बड़े-बड़े कोश प्राप्त हैं उनकी आवृत्ति और उनके संशोधन परिवर्धन की काफी जरूरत है। वर्षों पहले वृहद् हिंदी कोश, मानक हिंदी कोश और हिंदी शब्द-सागर तैयार हुए थे। तब से अब तक हजारों शब्द-भंडार में समाहित हुए, जिनका संकलन नहीं हो पाया। विधि, ज्ञान-विज्ञान और तकनीक संबंधी सैकड़ों शब्द हमारे इन कोशों में नहीं मिलते। इनमें बोलियों के शब्द आए तो हैं परंतु वैज्ञानिक ढंग से और सामूहिक रूप से उनका संपादन भी नहीं हुआ।

वास्तव में मानक, आधुनिक और प्रचलित हिंदी कोशों की आवश्यकता है। अंग्रेजी में बोलीगत कोश अलग हैं, प्राचीन एवं मध्यकालीन अंग्रेजी के कोश अलग हैं। इसके अलावा जो कोश बाजार में हमें प्राप्त होते हैं, वे प्रचलित अंग्रेजी के हैं। दूसरी ओर हिंदी में सब कुछ को समेटकर संग्रहीत कर लिया गया है। वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग ने कोश निर्माण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। पर ये सारे कोश या संग्रह अब पुराने हो गए हैं। पिछले बीस-पच्चीस वर्षों में ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में भारी प्रगति हुई और वृहद् शब्दावली प्रकाश में आयी। आयोग

को चाहिए कि उस शब्दावली को संकलित करके परिशिष्ट रूप में ही सही, प्रकाशित करना चाहिए। कोशों का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। करने के लिए मैं बहुत कुछ बता सकता हूँ किन्तु हिंदी कोश का काम करनेवाले कहाँ हैं? कोशकार्य बहुत दुरूह है, यह कड़ी साधना माँगता है। कभी-कभी एक-एक शब्द पर विचार करने में घंटों लग जाते हैं। इस अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरा, फिर दुःख की बात तो यह है कि अभी हिंदी में इस कार्य का कोई सम्मान नहीं है।

प्रो.शुक्ल - डॉ. साहब, आपने हिंदी पर बहुत-सा कार्य किया है, हिंदी के भविष्य के बारे में आप क्या समझते हैं, कैसा होगा इसका भविष्य ?

डॉ. बाहरी - भाई, यह सवाल तो बहुत लंबा है। हिंदी के अनेक पक्ष हैं। हिंदी के किस पक्ष की बात उठाऊँ? अच्छा, मैं हिंदी के चार क्षेत्रों की बात उठा दूँ- राजभाषा के रूप में, संपर्कभाषा के रूप में या राष्ट्रभाषा के रूप में, शिक्षा के माध्यम के रूप में और विधा की भाषा के रूप में।

साक्षात्कार का महत्त्व-

डॉ. हरदेव बाहरी के इस साक्षात्कार का विशेष महत्त्व इसलिए है क्योंकि यह एक ऐसे विद्वान का दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जिन्होंने जीवनभर हिंदी भाषा, भाषाविज्ञान और कोशकार्य को समर्पित किया। इसमें न केवल भाषाविज्ञान की वर्तमान स्थिति का यथार्थ चित्रण है, बल्कि उससे जुड़ी समस्याओं, संभावनाओं और सुधार की दिशा भी स्पष्ट की गई है। यह साक्षात्कार हमें हिंदी भाषा-शिक्षण, मानक हिंदी की स्थिति, उच्चारण की समस्याएँ और शिक्षकों की भूमिका जैसे गंभीर विषयों पर सोचने को विवश करता है।

साक्षात्कार की उपयोगिता-

भाषाविज्ञान के छात्रों के लिए मार्गदर्शक - यह साक्षात्कार उन छात्रों के लिए अत्यंत उपयोगी है जो भाषाविज्ञान या कोशविज्ञान में शोध या अध्ययन कर रहे हैं। इसमें कई व्यावहारिक पहलुओं की चर्चा की गई है।

शिक्षा-नीति निर्माताओं के लिए दिशादर्शक - इसमें डॉ. बाहरी ने शिक्षा-प्रणाली की कमियों की ओर संकेत किया है और सुझाव दिए हैं जो स्कूली शिक्षा और पाठ्यक्रम सुधार के लिए उपयोगी हो सकते हैं।

कोशविज्ञान में रुचि रखने वालों के लिए प्रेरणा - उन्होंने कोशकार्य की चुनौतियों और ज़रूरतों पर जो बातें कहीं हैं, वे भविष्य के कोशकारों को प्रेरित कर सकती हैं।

हिंदी के भविष्य की दिशा - यह साक्षात्कार हिंदी भाषा के विविध रूपों - राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्कभाषा और शिक्षाभाषा - पर बहस के लिए एक आधार प्रस्तुत करता है।

नोट

समाहार-

यह साक्षात्कार हिंदी भाषा और भाषाविज्ञान के क्षेत्र में डॉ. हरदेव बाहरी के योगदान का जीवंत दस्तावेज़ है। इसमें भारत में भाषाविज्ञान की उपेक्षित स्थिति, शिक्षा-पद्धतियों की कमियाँ, हिंदी शब्दकोशों की आवश्यकता तथा भाषाई शुद्धता के प्रति जागरूकता जैसे विषयों को गंभीरता से उठाया गया है। डॉ. बाहरी की दूरदृष्टि, स्पष्टवादिता और कार्यशीलता इस बातचीत के माध्यम से विद्यार्थियों, शिक्षकों और नीति निर्माताओं को प्रेरित करती है। यह साक्षात्कार केवल एक विचार-विनिमय नहीं, बल्कि हिंदी भाषा को लेकर एक सजग चेतना का दस्तावेज़ है।

9.5 नीग्रो सैनिक से भेंट (यात्रा संस्मरण) - डॉ. देवेन्द्र सत्याथी

मुख्य पाठ

नीग्रो सैनिक से भेंट

(देवेन्द्र सत्याथी)

उस नीग्रो सैनिक की बातें मुझे हू-ब-हू याद हैं। थी तो यह दो अपरिचित व्यक्तियों की पहली भेंट, पर सच पूछो तो यह दो जातियों का मिलन था, दो देशों का मिलन। युद्ध के दिन थे। किसी सैनिक से खुलकर बातें करते एक प्रकार की झिझक का महसूस होना स्वाभाविक था। पर मेरी इस झिझक को उस नीग्रो सैनिक ने पहले ही क्षणों में दूर कर दिया था। दिल्ली में कर्नाट प्लेस की बेंच पर सिगरेट के कश लगाते-लगाते उसने नीग्रो जाति का समस्त इतिहास मेरे सम्मुख खोलकर रख दिया।

वहीं बेंच पर बैठे-बैठे उसने मुझे एक नीग्रो गीत के मर्मस्पर्शी बोल सुनाए थे-चाहो तो मुझे पूरब में दफना दो, चाहो तो मुझे पूरब पश्चिम में दफना दो, मैं उस तुरही की पुकार बराबर सुनता रहूँगा, सबेरे के वातावरण में। अनंत दुःख में भी नीग्रो जाति किस प्रकार सुख की कल्पना करती रही थी, यह गीत उसी की ओर संकेत कर रहा था। गाते-गाते उसकी आँखें चमक उठी थीं। जैसे उसे अपने पुरखों की याद हो आई हो, जिनकी पीठ पर गुलामी की प्रथा के युग में सदैव चमड़े का लपलपाता हंटर बरसने को तैयार रहता था। जैसे उसे अपने पुरखों पर गर्व हो, जिनके बलिदानों के कारण आज वह जीवित था और उसे एक स्वतंत्र शहरी के अधिकार प्राप्त थे।

मैंने कभी पढ़ रखा था कि पुराने नीग्रो गीत, दुःख-दर्द के प्रतीक हैं। क्योंकि जब उनका जन्म हुआ तो नीग्रो जाति को वेदना-ही-वेदना पीनी पड़ती थी। वेदना की रेखाओं द्वारा ही नीग्रो गीतों की स्वरलिपि को निश्चित रूप मिला था। बात करते-करते नीग्रो सैनिक जोर से खिलखिलाकर हंस पड़ता तो यूँ लगता कि यह अपनी जाति की बची-खुची वेदना पर परदा डाल रहा है। कई बार यूँ लगता कि उसके मन में कहीं कोई ऐसी गाँठ पड़ गई है जो हजार यत्न करने पर भी खुलती नहीं।

मुझे एक नीग्रो लोकोक्ति की याद आने लगती.. “गाँठ का कहना है कि संसार कभी आगे जाता है, कभी पीछे आता है।” ऐसी भी क्या गाँठ है जिसे मैं खोल सकता, मैं उससे कहना चाहता था।

“नए गीतों की भरमार, वह कह रहा था, पर पुराने गीतों का कोई मुकाबला नहीं।” वह अस्पष्ट स्वरों में कुछ गुनगुनाने लगा, जैसे कंठ तक आए हुए किसी गीत को होंठों पर खींच लाने का यत्न कर रहा हो। मैं एक सुंदर चित्र की प्रतीक्षा में सँभलकर बैठ गया। मेघ गंभीर स्वरों में वह गा उठा। इस गीत की रूपरेखा कुछ इस प्रकार थी- वह काली-कलूटी छोकरी सदैव भन्नाई रहती है नई जूती लाओ, नई जूती लाओ उसके लिए मैं नई जूती ले दूँगा, और नए मोजे भी। और स्लीपर भी ले दूँगा, हाँ स्लीपर भी। जितनी काली होगी झड़बेरी, उतना ही मीठा होगा रस। “शत-शत वर्षों के अत्याचारों के नीचे दबी हुई नीग्रो जाति बराबर गाती रही।” वह कह रहा था। “यह काली झड़बेरी का गीत शायद तुम भी कुछ-कुछ समझ गए होगे। इस देश में भी तो काली झड़बेरी होती होगी। काली-कलूटी नीग्रो कन्या का कृपा भाजन बनने के लिए गोरे युवकों में भी संघर्ष चलता है। गोरे लेखकों द्वारा लिखे गए अनेक नाटकों में इस कथानक को प्रस्तुत किया गया है।”

इस सवाल पर मैंने उसे अपनी जन्मभूमि संबंधी अनेक बातें बताई। सोचता हूँ वे सब बातें उसे भूल तो नहीं गई होंगी। आज भी अपने मित्रों में बैठकर वह इस देश के संबंध में चर्चा करता होगा।

उससे बात करते-करते मैंने यह बात बड़े स्पष्ट रूप में अनुभव की थी कि नीड़ों और अन्य जातियों की बौद्धिक शक्ति में कोई बहुत बड़ा स्वाभाविक अंतर नहीं हो सकता।

“गणित में नीग्रो कमजोर हैं।” मैंने हंसकर उत्तर दिया हाँ, “कला और साहित्य में तो वे किसी भी जाति से टक्कर ले सकते हैं।”

बहुत देर तक हँसी-मजाक चलता रहा। एक नीग्रो लोकोक्ति को लेकर हम खूब खुश हुए झूठा आदमी कहता है कि ‘मेरा गवाह यूरोप में है।’ एक और नीग्रो लोकोक्ति भी मुझे बहुत पसंद आई सिर और बोझ गरदन की मुसीबत हैं। ‘कानों और आँखों की मिली भगत पर भी अच्छी फब्ती कसी गई थी, ‘जब कान नहीं सुनते तो आँखें देखतीं भी नहीं।’

मेरे नीग्रो मित्र ने यह बात विशेष जोर देकर कही कि अमेरिका में ‘नीग्रो’ शब्द बहुत आम हो गया है और इसे अमेरिका की समस्त नीग्रो जाति ने अपना लिया है। उसने यह भी बताया कि आज भी नीग्रो के प्रति घृणा दिखाते हुए ‘निगर’ शब्द प्रयोग किया जाता है, जिसे कोई भी भला नीग्रो पसंद नहीं कर सकता। चौड़ी नाक और घुँघराले बाल, जितना काला उतने ही सफेद दाँत नीग्रो की ये विशेषताएँ मैं अपने मित्र में देख रहा था या यह कि किसी को उसे ‘निगर’ कहकर पुकारने का अधिकार मिल सकता था। यह ठीक था कि छठी शताब्दी से लेकर सोलहवीं

नोट

शताब्दी के पश्चात् यूरोपीय साम्राज्यवादियों ने अफ्रीका के पूर्वी और पश्चिमी किनारों के प्रदेशों से नीग्रो जाति के करोड़ों नर-नारियों को पकड़कर, अमेरिका के शहरों में ले जाकर बेचने का धंधा अपना लिया था। कहते हैं, इस प्रकार दस करोड़ नीग्रो अपनी जन्मभूमि से अलग किए गए थे, यद्यपि उनमें से चार करोड़ व्यक्ति ही अमेरिका पहुँच गए थे और बाकी छह करोड़ नीग्रो बीमारी अथवा अत्याचारों के कारण रास्ते में ही चल बसे थे। किस प्रकार पूरे डेढ़ सौ वर्षों तक यूरोपीय साम्राज्यवादी उद्योगवाद के महल की नींव में करोड़ों नीग्रो सदैव इस असह्य हीनता का डटकर मुकाबला करते रहे। उसने यह भी बताया कि किस प्रकार 1 जनवरी 1833 का वह शुभ दिन आया जब अमेरिका के राष्ट्रपति लिंकन ने समस्त अमेरिका से गुलामी की शर्मनाक प्रथा के अंत की जोरदार घोषणा की, किस प्रकार 9 अप्रैल 1895 को गुलामी के समर्थक जनरल ली न ग्रंट को आत्मसमर्पण किया था। गुलामी से मुक्त होने पर शुरू-शुरू में नीग्रो को अनेक कष्ट हुए।

गुलामी से मुक्त होकर भी सचमुच उसे वह स्वतंत्रता नहीं मिली थी जिस पर उसे गर्व हो सकता। उस युग की एक नीग्रो कविता में इसी का चित्र खींच गया है-

जब मुझे स्वतंत्रता मिली
मालिक से, खेत से, कारखाने से, गुलामी से
स्वतंत्रता मिली, सुनहरी स्वतंत्रता मिली,
सुंदर स्वतंत्रता मिली,
पर एक कठिन समस्या ही तो थी-
जाऊँ तो कहाँ जाऊँ
पास एक घेला तक नहीं
कैसे स्वतंत्र बनूँ ?
न बैठने को ठौर,
न पैर में जूता,
न खाने को कौर,
हाय, हतभगे !

क्या गुलामी ही है तेरा धर्म ?

एक और स्थान पर नीग्रो कवि कह उठा, 'छोटी मक्खियाँ रस जुटाती हैं, बड़ी मक्खियों खाती है मधुर मधु ।'

मेरे मित्र ने यह भी बताया कि अमेरिका के सभी नीग्रो ईसाई धर्म स्वीकार कर चुके हैं। वे कैसे ईसाई हो गए, शायद इसकी उन्हें कुछ खबर नहीं। यह कहा जा सकता है कि वे फुरसत के क्षणों में नाच-गान में मस्त रहे और नाचते-गाते ही वे एक प्रकार की अचेतन अवस्था में ईसाई मिशनरियों के जाल में फँसते चले गए

और आज यह हाल है कि नीग्रो कवि ईसाई धर्म की आलोचना करने से भी संकोच नहीं करता-

गोरे मारते हैं हंटर,
चलाते हैं बंदूक
धरती है केवल गोरों के लिए,
अभागे नीग्रो का स्थान है बादलों में,
नीग्रो चर्म पर चलता है।

बाइबल का पाठ पढ़ता है, प्रार्थना करता है।

एक और नीग्रो कविता में कवि बड़े जोरदार शब्दों में समस्त नीचों जाति की एक पंक्ति में खड़े होने का आदेश देता है-

तुम भी वीर हो, नीग्रो।
तुम्हारी रंगों में भी गरम लहू बहता है।
देखो, वह गोरा आता है,
उसके हाथ में पिस्तौल है, छुरा है,
कंधे से कंधा मिलाकर
तुम भागो मत, नीग्रो।

इसी से तो प्रोत्साहित होते हैं ये अत्याचारी।

इन कविताओं पर हम देर तक विचार करते रहे। एक नीग्रो कविता की यह टुकड़ी मुझे बेहद पसंद आई, "डॉलर की नजर में मैं कब का मौत के घाट उतर चुका हूँ।"

उत्तर और दक्षिण में नीग्रो की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए एक बार अमेरिका की सुप्रसिद्ध लेखिका पर्ल बक ने लिखा था- "यहाँ उत्तर में नीग्रो की सुरक्षा और उन्नति के काफी साधन और अवसर हैं। कम-से-कम वे यहाँ लिंगिंग (गोरों द्वारा जिंदा जला दिया जाना या मार डाला जाना) से तो सुरक्षित हैं। यह सही है कि यहाँ भी वह शहर के अच्छे हिस्सों में मकान नहीं खरीद सकता, चाहे वह कितना ही पढ़ा-लिखा क्यों न हो और चाहे उसकी हैसियत कैसी ही क्यों न हो। बहुत से ऐसे होटल और रेस्तराँ और सार्वजनिक स्थान हैं, जहाँ उसका प्रवेश निषिद्ध है। पर सार्वजनिक मोटरों, ट्रामों और बसों में जिस जगह चाहे, बैठ सकता है और किराया देकर वह रेल में, चाहे जिस क्लास में यात्रा कर सकता है पर आर्थिक दृष्टि से वह पक्षपात का शिकार बनाया जाता है उसके मुकाबले में गोरों को नौकरी दी जाती है। हाँ, राजनीतिक क्षेत्र में उसे अपनी इच्छा के अनुसार वोट देने का पूरा अधिकार है।"

आज जब भारत में हरिजनों के प्रति समता का व्यवहार किया जाने लगा है, जी चाहता है कि अमेरिका में भी नीग्रो के प्रति हर कहीं समानता का व्यवहार आरंभ

नोट

हो, जैसा कि किसी भी जनतंत्र में उसे अधिकार होना ही चाहिए। मैं सदैव इस प्रतीक्षा में रहता हूँ कि नीग्रो सैनिक, जो दिल्ली में

इनॉट प्लेस की बेंच पर बैठा मुझे मिल गया था, मुझे अपने पत्र में यह सुखद समाचार लिख भेजे कि आज से नीग्रो भी एक स्वतंत्र देश का नागरिक है- प्रत्येक दिशा में, प्रत्येक अवस्था में।

संदर्भ-

यह गद्यांश देवेन्द्र सत्यार्थी द्वारा रचित संस्मरणात्मक रचना "नीग्रो सैनिक से भेंट" से लिया गया है। यह रचना लेखक की एक नीग्रो (अफ्रीकी मूल के) सैनिक से हुई आत्मीय और विचारशील भेंट का विवरण प्रस्तुत करती है, जो द्वितीय विश्व युद्ध के समय भारत आया था। लेखक इस भेंट के माध्यम से नीग्रो जाति के संघर्ष, संस्कृति, पीड़ा और आत्मगौरव को रेखांकित करते हैं।

प्रसंग-

इस प्रसंग में लेखक बताते हैं कि कैसे एक साधारण-सी भेंट ने उन्हें नीग्रो जाति के अतीत और वर्तमान की गहराइयों से परिचित करा दिया। सैनिक की बातों, गीतों और हावभाव के माध्यम से लेखक को गुलामी के दौर की पीड़ा, आज़ादी की आकांक्षा और आत्मसम्मान की भावना का अनुभव होता है। लेखक इस भेंट को सिर्फ दो व्यक्तियों का मिलन नहीं, बल्कि दो जातियों और दो संस्कृतियों का सजीव संगम मानते हैं। इसी मुलाकात के बहाने वे मानवाधिकार, जातीय समानता और सामाजिक न्याय जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर भी विचार प्रस्तुत करते हैं।

व्याख्या-

यह अंश देवेन्द्र सत्यार्थी द्वारा रचित संस्मरणात्मक रचना "नीग्रो सैनिक से भेंट" से लिया गया है। यह रचना द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भारत आए एक अफ्रीकी (नीग्रो) सैनिक से लेखक की अचानक हुई मुलाकात पर आधारित है। यह मुलाकात दिल्ली के कनॉट प्लेस की एक बेंच पर होती है, जो दो व्यक्तियों के बीच भले ही पहली भेंट हो, परंतु लेखक इसे दो संस्कृतियों, दो जातियों और दो देशों के मिलन के रूप में देखता है।

नीग्रो सैनिक लेखक के साथ अपने अनुभव साझा करता है और नीग्रो जाति के संघर्ष, पीड़ा, संगीत, संस्कृति और आत्मगौरव का चित्र प्रस्तुत करता है। वह नीग्रो गीत गाता है जिसमें वह कहता है कि उसे कहीं भी दफनाया जाए, वह स्वतंत्रता की पुकार को सदैव सुनता रहेगा। यह पंक्तियाँ नीग्रो आत्मा की जिजीविषा और उनकी आज़ादी के प्रति गहरी संवेदनशीलता को दर्शाती हैं।

सैनिक एक और गीत सुनाता है- जितनी काली होगी झड़बेरी, उतना ही मीठा होगा रस। "इस गीत में नीग्रो जाति की सुंदरता और आत्मसम्मान की झलक मिलती है। यह काली त्वचा को लेकर होने वाले सामाजिक भेदभाव के विरुद्ध

एक व्यंग्यात्मक उत्तर है, जो बताता है कि सौंदर्य का मूल्य रंग में नहीं, बल्कि गुणों में होता है।

लेखक नीग्रो जाति के संघर्षों का इतिहास भी साझा करता है- कैसे यूरोपीय साम्राज्यवादियों ने अफ्रीका से करोड़ों नीग्रो लोगों को गुलाम बनाकर अमेरिका ले जाकर बेचा। इनकी दुर्दशा, यातनाएँ, और अत्याचारों का वर्णन कर लेखक मानवीय संवेदना को जागृत करता है। अब्राहम लिंकन द्वारा गुलामी प्रथा की समाप्ति के बावजूद नीग्रो लोगों को वास्तविक स्वतंत्रता नहीं मिल सकी। एक कविता में यह पीड़ा मुखर होती है- “स्वतंत्रता तो मिली, पर जाऊँ तो कहाँ जाऊँ? पास एक घेला तक नहीं...” यह आर्थिक और सामाजिक शोषण की ओर इशारा करती है।

इसके अतिरिक्त लेखक नीग्रो लोकगीतों, लोकोक्तियों और कविताओं के माध्यम से उनकी संस्कृति, जीवनदृष्टि और संघर्षशीलता को भी उजागर करता है। नीग्रो कविताओं में गहराई, प्रतिरोध और आत्मबल की स्पष्ट झलक मिलती है- “तुम भी वीर हो, नीग्रो... भागो मत, नीग्रो।”

नीग्रो सैनिक यह भी बताता है कि ‘नीग्रो’ शब्द को उन्होंने अपनाया है, परंतु ‘निगर’ शब्द अपमानजनक है, जो उन्हें गहरे दुख देता है। लेखक इस अनुभव से इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि किसी भी जाति की बौद्धिक क्षमता में कोई स्वाभाविक अंतर नहीं होता, केवल सामाजिक व्यवस्था और अवसरों की असमानता उन्हें अलग करती है।

अंत में लेखक यह अपेक्षा करता है कि जैसे भारत में हरिजनों के साथ समता का व्यवहार आरंभ हुआ है, वैसे ही अमेरिका में भी नीग्रो जाति को पूर्ण सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक समानता का अधिकार मिले। वह उस नीग्रो सैनिक के पत्र की प्रतीक्षा करता है जो यह शुभ समाचार लाए कि नीग्रो अब हर प्रकार से स्वतंत्र और समान नागरिक बन चुका है।

साक्षात्कार का महत्त्व- “नीग्रो सैनिक से भेंट” केवल दो व्यक्तियों की बातचीत नहीं है, बल्कि यह दो संस्कृतियों, दो अनुभवों और दो जातीय इतिहासों का मिलन है। इसमें नीग्रो सैनिक के माध्यम से अफ्रीकी-अमेरिकी समुदाय के संघर्ष, पीड़ा और आत्मगौरव का सजीव चित्रण हुआ है। यह पाठ हमें उस जातीय अन्याय और सामाजिक असमानता की याद दिलाता है, जो नीग्रो जाति ने वर्षों तक सहा। यह हमें यह भी सिखाता है कि मानवता की सच्ची पहचान जाति या रंग से नहीं, बल्कि उसके आत्मबल, चेतना और रचनात्मकता से होती है।

साक्षात्कार की उपयोगिता-

सांस्कृतिक समझ- यह पाठ विद्यार्थियों को नीग्रो संस्कृति, उनके गीतों और कहावतों के माध्यम से उनके सामाजिक जीवन को समझने का अवसर देता है।

नोट

ऐतिहासिक जानकारी- गुलामी, शोषण और अमेरिका में नीग्रो जाति की स्थिति पर ऐतिहासिक जानकारी मिलती है।

सामाजिक समरसता- यह पाठ मानवाधिकारों, समानता और स्वतंत्रता के प्रति जागरूकता उत्पन्न करता है।

भावनात्मक गहराई- इसमें वर्णित गीत, लोकोक्तियाँ और कविताएँ पाठ को संवेदनशील और भावप्रवण बनाती हैं, जिससे पाठकों का भावनात्मक जुड़ाव होता है।

समाहार- "नीग्रो सैनिक से भेंट" एक ऐसा भावनात्मक संस्मरण है जो हमें यह सोचने पर विवश करता है कि रंग, नस्ल, जाति या संस्कृति चाहे कितनी भी भिन्न क्यों न हो, हर मनुष्य के भीतर एक जैसा दिल धड़कता है। देवेन्द्र सत्यार्थी ने इस साक्षात्कार में केवल नीग्रो सैनिक की बातों को नहीं, बल्कि एक पूरी जाति के स्वाभिमान, संघर्ष और आत्मबल को शब्द दिए हैं। यह पाठ हमें वैश्विक मानवता, समानता और सह-अस्तित्व का संदेश देता है, और यह भी कि सच्ची आज़ादी केवल कानूनी नहीं, सामाजिक स्वीकार्यता में भी होनी चाहिए।

गतिविधि 9.1

"कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता" में शब्दों और भाषा के चयन के महत्व पर डॉ. हरिदेव की विचारधारा से सहमत हैं? आपके अनुसार भाषा का सही प्रयोग समाज में कैसे सुधार ला सकता है?

.....

.....

.....

.....

अपनी प्रगति जांचें 9.1

1. डॉ. बच्चन को योग करने की प्रेरणा कब और क्यों मिली?

.....

.....

2. योग का उनके मानसिक स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ा?

.....

.....

3. 'योग की शक्ति' पाठ किस प्रकार का साहित्यिक रूप है?

.....

.....

नोट

4. 'कोश' निर्माण कार्य को लेखक ने 'अखाड़ा' क्यों कहा है?

.....
.....

5. लेखक के अनुसार भाषा और शब्दों का चयन क्यों कठिन होता है?

.....
.....

6. इस साक्षात्कार से भाषा संबंधी किस प्रकार की व्यावहारिक कठिनाइयों का पता चलता है?

.....
.....

7. लेखक की नीग्रो सैनिक से भेंट कहाँ और किस परिस्थिति में हुई?

.....
.....

8. लेखक ने नीग्रो सैनिक को किस दृष्टि से देखा और प्रस्तुत किया?

.....
.....

9. इस यात्रा संस्मरण से हमें क्या मानवीय संदेश प्राप्त होता है?

.....
.....

9.6 सारांश

"अनुभव, आत्मबोध और भाषा - साहित्यिक विमर्श" के अंतर्गत तीन महत्वपूर्ण कृतियाँ शामिल हैं - 'योग की शक्ति' (डॉ. हरिवंश राय बच्चन की डायरी), 'कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता' (भाषाविद डॉ. हरदेव का साक्षात्कार), और 'नीग्रो सैनिक से भेंट' (यात्रा संस्मरण, डॉ. देवेन्द्र सत्यार्थी)। इन तीनों रचनाओं में लेखक ने विभिन्न दृष्टिकोणों से आत्मबोध, अनुभव और भाषा के महत्व को स्पष्ट किया है।

'योग की शक्ति' में डॉ. हरिवंश राय बच्चन ने योग के मानसिक और आत्मिक लाभों को बताया है, और कैसे यह एक व्यक्ति को आत्म-ज्ञान और शांति की ओर अग्रसर करता है।

'कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता' में डॉ. हरदेव ने भाषाशास्त्र और शब्दकोश के निर्माण की कठिनाइयों पर विचार किया है, और यह समझाया

नोट

है कि भाषा का सही प्रयोग समाज में समृद्धि और विचारों की स्पष्टता को बढ़ाता है।

‘नीग्रो सैनिक से भेंट’ में डॉ. देवेन्द्र सत्यार्थी ने यात्रा के दौरान एक नीग्रो सैनिक से बातचीत का वर्णन किया है, जो रंगभेद और मानवता के विषय में गहरी सोच उत्पन्न करता है।

इन कृतियों के माध्यम से लेखक ने न केवल आत्मबोध और अनुभव के महत्व को उजागर किया, बल्कि भाषा और सामाजिक संवेदनाओं की गहरी समझ भी प्रदान की है। यह साहित्यिक विमर्श पाठकों को आत्म-निर्माण, समाज के प्रति जिम्मेदारी और वैश्विक दृष्टिकोण के लिए प्रेरित करता है।

9.7 शब्दावली

क्रम	शब्द	अर्थ
1.	आत्मबोध	आत्मा या स्वयं के अस्तित्व की गहरी समझ।
2.	विमर्श	किसी विषय पर विचार-मंथन या गहन चर्चा।
3.	कोश	शब्दों का संग्रह, जैसे शब्दकोश।
4.	अखाड़ा	स्थान जहां युद्ध, कुश्ती या अन्य खेल होते हैं।
5.	निराकार	जिसका कोई निश्चित रूप या आकार न हो।
6.	संवेदनाएँ	किसी घटना या अनुभव से उत्पन्न भावनात्मक प्रतिक्रियाएँ।
7.	समृद्धि	संपत्ति, खुशहाली, या जीवन की प्रगति।
8.	रंगभेद	किसी व्यक्ति या समुदाय के प्रति उसके रंग के आधार पर भेदभाव।
9.	स्वच्छंदता	स्वतंत्रता, बिना किसी बंधन के जीवन जीने की स्थिति।
10.	समानता	समान अधिकार और अवसर।

9.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर

1. डॉ. हरिवंश राय बच्चन को योग करने की प्रेरणा उस समय मिली जब वे मानसिक तनाव और अनिद्रा की स्थिति से जूझ रहे थे।
2. योग करने से उन्हें मानसिक शांति, आत्मविश्वास और तनावमुक्ति मिली, जिससे उनका जीवन बेहतर हुआ।
3. ‘योग की शक्ति’ एक आत्मकथात्मक डायरी शैली में लिखा गया गद्यांश है।
4. लेखक ने कोश निर्माण को अखाड़ा इसलिए कहा क्योंकि यह एक कठिन, श्रमसाध्य और चुनौतीपूर्ण कार्य है जिसमें बहुत कम लोग उतरना चाहते हैं।

नोट

5. क्योंकि भाषा और शब्दों का चयन करते समय सटीकता, व्याकरण, उपयोग और अर्थ - सभी का ध्यान रखना पड़ता है, जो सरल नहीं होता।
6. साक्षात्कार से ज्ञात होता है कि भाषा में मानकीकरण, प्रामाणिक शब्दों का चयन और जनभाषा से सामंजस्य बनाना एक जटिल प्रक्रिया है।
7. लेखक की नीग्रो सैनिक से भेंट यूरोप यात्रा के दौरान रेल में हुई, जब वह युद्ध की ओर जा रहा था।
8. लेखक ने नीग्रो सैनिक को एक संवेदनशील, शोषित किंतु आत्मबल से परिपूर्ण व्यक्ति के रूप में देखा।
9. यह यात्रा संस्मरण हमें समानता, करुणा और मानवता की भावना को पहचानने और अपनाने का संदेश देता है।

9.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) -1	http://books.aisectionline.com/User/UnitUrls?unitId=15	

9.10 संदर्भ

1. शुक्ल, त्रिभुवननाथ। भाषाविज्ञान पर डॉ. हरदेव बाहरी से साक्षात्कार
2. स्रोत हिंदी भाषा एवं कोशविज्ञान पर केंद्रित वार्ता बच्चन - हरिवंश राय - (डायरी) योग की शक्ति
3. बाहरी, हरिदेव कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता - (साक्षात्कार)
4. सत्यार्थी, देवेन्द्र (यात्रा संस्मरण) नीग्रो सैनिक से भेंट
5. शर्मा, सत्येन्द्र (गिरिराज किशोर से) - साक्षात्कार

9.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ)

1. 'योग की शक्ति' डायरी में लेखक ने योग को किससे जोड़ा है?
 - A) धर्म से
 - B) आत्मबल और मानसिक शांति से
 - C) समाज सेवा से
 - D) चिकित्सा पद्धति

नोट

2. हरिवंश राय बच्चन ने किस परिस्थिति में योग का सहारा लिया?

A) बीमारी के समय	B) पढ़ाई में मन न लगने पर
C) मानसिक तनाव और नींद न आने पर	D) यात्रा के दौरान
3. डॉ. हरिदेव किस क्षेत्र के विशेषज्ञ हैं?

A) साहित्य	B) विज्ञान
C) भाषा और कोश निर्माण	D) चिकित्सा
4. 'कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता' साक्षात्कार का आशय क्या है?

A) पहलवानी की महत्ता	B) भाषा कार्य कठिन होते हैं, पर लोग आगे नहीं आते
C) राजनीति में भाषाविदों की भूमिका	D) खेल प्रतियोगिता का वर
5. नीग्रो सैनिक से लेखक की भेंट कहाँ हुई थी?

A) भारत में	B) अमेरिका में
C) अफ्रीका में	D) यूरोप यात्रा के दौरान

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

1. **B) आत्मबल और मानसिक शांति से** – हरिवंश राय बच्चन ने योग को न केवल शारीरिक स्वास्थ्य बल्कि मानसिक शांति और संतुलन प्राप्त करने का साधन माना है। उन्होंने योग को आंतरिक स्थिरता और आत्मविश्वास के निर्माण से जोड़ा है।
2. **C) मानसिक तनाव और नींद न आने पर** – लेखक ने व्यक्तिगत तनाव और अनिद्रा से जूझते हुए योग का सहारा लिया। योग के अभ्यास ने उन्हें मानसिक विश्रान्ति प्रदान की, जिससे उनके जीवन में नया आत्मबल उत्पन्न हुआ।
3. **C) भाषा और कोश निर्माण** – डॉ. हरिदेव भाषाशास्त्र, व्याकरण, और विशेषतः हिंदी कोश निर्माण में विशेषज्ञ हैं। उनका कार्य हिंदी भाषा की वैज्ञानिक और संरचनात्मक दृष्टि को सुदृढ़ करता है।
4. **B) भाषा कार्य कठिन होते हैं, पर लोग आगे नहीं आते** – यह कथन यह दर्शाता है कि भाषा और कोश निर्माण जैसे गहन बौद्धिक क्षेत्रों में कार्य तो जटिल होते हैं, लेकिन समाज और शिक्षित वर्ग की भागीदारी कम रहती है।

5. D) यूरोप यात्रा के दौरान – लेखक की नीग्रो सैनिक से भेंट यूरोप प्रवास के समय हुई थी। यह मुलाकात नस्लीय भेदभाव, मानवीय करुणा और वैश्विक संघर्षों की संवेदनात्मक व्याख्या को रेखांकित करती है।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50 - 100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. डॉ. हरिवंश राय बच्चन ने अपनी डायरी में किस साधना को अपनाने की प्रेरणा दी है और क्यों?
2. योग से लेखक को क्या लाभ प्राप्त हुए और उनका मानसिक स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा?
3. डॉ. हरिदेव ने शब्द चयन की प्रक्रिया को क्यों कठिन कार्य कहा है?
4. कोश निर्माण को लेखक ने अखाड़े से क्यों जोड़ा और इसका क्या तात्पर्य है?
5. नीग्रो सैनिक को लेखक ने किस रूप में देखा और वह उन्हें किस बात के लिए प्रेरित करता है?

Part - 2

C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. 'योग की शक्ति' पाठ में लेखक ने योग के किस प्रकार के मानसिक और शारीरिक प्रभावों का वर्णन किया है? यह उनके जीवन में कैसे बदलाव लाता है?
2. 'कोश के अखाड़े में कोई पहलवान नहीं उतरता' साक्षात्कार के माध्यम से डॉ. हरिदेव ने भाषाशास्त्र और कोश निर्माण को एक जटिल, परंतु उपेक्षित कार्य क्यों बताया है?

Part - 3

D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. 'नीग्रो सैनिक से भेंट' पाठ में लेखक ने किस प्रकार मानवीय संवेदनाओं को उजागर किया है? सैनिक के अनुभव लेखक को किस भावनात्मक स्तर तक प्रभावित करते हैं?
2. 'योग की शक्ति', 'कोश निर्माण' और 'नीग्रो सैनिक' — इन तीनों पाठों में संघर्ष की विविधता किस प्रकार दिखाई देती है? मानसिक, बौद्धिक और सामाजिक संघर्ष के स्तर पर तुलनात्मक विवेचना कीजिए।
3. तीनों पाठों से प्राप्त नैतिक और व्यावहारिक संदेश क्या हैं? पाठकों के दृष्टिकोण और जीवन मूल्यों को प्रभावित करने की दृष्टि से इनका समेकित महत्व स्पष्ट कीजिए।

इकाई – 10

संवाद, लेखन और भावनाओं का संप्रेषण - एक समग्र दृष्टिकोण

इकाई की रूपरेखा

- 10.1 परिचय
- 10.2 उद्देश्य
- 10.3 यदि बा न होती तो शायद गांधी को यह ऊँचाई न मिलती (साक्षात्कार)
कथाकार- गिरिराज किशोर से सत्येन्द्र शर्मा
- 10.4 सार-लेखन
- 10.5 भाव-पल्लवन साक्षात्कार और कौशल
- 10.6 सारांश
- 10.7 शब्दावली
- 10.8 अपनी प्रगति जांचे - संभावित उत्तर
- 10.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER
- 10.10 संदर्भ
- 10.11 अभ्यास
- 10.12 फीडबैक फॉर्म

10.1 परिचय

"यदि बा न होती तो शायद गांधी को यह ऊँचाई न मिलती" शीर्षक यह साक्षात्कार सुप्रसिद्ध कथाकार **गिरिराज किशोर** और डॉ. **सत्येन्द्र शर्मा** के मध्य हुआ एक विचारशील संवाद है, जो उनके बहुचर्चित उपन्यास '*पहला गिरमिटिया*' के सृजन-प्रक्रिया, गांधी के जीवन-दर्शन, और लेखन के विभिन्न पक्षों को उजागर करता है। यह साक्षात्कार मात्र एक रचनाकार और पाठक का संवाद नहीं, बल्कि लेखन, शोध, संवेदना और ऐतिहासिक चेतना के मध्य एक जीवंत पुल है।

इस संवाद में लेखन की तैयारी, अनुभव, कथानक चयन, भावनात्मक गहराई, और संवाद-कौशल—सभी बिंदुओं को समाविष्ट किया गया है। गिरिराज किशोर न केवल गांधी के व्यक्तित्व को एक नवीन दृष्टि से सामने लाते हैं, बल्कि बा (कस्तूरबा गांधी) की भूमिका को भी उतनी ही महत्वपूर्ण मानते हैं। उनका मानना है कि यदि बा जैसी सशक्त, संवेदनशील और नैतिक स्त्री गांधी के जीवन में न होतीं, तो वे उस ऊँचाई तक नहीं पहुँच पाते जो उन्हें आज प्राप्त है।

नोट

यह साक्षात्कार लेखक की रचनात्मक दृष्टि, गहन अध्ययन, और आत्मचिंतन की परिणति है, जिसमें संवाद की भाषा अत्यंत सहज, भावपूर्ण और प्रामाणिक है। इसमें न केवल 'पहला गिरमिटिया' की लेखन-प्रक्रिया का विवरण है, बल्कि लेखन में संवेदना, चरित्र की सच्चाई, और ऐतिहासिक तथ्यों के साथ न्याय करने की कोशिश भी परिलक्षित होती है।

यह संवाद लेखन-कला, भावनात्मक अभिव्यक्ति, संवाद-कौशल और ऐतिहासिक समझ का उत्कृष्ट उदाहरण है, जो लेखन और पाठकीय संवेदना के बीच सेतु का कार्य करता है।

10.2 उद्देश्य

1. महात्मा गांधी के व्यक्तित्व और संघर्षों को एक नई दृष्टि से समझना, विशेष रूप से उनके दक्षिण अफ्रीका प्रवास के दौरान हुए आत्म-संघर्षों और प्रयोगों को उजागर करना।
2. गिरिराज किशोर द्वारा रचित उपन्यास 'पहला गिरमिटिया' की लेखन प्रक्रिया, शोध, कल्पना और संवेदना के आधारों को पाठकों के सामने रखना।
3. यह स्पष्ट करना कि जीवनी और उपन्यास के बीच क्या अंतर होता है, और एक लेखक को ऐतिहासिक तथ्यों के साथ-साथ कल्पना की उड़ान भरने की कैसी चुनौती होती है।
4. कस्तूरबा गांधी ('बा') की भूमिका और उनके दृढ़ व्यक्तित्व की महत्ता को रेखांकित करना — कि कैसे उन्होंने गांधी के जीवन में स्थायित्व और नैतिक गहराई दी।
5. यह दर्शाना कि एक लेखक को आधुनिक युग में भी लंबा साहित्यिक ग्रंथ रचने का आत्मविश्वास कैसे रखना चाहिए, और उसके पीछे कौन-से मूल्य, संवेदनाएँ और ऐतिहासिक समझ होती हैं।
6. गांधी के जीवन से जुड़े विवादास्पद पक्षों जैसे भगत सिंह का प्रसंग, पारिवारिक दायित्व, आत्मनिग्रह आदि पर लेखक की संतुलित और वैचारिक दृष्टि को प्रस्तुत करना।
7. यह बताना कि साहित्य कैसे संवाद, शोध और भावनाओं के संप्रेषण का सशक्त माध्यम बन सकता है, और लेखक का दृष्टिकोण समाज में नए विमर्शों को जन्म दे सकता है।

10.3 यदि बा न होती तो शायद गांधी को यह ऊँचाई न मिलती (साक्षात्कार) - कथाकार गिरिराज किशोर से सत्येन्द्र शर्मा

मुख्य पाठ

पहला गिरमिटिया' के लेखक प्रसिद्ध कथाकार श्री गिरिराज किशोर से सत्येन्द्र शर्मा की बातचीत -

डॉ. शर्मा - गांधी पर देश की अनेक भाषाओं और अनेक विदेशी भाषाओं पर सैकड़ों ग्रंथ उपलब्ध हैं, तब उन पर एक और जीवनीपरक ग्रंथ 'पहला भिरमिटिया' लिखने के पीछे के क्या कारण हैं ?

श्री गिरिराज किशोर - दो तरह के ग्रंथ गांधी पर उपलब्ध हैं, एक जो जीवनियाँ अनेक लोगों ने लिखी हैं । पोलक ने लिखी, लुई फिशर ने लिखी और भी है। दूसरे उन पर विश्लेषणात्मक ग्रंथ, उनके विचार, नीति या कार्यों पर हैं। दो हजार अंग्रेजी, हिंदी में उपलब्ध पुस्तकों की सूची मैंने बनाई थी। एक उपन्यास भी है- 'फाइव मिनिट्स टू रामा' बल्कि दो तीन हैं उनके बारे में।

दरअसल मैंने भारतीय गांधी पर कार्य शुरू किया था, पर कार्य करते समय पता चला कि असली गांधी तो दक्षिण अफ्रीका में था। अपने सारे संघर्ष और सारे प्रयोग तो वे वहाँ कर चुके थे। वहीं उनकी कुंडली जाग्रत हुई थी। यद्यपि यह तथ्य समझने के पूर्व मैं भारतीय गांधी पर तीन सौ पृष्ठ लिख चुका था, जिनका प्रयोग मैंने इसमें 'फ्लैश बैक' के रूप में किया है।

गांधी के प्रति गहरी जिज्ञासा, अंदर उनके जीवन को समझने का भाव इसे लिखने के पीछे मुख्य कारण रहा। सन् 1947 ई. अपनी किशोरावस्था में मैंने उन्हें देखा था। एक रुचि, एक भाव गांधी के प्रति जमा हुआ था मेरे अंदर।

डॉ. शर्मा- इसे गांधी की जीवनी कहें या उपन्यास !

श्री गिरिराज किशोर - उपन्यास है। वास्तव में जीवनी और उपन्यास में बहुत फर्क है। जीवनी तो जिन्दगी की घटनाओं का समुच्चय है, लेकिन उपन्यासकार को उन घटनाओं में से ऐसी स्थिति को चुनना पड़ता है जिससे उपन्यासकार अपनी कल्पना को भी जोड़ सकता है और अपनी संवेदना को भी।

ध्यान देने की बात यह है कि जो व्यक्ति ऐतिहासिक हो जाता है उसकी ऐतिहासिकता से ज्यादा छेड़छाड़ नहीं की जा सकती, किंतु उसकी भावनाओं को, उसकी संवेदनाओं को भली-भांति विस्तार दे सकते हैं, जैसे गांधी को ट्रेन से फेंके जानेवाली घटना को मेरी कल्पना देशकाल का अतिक्रमण कर उस क्षण और उस भोक्ता मन तक पहुँच गयी। यह मेरा उपन्यास था जिसने जाना कि स्टेशन पर ठंड से ठिठुरते हुए गांधी पर एक भारतीय कुली ने अपना कंबल

नोट

ओढ़ाकर सहारा दिया जबकि तथ्य सिर्फ इतना था कि उस घटना के वक्त वहीं दो भारतीय कुली मौजूद थे। इस संभावना को रचने की छूट जीवनी में नहीं है।

डॉ. शर्मा- दूरदर्शन, कंप्यूटर तथा अन्य तीव्रगामी दृश्य, श्रव्य माध्यमों के युग में जब पढ़ना कम होता जा रहा है, तब इतना बड़ा ग्रंथ लिखते समय इसके पढ़े जाने को लेकर आपके मन में आशंका नहीं थी ?

श्री गिरिराज किशोर - इस प्रसंगवश एक घटना जानें। मैं तब शिमला में ही था। श्री विष्णुकांत शास्त्री जी गवर्नर थे। उपन्यास पाकर बोले- इसे कैसे पढ़ूँगा ? इतना समय कैसे निकाल पाऊँगा ? किंतु तीन-चार रोज बाद ही एक दिन, रात 11 बजे उनका फोन आया- बोले, "भाई अभी-अभी इसे पढ़कर फोन कर रहा हूँ, इसे पढ़ते वक्त कई बार रोया हूँ।" मुझे मिले व्यास सम्मान के दौरान अपने अभिभाषण में उन्होंने यहाँ तक कहा कि महाभारतकार के बाद गिरिराज जी ने इस उपन्यास में इतने आयामों और इतनी विविधताओं में इतने बहुमुखी चरित्रों का समन्वय किया है।

डॉ. शर्मा - तो आपके अपनी कलम के भरोसे ने यह आशंका जन्मने ही नहीं दी?

श्री गिरिराज किशोर- नहीं, मुझे अपनी कलम से ज्यादा भरोसा गांधी के चरित्र को पढ़े जाने का था, जो खरा उतरा। जितने ज्यादा लोगों ने अब इस उपन्यास को पढ़ा है वह मेरे सुखद आश्चर्य का विषय है। आज बड़े उपन्यास को न पढ़े जाने की आशंका को सर्वथा नकारा नहीं जा सकता किंतु यदि गांधी पर लिखना है तो उन बुनियादी तत्वों को आप कैसे छोड़ सकेंगे जिनसे गांधी का निर्माण हुआ था, ऐसा करना ही वस्तु तत्व के साथ अन्याय होगा और फिर जरा सोचिए यदि तुलसी चिंता करते कि इतना बड़ा ग्रंथ कौन पढ़ेगा, यदि व्यास चिन्ता करते, तब हो गया था, जबकि उस जमाने में प्रकाशन और प्रसार के संसाधन भी क्या थे। मेरे सामने तो इतनी बड़ी चुनौती न थी।

डॉ. शर्मा- तो आपके सामने सबसे बड़ी चुनौती क्या थी ?

श्री गिरिराज किशोर- लिखे जाने के बाद पुस्तक व पाठक के बीच पुस्तक की कीमत अवरोध न बने। यह मेरी चिन्ता थी और चुनौती भी। मेरे लिए यह संतोष की बात है कि लागत मूल्य पर ज्ञानपीठ ने कीमत रखी।

डॉ. शर्मा- गांधी को आप किस रूप में देखते हैं ?

श्री गिरिराज किशोर- मैंने उन्हें सामान्य व्यक्ति के रूप में देखा, श्रद्धा के व्यक्ति-रूप में नहीं। उनके संघर्ष के साथ आपकी सहानुभूति हो सकती है, किन्तु उनके नायक के रूप में आप तदांकार हो जाएँ, ऐसा नहीं है। मैंने उन्हें 'मिथ' बनाने की कोशिश नहीं की।

डॉ. शर्मा - पारिवारिक दायित्वों के निर्वाह की कसौटी में गांधी जी खरे उतरे नहीं माने जाते। उनकी संतति उनके संस्कारों और उनके यश जीवन के अनुरूप आगे न आ सकी, क्यों ?

श्री गिरिराज किशोर - इस संदर्भ में, 'उजाले के अँधेरे' में दिनकर ने भी लिखा है। हरिदास लंदन पढ़ने जाना चाहते थे, गांधी जी ने नहीं भेजा, वे हरिदास की कमजोरियों और विलायत के परिवेश को जोड़कर देख रहे थे। विलायत में गांधी जिन संघर्षों से गुजर रहे थे, उनसे हरिदास पास र पाएंगे इस मुश्किलात को वे समझ रहे थे। दूसरा, भारतीय के लिए अँग्रेजी शिक्षा वे किसी दृष्टि से उचित न समझते थे। इस बात पर कस्तूरबा उनसे नाराज भी थीं।

डॉ. शर्मा - 'बा' के साथ उनका व्यवहार एक डिक्टेटर की तरह था ?

श्री गिरिराज किशोर - गलत बात। कस्तूरबा का व्यक्तित्व कहीं कम नहीं है। वे बराबर के स्तर पर खड़ी होकर गांधी से बात करती हैं। मैं तो कहता हूँ कस्तूरबा जैसा दृढ़ व्यक्तित्व न होता तो गांधी को शायद यह ऊँचाई न मिलती। 'बा' जिस तरह उन पर नजर रखती थीं, उनके हर कार्य को गौर से समझती और उस पर साफ नजरिया व्यक्त करती थीं, आलोचना करती थीं। गांधी उनकी माने या न मानें, तो न तो 'बा' ऐसी थीं जिन पर डिक्टेटरशिप की बात की जा सके और न गांधी ने उन पर यह थोपनी चाही।

डॉ. शर्मा - दक्षिण अफ्रीका से विदाई के समय उपहार के तौर पर मिले सोने का पचास गिन्नी का हार भी कस्तूरबा चाह कर भी न रख सकीं। गांधी ने अन्य उपहारों के साथ उसे भी न्यास को सौंप दिया। इसे क्या कहेंगे ?

श्री गिरिराज किशोर - हाँ, उन्होंने इस मुद्दे पर बाकायदा 'बा' से बाद की और बेटों को भी बुलाकर कहा कि बताओ, इन गहनों पर मेरा क्या अधिकार है? गांधी इन दिनों आत्मनिग्रह के जिन प्रयोगों से गुजर रहे थे उनमें यह घटना अस्वाभाविक नहीं है। इसे 'डिक्टेटरशिप' कहना भी सही नहीं। एक बात और, गांधी किसी भी मुद्दे पर अपना तर्क व विचार रखते थे और 'अपने को' अनुपस्थित कर निर्णय लेते थे- निःसंग होकर, निर्मोही होकर। उनके इस स्वभाव की वजह से वे डिक्टेटर भी लग सकते हैं और जिद्दी भी।

डॉ. शर्मा - गांधी की जीवन-यात्रा को आप संयोगों का प्रतिफल मानते हैं या उनकी सक्रिय चेतना का परिणाम ?

श्री गिरिराज किशोर - आरंभिक दौर यानि अफ्रीका में रेल के प्रथम श्रेणी डिब्बे से अपमानित कर उतारे जाने तक के शुरूआती घटना - क्रम को आप नियति के हाथों रचित घटना मान सकते हैं, किन्तु उसके बाद की प्रत्येक घटना पर, प्रत्येक कार्यकलाप में वे प्रतिफल और पग-पग पर सचेत दिखाई पड़ते हैं।

नोट

डॉ. शर्मा - क्या आपको लगता है कि गांधी जी ने अपने जीवन काल में कुछ ऐतिहासिक भूलों की हैं, जैसे भगत सिंह.....।

श्री गिरिराज किशोर- देखिए। उनकी भूलों का निर्धारण करने से पहले कुछ बातें ध्यान में रखनी चाहिए। एक तो गांधी के संबंध में सही जानकारी आधी-अधूरी या सुनी-सुनाई बातों के आधार पर कोई धारणा नहीं बनानी चाहिए। दूसरा, उनके दृष्टिकोण या उनकी स्वनिर्धारित मूल्य प्रतिबद्धता और तीसरा उनके किसी भी कार्य-व्यवहार को उनकी वैचारिक निरंतरता के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। अब भगत सिंह का ही मामला लें, कम लोग जानते हैं कि उन्होंने भगत सिंह के मृत्युदंड की सजा को कम करने के लिए अंग्रेज सरकार को एक लम्बा पत्र लिखा था। वह पत्र दस्तावेज के रूप में इस उपन्यास को लिखे जाने की तैयारी के दौरान मैंने स्वयं देखा है।

डॉ. शर्मा- व्यक्ति और सार्वजनिक जीवन मूल्यों के निर्वाह में वे किस हद तक निर्मम होते थे ?

श्री गिरिराज किशोर निर्मम नहीं, सख्त। उनकी कसौटी बहुत सख्त थी। आचार्य कृपलानी ने इलाहाबाद में एक बार एक आप बीती सुनाई थी। कृपलानी मुजफ्फरपुर में इतिहास पढ़ाते थे, बाद में बी.एच.यू. में पढ़ाने लगे। इसी दौरान गांधी को वाराणसी यात्रा के दौरान उन्होंने गांधी के साथ अपने रहने का प्रस्ताव रखा। गांधी तैयार हो गए और बोले तुम खाना बनाओ और रही कृपलानी को बुरा लगा लेकिन पूरे निष्ठाभाव से वे दो साल तक खाना बनाते रहे। किन्तु कांग्रेस संगठन के अवसर पर उन्होंने पं. नेहरू से कहा- ये आदमी तुमसे भी बड़ा है, कभी सोचा है इसके बारे में और तब कृपलानी को संगठन में सेक्रेटरी बनाया गया। तो गांधी की कसौटी बहुत सख्त थी।

डॉ. शर्मा- गांधी जी पर आपको प्रिय लगी कोई तीन पुस्तकें ?

श्री गिरिराज किशोर- प्यारेलाल की 'दी फर्स्ट फेस', राजमोहन गांधी की ए गुड बोटमैन और ग्रीन की.... नाम गुम रहा है.....

डॉ. शर्मा - खैर छोड़िए। इस कृति ने कितना समय लिया और कहाँ के फेरे लगाए?

श्री गिरिराज किशोर - गांधी से जुड़े भारत के विभिन्न स्थानों के अतिरिक्त लंदन, मॉरिशस और खास तौर से अफ्रीका के उन स्थलों की यात्रा की जो गांधी के कार्य स्थल थे। लगभग आठ वर्ष का समय इसे पूरा करने में लगा।

डॉ. शर्मा - 'पहला गिरमिटिया' में अफ्रीका का गांधी है, क्या भारत के गांधी पर भी कोई उपन्यास..... ?

श्री गिरिराज किशोर- न भई न। भारत के गांधी के रूप में उन्हें उकेर पाना मेरे लिए संभव नहीं।

डॉ. शर्मा- क्या गांधी आज कहीं संदर्भ बन सकते हैं?

श्री गिरिराज किशोर- इस प्रसंग में नेल्सन मंडेला के अलग-अलग दिए गए तीन भाषणों का उल्लेख करना चाहूँगा, जिसमें उन्होंने कहा है कि 'हालाँकि मैं गांधी जी की नीतियों से सहमत नहीं हूँ किन्तु अपने देश को आजाद कराने के लिए उनके बताए रास्ते के अलावा कोई रास्ता मैं नहीं जानता।

डॉ. शर्मा -आदरणीय, अपना बहुमूल्य समय देने और बात करने के लिए आपके प्रति कृतज्ञ हूँ।

श्री गिरिराज किशोर- धन्यवाद । बहुत शुभकामनाएँ।

श्री गिरिराज किशोर से यह साक्षात्कार भारतीय उच्च अध्याय संस्थान शिमला में (जुलाई सन् 2002) लिया गया था, और राष्ट्रीय दैनिक हिन्दुस्तान (नई दिल्ली) तथा अमर उजाला में प्रकाशित होने पर पाठकों की व्यापक प्रतिक्रिया मिली थी।

यह साक्षात्कार प्रसिद्ध कथाकार **श्री गिरिराज किशोर** और **डॉ. सत्येन्द्र शर्मा** के मध्य हुआ संवाद है, जो श्री किशोर के चर्चित उपन्यास '*पहला गिरमिटिया*' पर आधारित है। यह बातचीत जुलाई 2002 में भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला में हुई थी और बाद में *हिन्दुस्तान* तथा *अमर उजाला* जैसे समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई। इस संवाद के माध्यम से न केवल इस उपन्यास की रचना-प्रक्रिया पर प्रकाश डाला गया है, बल्कि महात्मा गांधी के व्यक्तित्व, उनकी दृष्टि, संघर्षों, जीवन-दर्शन, निजी संबंधों और नैतिक दृढ़ता को भी गहराई से समझाया गया है।

मुख्य बातें-

दक्षिण अफ्रीका में गांधी का वास्तविक निर्माण – लेखक बताते हैं कि गांधी पर बहुत से ग्रंथ हैं, परंतु उन्होंने पाया कि गांधी का असली निर्माण भारत में नहीं, बल्कि दक्षिण अफ्रीका में हुआ। वहीं उनके विचार, संघर्ष और प्रयोगों ने आकार लिया। इसलिए उपन्यास का फोकस “दक्षिण अफ्रीका का गांधी” है।

उपन्यास और जीवनी का अंतर – श्री किशोर बताते हैं कि जीवनी तथ्य-आधारित होती है, जबकि उपन्यासकार को संवेदना और कल्पना के आधार पर गहराई तक जाने की स्वतंत्रता होती है। जैसे गांधी को ट्रेन से निकाले जाने पर एक कुली द्वारा कंबल देने की घटना – यह केवल कल्पना है जो जीवनी में संभव नहीं होती, परंतु उपन्यास में यह गांधी के मन की पीड़ा को बेहतर ढंग से अभिव्यक्त करती है।

नोट

पाठक की रुचि और लंबा उपन्यास लिखने का जोखिम – वे स्वीकार करते हैं कि इस दृश्य-श्रव्य युग में इतना बड़ा उपन्यास लिखना जोखिम भरा था, पर उन्हें भरोसा गांधी के चरित्र पर था, अपनी कलम से अधिक। पाठकों की सकारात्मक प्रतिक्रिया और व्यास सम्मान जैसी उपलब्धियाँ इस भरोसे को सही साबित करती हैं।

गांधी – एक साधारण व्यक्ति, नायक नहीं – उन्होंने गांधी को श्रद्धा की मूर्ति या मिथ नहीं बनाया, बल्कि एक साधारण, संवेदनशील और प्रयोगशील व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है। उनके निर्णय, आत्मनिग्रह और नीतिगत कठोरता को उन्होंने आलोचनात्मक संतुलन के साथ प्रस्तुत किया।

कस्तूरबा का व्यक्तित्व और गांधी का व्यवहार – गांधी और बा के संबंधों को लेखक ने बराबरी पर आधारित माना है। गांधी डिक्टेटर नहीं थे, बल्कि नैतिक कसौटी पर खरे रहने वाले व्यक्ति थे। बा जैसी मजबूत स्त्री के बिना गांधी संभव नहीं थे – यह लेखक की स्पष्ट मान्यता है।

उपहारों और नैतिकता का प्रश्न – लेखक ने स्पष्ट किया कि गांधी ने गहनों और उपहारों पर अपना अधिकार नहीं समझा। उन्होंने सब कुछ ट्रस्ट को सौंप दिया, जो उनके आत्मसंयम और निःस्वार्थ वृत्ति का परिचायक है। यह डिक्टेटरशिप नहीं, नैतिक निष्ठा थी।

संयोग या सक्रिय चेतना – गांधी का शुरुआती संघर्ष (जैसे ट्रेन से निकाले जाना) संयोग या नियति हो सकता है, पर उसके बाद की हर क्रिया और निर्णय उनकी जागृत चेतना और विचारशीलता का परिणाम है।

भगत सिंह का मामला – लेखक ने गांधी की आलोचना को अज्ञान पर आधारित माना। उन्होंने गांधी द्वारा अंग्रेज़ सरकार को लिखा गया पत्र स्वयं देखा, जिसमें उन्होंने भगत सिंह की फांसी को रोकने का प्रयास किया था। यह ऐतिहासिक जानकारी बहुत महत्वपूर्ण है।

निर्ममता नहीं, नैतिक कठोरता – गांधी निर्मम नहीं थे, बल्कि मूल्य आधारित और सख्त व्यक्ति थे। कृपलानी जैसे सहयोगी भी उनके इन गुणों से प्रभावित हुए। उनकी कसौटी पर खरा उतरना आसान नहीं था, पर उसमें कोई दमन या अत्याचार नहीं था।

लेखन यात्रा और तैयारी – उपन्यास को लिखने में लगभग आठ वर्ष लगे और लेखक ने लंदन, मॉरिशस, दक्षिण अफ्रीका समेत भारत के कई स्थानों की यात्राएँ कीं ताकि गांधी के जीवन को यथासंभव प्रमाणिक रूप में प्रस्तुत किया जा सके।

भारत के गांधी पर लेखन नहीं – लेखक मानते हैं कि भारत के गांधी को समझना और उन्हें उपन्यास के रूप में बाँधना उनके लिए संभव नहीं था। उनके अनुसार, दक्षिण अफ्रीका का गांधी ही असली और अधिक रोचक था।

आज के संदर्भ में गांधी – गांधी की प्रासंगिकता को नेल्सन मंडेला के हवाले से लेखक सिद्ध करते हैं कि वे आज भी प्रेरणा स्रोत हैं। गांधी की राह कठिन हो सकती है, पर वैकल्पिक और टिकाऊ समाधान उन्हीं में है।

यह साक्षात्कार न केवल 'पहला गिरमिटिया' उपन्यास के रचनात्मक पक्ष को उजागर करता है, बल्कि महात्मा गांधी के बहुआयामी व्यक्तित्व को एक समर्पित, लेकिन आलोचनात्मक दृष्टि से समझने का अवसर भी देता है। गिरिराज किशोर ने गांधी को श्रद्धा से नहीं, बल्कि संवेदनशीलता और यथार्थ की कसौटी पर कसते हुए प्रस्तुत किया है। यही इस कृति की सबसे बड़ी विशेषता है।

10.4 सार- लेखन

सार-लेखन

सार-लेखन एक कला है; तथा उसके लिए प्रतिभा एवं अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है। विस्तृत रचना में प्रायः अप्रासंगिक, असंबद्ध तथा अनावश्यक बातों और तथ्यों का समावेश होता है। इसके विपरीत 'सार' में मूल एवं तथ्य पर बल दिया जाता है। सार लेखन के लिए उचित शब्दों का चयन, वाक्य का उचित विन्यास एवं भाषा का गठन ऐसा होना चाहिए कि रचना का मूल भाव प्रभावित न हो।

सार-लेखन में मूल भाव की सुरक्षा करते हुए अप्रासंगिक, असंबद्ध एवं अनावश्यक बातों, तथ्यों और वर्णनों को छोड़कर किसी विवरण, भाषण, लेख, निर्देश या पत्र में लिखे विचारों, भावों को उचित व्यवस्था के अंतर्गत ही प्रस्तुत किया जाता है। यह 'सार' अपने आपमें एक ऐसी संपूर्ण रचना है, जिसे पढ़ने के पश्चात् मूल एवं विस्तृत को पढ़ने की आवश्यकता नहीं होती।

अच्छे सार-लेखन की विशेषताएँ -

1. स्वतः पूर्णता ।
2. स्पष्ट एवं सरल अभिव्यक्ति ।
3. प्रभावपूर्ण संक्षिप्तता ।
4. अलंकार, समास रहित सरल भाषा ।
5. प्रवाहपूर्ण क्रमबद्धता जिसमें सुनियोजित एवं सुसंबद्ध वाक्य विन्यास हो।
6. सार-लेखन मूल का ही अनुलेखन हो। अतः उसमें न तो मूल का विस्तार हो, न कम हो, अर्थात् रचना का मूलभाव प्रभावित न हो ।

सार-लेखन की प्रक्रिया

मूल अनुच्छेद को -

1. मूल अनुच्छेद को अच्छी तरह एक या दो बार पढ़कर भाव या कथ्य को समझ लेना चाहिए ।

नोट

2. मूल अनुच्छेद में निहित आवश्यक बातों, मूल कथ्य या भाव विभक्त कर रेखांकित कर लेना चाहिए।
3. मूल अनुच्छेद के उन शब्दों को क्रम से अलग लिख लेना चाहिए, जिनका संबंध अनुच्छेद के भाव या कथ्य से हो।
4. अनुच्छेद में निहित उदाहरणों, दृष्टांतों, उक्तियों, मुहावरों, लोकोक्तियों, पुनरावृत्तियों, असंगत तथा अनावश्यक बातों को छोड़ देना चाहिए।
5. प्रत्यक्ष कथन एवं संवाद को अपने शब्दों में आवश्यकतानुसार ही लिखना चाहिए।
6. सार-लेखन सदैव अन्य पुरुष में ही लिखा जाता है।
7. छोटे-छोटे वाक्यों का प्रयोग करना चाहिए।
8. मूल विषय की आलोचना या टिप्पणी नहीं करना चाहिए।
9. अपनी ओर से किसी भाव या विचार को नहीं जोड़ना चाहिए, न ही मूल भाव को अपनी ओर से समझाने का यत्न करना चाहिए।
10. सार-लेखन का आकार मूल अनुच्छेद का एक तिहाई होना चाहिए।
11. कभी-कभी सार-लेखन के लिए शब्दों की संख्या दी गई होती है। उसका यथासमय पालन करना चाहिए।
12. मूल अनुच्छेद में शीर्षक न हो, जिसे सार-लेखन में पूछा भी न गया हो तो भी विषय को समझने समझाने की दृष्टि से शीर्षक देना चाहिए।
13. सार-लेखन का सबसे महत्वपूर्ण सोपान है - लेखन। मूल अनुच्छेद का प्रारूप तैयार कर आवश्यक काट-छाँट करके सार संक्षेपण को अंतिम रूप देना चाहिए।

पत्राचारों का सार-लेखन

शासकीय कार्यालयों में पत्राचार में सार-लेखन की दो विधियाँ निर्धारित की गई हैं-

1. प्रवाह सार-लेखन- समस्त पत्राचार का संक्षिप्त रूप सामान्य सार-लेखन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

2. तालिका सार-लेखन- इस विधि में समस्त पत्राचार का अध्ययन कर लेने के बाद उन्हें निम्नलिखित रीति से तालिका रूप में प्रस्तुत किया जाता है -

क्रम संख्या

पत्र संख्या

दिनांक

प्रेषक

प्रेषित

पत्र का विषय

सार-लेखन में न तो भूमिका की आवश्यकता होती है और न ही उपसंहार की। सार-लेखन में मूल या प्रतिपाद्य विषय से ही अपना सार 'अनुच्छेद' आरंभ कर देना चाहिए। इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि सार-लेखन इतना संक्षिप्त न हो जाए कि विचार श्रृंखला खंडित या बिखरी हुई दिखाई देने लगे।

10.5 भाव-पल्लवन साक्षात्कार और कौशल

पल्लवन

पल्लवन का सीधा और स्पष्ट अर्थ है -विस्तार करना या बढ़ना। यह संक्षेपण का विपरीत होता है।

पल्लवन विचारों का एक ऐसा क्रमबद्ध पुनर्प्रस्तुतीकरण है, जिसमें उदाहरण द्वारा बात को स्पष्ट करना होता है। कतिपय भावों, तथ्यों, विचारों और रचना-संकेतों का स्पष्टीकरण ही पल्लवन है, जिसमें आरंभ से लेकर अंत तक मूलभाव, विचार या मंतव्य की रक्षा की जाती है। पल्लवन लेखन-कला का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। किसी भावपूर्ण वाक्य, कथन, वाक्यांश, लोकोक्ति, दार्शनिक विचार, उक्ति, मुहावरे तथा पद्यात्मक सूक्ति को समझाकर लिखना 'पल्लवन' कहलाता है। पल्लवन एक कला है, जिसके लिए सतत अभ्यास की आवश्यकता होती है। पल्लवन के लिए दिए गए मूलभाव का विचार, भाव या सूक्ति के अर्थ को विस्तृत करते हुए एक निबंध-सा लिखा जा सकता है, किन्तु यह जान लेना आवश्यक है कि पल्लवन निबंध नहीं है। निबंध में व्याख्या एवं भाव या विचार के पक्ष-विपक्ष के तर्क और प्रमाण प्रस्तुत किए जाते हैं। निबंध लेखक स्वतंत्र है कि वह विषय का वर्णन विश्लेषण जैसा चाहे कर सकता है। लेकिन पल्लवन में लेखक को बँधे-बँधाए, संकुचित एवं सीमित क्षेत्र में ही रहना पड़ता है। पल्लवन में मूल भाव या विचार की व्याख्या की जाती है, किन्तु यह जान लेना भी आवश्यक है कि पल्लवन व्याख्या नहीं है। व्याख्या में प्रसंग, निर्देश, उदाहरण, तुलना और टिप्पणी करने की स्वतंत्रता होती है। पल्लवन में दिए गए भाव या विचार का विस्तार करना होता है, जो उसमें निहित है। पल्लवन के केंद्र में मूल भाव विचार के मंतव्य की रक्षा करनी होती है। अतः रचना सी स्वतंत्रता नहीं रहती।

इसी प्रकार पल्लवन करना भावार्थ कपना भी नहीं है। भावार्थ में भाव विस्तार की सीमा होती है। पल्लवन में भाव को स्पष्ट करना होता है। कार्य में यह आवश्यक नहीं कि मूलभाव को पल्लवित कर उसे एक अनुच्छेद में लिखा जाए। भावार्थ में केंद्रीय भाव को पकड़ने की और पल्लवन में केंद्रीय भाव को निरंतर स्पष्ट करने की चेष्टा निहित रहती है। पल्लवन में गौण भावों और विचारों को भी ग्रहण किया जाता है। पल्लवन में विवेचन और विश्लेषण की आवश्यकता

नोट

कम ही होती है। विवेचन और विश्लेषण से विस्तार लेने का भय रहता है। पल्लवन में विस्तार का भाव निहित है किन्तु यह विस्तार सीमातीत नहीं है। सामान्यतः यह माना जाता है कि पल्लवन के लिए दिए गए विषय पर पच्चीस-तीस पंक्तियों का एक अनुच्छेद लिखना उचित एवं पर्याप्त है।

पल्लवन की प्रक्रिया

सामान्य रूप से पल्लवन करने के कोई निश्चित नियम नहीं हैं। फिर भी पल्लवन करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान अवश्य रखना चाहिए -

1. मूल वाक्य, सूक्ति, लोकोक्ति आदि पर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए।
2. पल्लवन में मूलभाव या विचार की पृष्ठभूमि में जो भाव और विचार हो उन्हें भी स्पष्ट करना चाहिए।
3. मूल एवं गौण भावों-विचारों को सोच-समझकर क्रमशः अनुच्छेद में लिखा जाना चाहिए तथा ध्यान रखना चाहिए कि उक्ति या विषय का कोई अंश या भाव छूटे नहीं; और न ही पुनरावृत्ति हो।
4. विषय का विकास धीरे-धीरे और स्वाभाविक रूप में करना चाहिए। वाक्य भी एक दूसरे से सहज रूपेण संबद्ध होने चाहिए।
5. पल्लवन में उदाहरण, दृष्टांत सम्मिलित किए जा सकते हैं।
6. भाषा तथा अभिव्यक्ति स्पष्ट, मौलिक एवं सरल होनी चाहिए।
7. पल्लवन अन्य पुरुष में ही होना चाहिए।
8. व्यास शैली पल्लवन का मूलाधार है। अतः इस शैली के लेखन का अभ्यास करना चाहिए।
9. पल्लवन में पूरी रचना या अनुच्छेद एक संपूर्ण रचना-प्रोक्ति अर्थात् वाक्यों की व्यवस्थित कड़ी के रूप में उभरकर आनी चाहिए अर्थात् वाक्य-विन्यास में दिखराव नहीं होना चाहिए। वाक्य-विन्यास, सुगठित पल्लवन का प्राण है।

पल्लवन मुख्यतः एक सक्षिप्त रचना है, जो प्रायः एक अनुच्छेद में लिखी होती है। इससे लेखक की वैचारिक क्षमता, विषय पर एकाग्रता और चिंतन, अभिव्यक्ति सामर्थ्य तथा भाषा-शैली पर अधिकार का पता चलता है।

साक्षात्कार प्रयोजन और कौशल

हिंदी गद्य साहित्य की अन्य विधाओं के साथ-साथ साक्षात्कार विधा का भी विकास हुआ। साक्षात्कार में कला, साहित्य, राजनीति, दर्शन, आध्यात्म, विज्ञान आदि किसी भी क्षेत्र की महान और मान्य विभूतियों से मिलकर किन्हीं प्रश्नों के संदर्भ में उनके विचार या दृष्टिकोण जानने और उन्हें उसी की शैली, भाषा और भंगिमा में व्यक्त करने की चेष्टा की जाती है।

साक्षात्कार की परिभाषा-

साक्षात्कार क्या है ? इसके जवाब में 'साक्षात्कार' दो शब्दों से मिलकर बना है साक्षात्+कार, 'साक्षात्' का अर्थ होता है 'प्रत्यक्ष' और 'कार' का अर्थ है 'किया हुआ'। इस प्रकार साक्षात्कार- "ज्ञान, विज्ञान, कला एवं दर्शन के क्षेत्र में ख्यातिलब्ध व्यक्ति से लिया गया तद्विषयक विभिन्न प्रकार की आवश्यक जिज्ञासाओं का समाधान है।" इसका तात्पर्य है कि "समय, समाज, देशकाल और परिस्थिति के अनुरूप किसी विषय-विशेष से जुड़े हुए प्रश्नों पर अधिकारी व्यक्ति से की गई चर्चा।"

साक्षात्कार छोटे और बड़े के बीच ही अधिक फबता है। छोटे के मन में विद्यमान श्रद्धाभाव बड़े को सब कुछ बता देने की भावना से भावित होता है। दो भिन्न क्षेत्रों की समशील विभूतियों के साक्षात्कार भी महत्वपूर्ण होते हैं।

प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल के अनुसार साक्षात्कार में निम्नलिखित बातें होनी चाहिए-

1. विषय की स्पष्टता।
2. भाषा की सहजता।
3. कथ्य की स्पष्टता।
4. शैलीगत रोचकता।
5. विषयगत पूर्णता।
6. सोद्देश्यता।
7. विषय में निहित संदेश की स्पष्टता।
8. विषयगत सामाजिक उपयोगिता।
9. ज्ञानात्मक कौशल की अभिव्यक्ति।
10. संवादात्मकता।
11. कथनगत तारतम्यता।

साक्षात्कार के प्रकार

प्रो. त्रिभुवननाथ के अनुसार विषय की दृष्टि से साक्षात्कार के निम्नलिखित प्रकार हैं -

1. साहित्यिक साक्षात्कार
2. राजनीतिक साक्षात्कार
3. ऐतिहासिक साक्षात्कार
4. वैज्ञानिक साक्षात्कार
5. सामाजिक साक्षात्कार
6. आध्यात्मिक साक्षात्कार
7. समसामयिक समस्याओं पर आधारित साक्षात्कार

नोट

साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति की गुणगत विशेषताएँ-

जिस व्यक्ति से साक्षात्कार लिया जाए उसमें निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिए

1. विषय का अधिकारी विद्वान हो।
2. विषय अथवा उसकी परिधि में आनेवाले क्षेत्र में प्रतिष्ठित हो।
3. विषयगत क्षेत्र में उसके महत्वपूर्ण प्रदेय अथवा उपलब्धियों हों।
4. विषयगत क्षेत्र में साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति का शैक्षणिक योगदान हो।
5. साक्षात्कार देनेवाले व्यक्ति का बहुश्रुत एवं बहुपठित होना।
6. विषय की दृष्टि से साक्षात्कार देनेवाले का समन्वयकारी दृष्टिकोण होना।

साक्षात्कार की तकनीकी

साक्षात्कार द्वारा विज्ञान और अनुसंधान की जीवनोपयोगी सफलताओं को विश्वविद्यालयों और प्रयोगशालाओं के सीमित क्षेत्र से निकालकर एक विशाल और जनसुलभ रूप दिया जाता है। इस तरह समाज का हित भी होता है और वैज्ञानिकों को सम्मान और ख्याति भी प्राप्त होती है। प्रश्नकर्ता तकनीकी विषयों से भी ऐसी जनोपयोगी जानकारी निकाल लेते हैं।

साक्षात्कार, वैसे तो बड़ी सीधी-सी बात दिखायी देती है, लेकिन वास्तव में यह काम इतना आसान नहीं होता। प्रश्नकर्ता को कई विषयताओं से बच कर निकलना होता है इसलिए उनमें सहिष्णुता एवं व्यवहारपटुता अधिक होनी चाहिए। समाचार-संकलन में सफलता प्राप्त करने के लिए संवाददाता में मिलनसारिता, हाजिरजवाबी, क्षिप्रकारिता और कल्पना शक्ति के विशेष गुण होने चाहिए। प्रश्नकर्ता को धैर्यवान एवं व्यवहारकुशल होना चाहिए।

साक्षात्कार, वार्ता को सुरुचिपूर्ण और प्रभावपूर्ण बना सकते हैं। साक्षात्कार के आरंभ में ही विशिष्ट व्यक्ति को अपना परिचय एवं प्रयोजन बताना शिष्टाचार की माँग तो है ही, इससे साक्षात्कार में भी आसानी होती है। साक्षात्कार लिखना भी एक तरह से साहित्य का निर्माण करना होता है। साक्षात्कार लेने व देने वाले के परस्पर सहयोग और सम्मान से ही साक्षात्कार सफल होता है। भेंटवार्ता द्वारा दी गई जानकारी ठीक-ठाक होनी चाहिए। किसी घटना की पृष्ठभूमि में साक्षात्कार आयोजित हो तो संदर्भ के रूप में उसका सही-सही उल्लेख करें। परंपरागत तरीके तो सर्वमान्य हैं लेकिन तकनीक पर आधारित साक्षात्कार नियतकालिक पत्रिकाओं में भी स्थान पाता है। इसलिए पत्रकारिता की इस विधा का प्रयोग इनके लिए भी किया जाता है।

गतिविधि 10.1

इस साक्षात्कारों से आपको लेखन के किसी विशेष कौशल के बारे में नई जानकारी मिली है? यदि हाँ, तो उसे अपने लेखन में कैसे लागू करेंगे?

.....

.....

.....

.....

☑ अपनी प्रगति जांचे 10.1

1. गिरिराज किशोर के अनुसार बा गांधी के जीवन में किस प्रकार सहायक रही?
.....
.....
2. बा और गांधी के संबंध को लेखक ने किस दृष्टिकोण से देखा है?
.....
.....
3. साक्षात्कार के शीर्षक "यदि बा न होती..." का क्या संकेत है?
.....
.....
4. सार-लेखन करते समय किन बातों का ध्यान रखना चाहिए?
.....
.....
5. भाव-पल्लवन क्या होता है?
.....
.....
6. सार-लेखन और भाव-पल्लवन में क्या मुख्य अंतर है?
.....
.....
7. एक प्रभावी साक्षात्कार के लिए किन तीन प्रमुख गुणों की आवश्यकता होती है?
.....
.....
8. साक्षात्कार से पहले साक्षात्कारकर्ता को किस प्रकार की तैयारी करनी चाहिए?
.....
.....
9. साक्षात्कार को संवादमूलक क्यों कहा जाता है?
.....
.....

10.6 सारांश

यह साक्षात्कार न केवल महात्मा गांधी के जीवन के गहन विश्लेषण का प्रयास है, बल्कि लेखक गिरिराज किशोर की लेखकीय दृष्टि, भावनात्मक गहराई और संवाद के माध्यम से विचारों के संप्रेषण का सशक्त उदाहरण भी है। गिरिराज किशोर गांधी जी को एक ऐतिहासिक 'मिथक' न बनाकर, उन्हें एक संवेदनशील, प्रयोगशील और आत्मसंघर्षरत व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

लेखक 'पहला गिरमिटिया' के सृजन की प्रक्रिया, शोध-यात्राएँ, रचनात्मक कल्पना और ऐतिहासिक तथ्यों की सटीकता को लेखन-कौशल और भाव-पल्लवन के साथ साझा करते योग्यता संवर्धन

नोट

हैं। वे बताते हैं कि गांधी के चरित्र की गहराई को केवल जीवनी के माध्यम से नहीं, बल्कि उपन्यासात्मक शैली में संवेदना और कल्पना के सहारे ही व्यापक रूप से संप्रेषित किया जा सकता था।

इस संवाद में गांधी और कस्तूरबा के रिश्ते, पारिवारिक जीवन में उनकी भूमिका, नैतिक कठोरता, ऐतिहासिक घटनाओं की पुनर्व्याख्या (जैसे भगत सिंह प्रसंग), और गांधी की वैचारिक स्थिरता जैसे विषयों पर भावपूर्ण और तार्किक विचार साझा किए गए हैं।

साक्षात्कार लेखन, संवाद की शक्ति और भावनाओं के प्रभावी संप्रेषण का उदाहरण प्रस्तुत करता है, जो पाठक को न केवल गांधी के जीवन से जोड़ता है, बल्कि लेखकीय दृष्टिकोण और साक्षात्कार कला की सूक्ष्मताओं से भी परिचित कराता है।

10.7 शब्दावली

कठिन शब्द	अर्थ
गिरमिटिया	अनुबंध पर विदेश भेजे गए मजदूर
जीवनीपरक	जीवन पर आधारित
विश्लेषणात्मक	गहराई से जाँच या विवेचन करने वाला
संवेदना	भावना, अनुभूति
फ्लैश बैक	अतीत की घटना का चित्रण
भाव-पल्लवन	भावों का विस्तार
संप्रेषण	पहुँचाना, प्रसारित करना
मिथ	मिथक, लोकविश्वास या किंवदंती
डिक्टेटरशिप	तानाशाही
निःसंग	बिना किसी लगाव या पक्षपात के
निर्मोही	मोह-रहित, बिना आसक्ति वाला
स्वनिर्धारित	स्वयं तय किया गया
मूल्य प्रतिबद्धता	सिद्धांतों के प्रति निष्ठा
तदाकार	पूरी तरह एकाकार हो जाना
आत्मनिग्रह	स्वयं पर नियंत्रण
संवाद	बातचीत, वार्ता
साक्षात्कार	प्रश्नोत्तर के माध्यम से विचार-विनिमय
कौशल	योग्यता, दक्षता

10.8 अपनी प्रगति जांचे – संभावित उत्तर

1. बा ने गांधी के जीवन में संयम, सहनशीलता और नैतिकता जैसे गुणों को विकसित करने में मदद की। वे गांधी के जीवन की स्थिर शक्ति थीं।
2. लेखक ने इसे एक आदर्श दांपत्य संबंध के रूप में देखा जिसमें बा ने पृष्ठभूमि में रहते हुए गांधी को महानता की ओर प्रेरित किया।
3. इसका संकेत है कि गांधी की ऊँचाई और सफलता में बा का मौन किंतु अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान था।
4. सार-लेखन में मुख्य विचारों को संक्षेप में प्रस्तुत करना चाहिए, अनावश्यक विवरण हटाना चाहिए और भाषा स्पष्ट होनी चाहिए।
5. भाव-पल्लवन किसी विचार या भाव को विस्तारपूर्वक और रचनात्मक रूप में प्रस्तुत करना होता है, जिससे उसकी गहराई स्पष्ट हो सके।
6. सार-लेखन संक्षिप्तता पर आधारित होता है, जबकि भाव-पल्लवन विस्तार और भावनात्मक अभिव्यक्ति पर केंद्रित होता है।
7. सजग सुनना, विनम्रता बनाए रखना और प्रश्नों की स्पष्टता - ये तीन प्रमुख गुण हैं।
8. उसे विषय की पूरी जानकारी रखनी चाहिए ताकि वह सारगर्भित और उपयुक्त प्रश्न पूछ सके।
9. क्योंकि साक्षात्कार में केवल उत्तर नहीं बल्कि भावनाओं, विचारों और दृष्टिकोणों का आदान-प्रदान भी होता है।

10.9 सहायक पाठ्य सामग्री - OER

क्र. सं.	विषय	URL	QR कोड
1	मुक्त शैक्षिक संसाधन (ओईआर) -1	http://books.aisectonline.com/User/UnitUrls?unitId=16	

10.10 संदर्भ

1. पहला गिरमिटिया - गिरिराज किशोर
2. गांधी - एक जीवनी - डी.जी. टेण्डुलकर / लुई फिशर
3. हिंद स्वराज - महात्मा गांधी
4. बा और बापू - तारा गांधी भट्टाचार्य
5. दी फर्स्ट फेस - प्यारेलाल

नोट

6. A Good Boatman – राजमोहन गांधी
7. साक्षात्कार विधा और शिल्प - डॉ. रामजी तिवारी
8. संवाद, संप्रेषण और साहित्य - डॉ. हरिशंकर परसाई / डॉ. नामवर सिंह

10.11 अभ्यास

Part-1

A. बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ)

1. गिरिराज किशोर के अनुसार बा का गांधी के जीवन में योगदान क्या था?
 A) धार्मिक ज्ञान देना
 B) राजनीतिक सलाह देना
 C) नैतिक और पारिवारिक संतुलन बनाना
 D) व्यापार में सहयोग देना
2. साक्षात्कार के अनुसार बा ने गांधी को किन गुणों की ओर उन्मुख किया?
 A) आक्रोश और विद्रोह
 B) सत्य और सहनशीलता
 C) शक्ति और संघर्ष
 D) राजनीति और नेतृत्व
3. सार लेखन में सबसे ज़रूरी क्या होता है?
 A) भाषा की सजावट
 B) मूल बातों को संक्षेप में रखना
 C) उद्धरण देना
 D) विवरण विस्तार देना
4. भाव-पल्लवन का अर्थ है –
 A) समाचार लेखन
 B) कविता रचना
 C) विचारों का विस्तार और भावनाओं की व्याख्या
 D) तर्क देना
5. एक अच्छा साक्षात्कार लेने के लिए सबसे आवश्यक है –
 A) उच्च आवाज़ में बोलना
 B) प्रश्न पहले से याद कर लेना
 C) सजगता, सुनने की कला और विनम्रता
 D) लंबा भाषण देना

स्पष्टीकरण सहित उत्तर -

1. C) नैतिक और पारिवारिक संतुलन बनाना – गिरिराज किशोर ने स्पष्ट किया कि बा गांधीजी के जीवन में नैतिक मार्गदर्शन और घरेलू संतुलन का आधार थीं, जिन्होंने गांधी को सहिष्णुता, सेवा और समर्पण का पाठ पढ़ाया।

2. **B) सत्य और सहनशीलता** – बा ने गांधीजी के जीवन में त्याग, सहनशीलता और सत्य का व्यवहारिक अर्थ समझाया, जिससे गांधी के नैतिक जीवन की नींव पड़ी।
3. **B) मूल बातों को संक्षेप में रखना** – सार लेखन का उद्देश्य विषय की मूल बातों को संक्षिप्त और सुसंगठित रूप में प्रस्तुत करना है, जिसमें अनावश्यक विवरण नहीं होते।
4. **C) विचारों का विस्तार और भावनाओं की व्याख्या** – भाव-पल्लवन किसी मूल विचार से उत्पन्न नई समझ या भावात्मक विश्लेषण की प्रक्रिया है, जो रचनात्मकता को विकसित करती है।
5. **C) सजगता, सुनने की कला और विनम्रता** – एक साक्षात्कारकर्ता को न केवल प्रश्न पूछने, बल्कि उत्तर को सुनने, समझने और आगे संवाद को दिशा देने की दक्षता होनी चाहिए।

B. लघु उत्तरीय प्रश्न (50-100 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. गिरिराज किशोर के अनुसार बा ने गांधी के व्यक्तित्व को किस प्रकार आकार दिया?
2. सार-लेखन में किन बातों को हटाकर विषय की संक्षिप्तता को बनाए रखा जाता है?
3. भाव-पल्लवन करते समय लेखक क्या करता है और उसका उद्देश्य क्या होता है?
4. एक अच्छा साक्षात्कार केवल प्रश्नोत्तर नहीं होता – यह कथन किस आधार पर सत्य है?
5. एक प्रभावी साक्षात्कारकर्ता को विषय का पूर्ण ज्ञान क्यों होना चाहिए?

Part – 2

C. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (200 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. 'यदि बा न होती...' साक्षात्कार के आधार पर गांधी और बा के आपसी संबंधों को स्पष्ट कीजिए। बा किस प्रकार गांधीजी के विचारों, व्यवहार और निजी जीवन को दिशा देने वाली शक्ति बनीं?
2. सार लेखन की प्रक्रिया क्या होती है? इसमें कौन-कौन से गुण होने चाहिए, जिससे छात्र किसी पाठ या घटना का सार प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत कर सके?

D. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (300 शब्दों में उत्तर दीजिए)

1. भाव-पल्लवन की प्रक्रिया क्या है? यह भाषा विकास में किस प्रकार सहायक होती है और छात्रों में रचनात्मकता एवं भावात्मक अभिव्यक्ति को किस हद तक प्रोत्साहित करती है?
2. साक्षात्कार लेने के लिए किन व्यवहारिक और भाषाई कौशलों की आवश्यकता होती है? 'बा और गांधी' साक्षात्कार को संदर्भ बनाकर एक प्रभावी साक्षात्कारकर्ता के गुणों पर प्रकाश डालिए।
3. साक्षात्कार और संवाद में क्या मूल अंतर होता है? किन परिस्थितियों में साक्षात्कार संवाद से अधिक प्रभावशाली सिद्ध होता है – उदाहरण सहित समझाइए।
4. 'सार-लेखन', 'भाव-पल्लवन' और 'साक्षात्कार' – इन तीनों भाषिक विधाओं के माध्यम से भाषा की अभिव्यक्ति, स्पष्टता और संप्रेषण क्षमता किस प्रकार विकसित होती है? एक समेकित मूल्यांकन प्रस्तुत कीजिए।



आईसेक्ट विश्वविद्यालय समूह

एस. एल. एम. प्रतिक्रिया प्रपत्र (फीडबैक फॉर्म)

कार्यक्रम : _____
पाठ्यक्रम : _____
ब्लॉक : _____
इकाई : _____

प्रिय छात्र,

इस खंड की इकाइयों का अध्ययन करते समय, आपको पाठ के कुछ हिस्सों को समझने में कठिनाई हो सकती है। हम पाठ्यक्रम को बेहतर बनाने के लिए आपकी कठिनाइयों और सुझावों को जानना चाहते हैं। इसलिए, हम आपसे अनुरोध करते हैं कि आप इस ब्लॉक से संबंधित निम्नलिखित प्रश्नावली को भरकर हमें भेजें। यदि आपको दिया गया स्थान अपर्याप्त लगता है, तो कृपया एक अलग शीट का उपयोग करें।

कृपया मेल करें aisectcontent@aisect.org / ऑनलाइन फॉर्म भरने के लिए QR को स्कैन करें :

प्रश्नावली

- नाम : _____
- नामांकन क्र :

--	--	--	--	--	--	--	--	--	--	--
- इकाइयों का अध्ययन करने के लिये आपको कितने घंटों की आवश्यकता थी? :

--
- कृपया इस ब्लॉक को पढ़ने के आधार पर निम्नलिखित मदों पर अपनी प्रतिक्रिया दें:

अवयव	उत्कृष्ट	बहुत अच्छा	अच्छा	खराब	विशिष्ट उदाहरण दें (यदि खराब हो)
प्रस्तुति गुणवत्ता					
भाषा और शैली					
रेखाकन					
प्रयुक्त (आरेख, तालिकाएं, आदि)					
संकल्पनात्मक स्पष्टता					
अपनी प्रगति जाँचें प्रश्न					
सुझाए गए पठन – OER					

5. अन्य सुझाव :
